गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

January-Februray 2025

Volume 13, Issue 1-2

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni

Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 13 | अंक : 1–2(2) | जनवरी–फरवरी : 2025 | आईएसएसएन : 2321–8037

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि.,
श्रीगंगानगर–335001 (राज.)

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स
एंड कम्युनिकेशन,
सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर
गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर,
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया,
साहिबजादा अजित सिंह नगर,
मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज,** पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा।
सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834
ISSN : 2321-8037
Gina Shodh SANGAM
Peer Reviewed & Refereed Research Journal
International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)
Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसे: प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07–07
2.	तुलसी साहित्य में मौलिक शिक्षा	डॉ. शर्मिला यादव	08–11
3.	भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020	डॉ. जोगेश	12–18
4.	रघुवीर सहाय के काव्य–सर्जना में जीवन संघ□	डॉ. शर्मिला यादव	19–22
5.	दलित विमर्श : आंबेडकरवाद	Prof. Shaikh Anisa Mahebub	23-31
6.	Changing Fact of Family: A Global Perspective	Dr. Harpreet Kaur	32-35
7.	नासिरा शर्मा की कहानियों में अभिव्यक्त नारी जीवन	Khan Reshma Bano	36-38
8.	Revamping Vocational Educational Curriculum Fulfilling 21st Century Demand of Automotive Industry : A Case Study	Dr. Anil Kumar Dr. Sunil Kumar Mr. Sushil Kumar	39-44
9.	सुधा अरोड़ा की कहानियों में अभिव्यक्त महानगरीय जीवन	Bhumika Kapoor	45-47
10.	सोशल मीडिया का हमारे जीवन पर प्रभाव	नीलम पाटीदार	48–52
11.	बिकास भट्टाचार्जी की आकृतियों का सौन्दर्यात्मक चित्रण	पंकज कुमार, डॉ. वन्दना तोमर	53–57
12.	दक्षिणी राजस्थान के जनजाति क्षेत्र के जन समुदाय पर वृक्षों एवं पौधों के सापेक्ष ज्योतिष एवं वास्तु के परस्पर प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन	महेंद्र सेन, डॉ अलकनंदा शर्मा	58–62
13.	भिवानी जनपद के साहित्यकार पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्यिक व सामाजिक योगदान	सरला चहल, डॉ. राजेंद्र सिंह	63–66
14.	वैश्विक एकता : हिन्दू धर्म के विशेष सन्दर्भ में	डॉ. दीपक कुमार	67–72
15.	शारीरिक शिक्षा और नेतृत्त्व कौशल	Chandra Shekhar Bharti	73-77
16.	Environmental Impact of Bombings and Infrastructure Destruction – A Legal Analysis Russia–Ukraine War	Dr. Sureshwer Tiwari	78-86
17.	21वीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य : नारी विमर्श के विविध आयाम	डॉ. प्रियंका कुमारी	87–92
18.	डॉ. हरिवंशराय बच्चन की रचनाओं का मध्यवर्गीय समाज पर प्रभाव	सविता रै	93–101
19.	धनबाद जिले की महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन में वाणिज्यिक वृत्तियों की भूमिका : राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 संदर्भित	विवेक जायसवाल, डॉ. दिनेश प्रताप सिंह	102–108
20.	झारखण्ड के महिला स्वयं–सहायता समूहों की संस्थानिक कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन	कुलदीप महतो, डॉ. उत्तम कुमार त्रिगुनाइत	109–115
21.	उत्तराखण्ड की अनुसूचित जाति के विकास एवं उत्थान में संविधान की भूमिका	कुसुम, डॉ. मनोज कुमार	116–124

22.	औद्योगीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव : हिंदी उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि	प्रिंस कुमार, डॉ. पूजा गुप्ता	125–131
23.	उदय प्रकाश के कथा साहित्य में पारिवारिक संघर्ष	आलडो डोमनिक मेन्डस, प्रो. डॉ. संजय ए मादार	132–134
24.	संख्या और अद्वैत वेदान्त में वर्णित मोक्ष	डॉ. वर्षा रानी	135–139
25.	भीष्म साहनी का रचना कर्म	डॉ. रवि देव	140–146
26.	**Evaluating the Effectiveness of Social Welfare Programs in Alleviating Poverty**	**Dr. Prashant Kumar**	**147-153**
27.	शहरीकरण से समाज के स्वास्थ्य पर प्रभाव	डॉ. बिन्दी कुमारी	154–157
28.	ग्रामीण विकास में सरकारी योजनाओं से सामाजिक एवं आर्थिक विकास में महिलाएं : एक विश्लेषण	सुहासनी कुमारी	158–163
29.	नालंदा जिला ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों में कुपोषण का कारण एवं माताओं में पूरक आहार के आभाव का एक अध्ययन	डॉ. पूर्णिमा कुमारी	164–168
30.	भारत का आईना बिहार : एक ऐतिहासिक अध्ययन	डॉ. विनय कुमार अम्बेडकर	169–174
31.	**Exploring the Information-Seeking Behaviour of Health Science Students : A Case Study of Jabalpur Institute of Health Sciences**	**Swapnil Sharma, Dr. Mohmmad Nasir**	**175-192**
32.	शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि, प्रासंगिक अध्ययन एवं अनुसंधान की दिशा : एक समीक्षात्मक दृष्टिकोण	पूजा खरे, डॉ मोहम्मद नासिर	193–199
33.	**The Kinetics of Gaining Insight into Mechanisms : A Review of Theoretical and Experimental Approaches**	**AMARDEEP KUMAR**	**200-205**
34.	**Evolving Jurisprudence of Environmental Justice in India : A Critical Analysis of Judicial Activism and Policy Implementation**	**HIMANSHU SHRIVASTAVA**	**206-212**
35.	भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका : चुनौतियाँ और संभावनाएँ	डॉ. दिनेश कुमार वर्मा	213–221
36.	**NEGOTIATING NATION AND SELF : REIMAGINING IDENTITY IN THE NOVELS OF ARUNDHATI ROY AND AMITAV GHOSH**	**Dr. Priya Sudhakar Manapure**	**222-229**
37.	**Design and Development of a Water Quality Monitoring System for Surya Dam Downstream in Palghar District**	**Tanaji Vishnu Kamble, Dr. Anil Kumar**	**230-233**
38.	कोडरमा जिले में महिलाओं की स्थिति और उनके सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए किए गए उपाय	कविता कुमारी, डॉ. आलोक कुमार	234-243

सम्पादक की कलम से..... शोध संगम पत्रिका के जनवरी–फरवरी 2025 अंक में आपका स्वागत है।

प्रिय पाठकों,

हमारे इस विशेषांक में, हमने समकालीन शोध, सामाजिक मुद्दों, और सांस्कृतिक विमर्श पर केंद्रित लेख प्रस्तुत किए हैं। इस अंक में शामिल प्रमुख विषयों पर एक संक्षिप्त दृष्टि :–

1. **समकालीन शोध की दिशा :–**

वर्तमान में, शोध की दिशा तेजी से बदल रही है। नई तकनीकों और विधियों के साथ, शोधकर्ता अपने क्षेत्रों में नवीनतम ज्ञान की खोज में जुटे हैं। इस खंड में, हम विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे महत्वपूर्ण शोध कार्यों की समीक्षा प्रस्तुत करते हैं।

2. **सामाजिक मुद्दों पर विमर्श :–**

समाज में व्याप्त असमानताएँ, पर्यावरणीय संकट, और मानवाधिकार जैसे मुद्दे आज भी प्रासंगिक हैं। इस खंड में, हमने इन विषयों पर विशेषज्ञों के विचार और समाधान प्रस्तुत किए हैं।

3. **सांस्कृतिक विमर्श :–**

हमारी सांस्कृतिक धरोहर और उसकी वर्तमान स्थिति पर विचार करना आवश्यक है। इस खंड में, हमने विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं, उनकी चुनौतियों, और संरक्षण के उपायों पर लेख प्रस्तुत किए हैं।

4. **विज्ञान और प्रौद्योगिकी :–**

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रही प्रगति समाज के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित कर रही है। इस खंड में, हमने नवीनतम वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीकी नवाचार, और उनके सामाजिक प्रभावों पर चर्चा की है।

नई कार्य योजनाएँ :–

हमारी आगामी कार्य योजनाओं में निम्नलिखित प्रमुख पहलें शामिल हैं :–

- **विशेषांक प्रकाशन** – हम विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों पर विशेषांक प्रकाशित करने की योजना बना रहे हैं, ताकि इन क्षेत्रों में गहन विमर्श को बढ़ावा मिल सके।
- **ऑनलाइन मंच का विस्तार** – हम अपने डिजिटल प्लेटफॉर्म को और अधिक इंटरैक्टिव और उपयोगकर्ता–मित्रवत बनाने की दिशा में काम कर रहे हैं, जिससे पाठकों और लेखकों के बीच संवाद को सुदृढ़ किया जा सके।
- **शोध कार्यशालाएँ** – हम शोधकर्ताओं और छात्रों के लिए कार्यशालाओं और सेमिनारों का आयोजन करेंगे, ताकि नवीनतम शोध विधियों और तकनीकों पर चर्चा की जा सके।

हम आशा करते हैं कि यह अंक आपके ज्ञानवर्धन में सहायक होगा और समकालीन मुद्दों पर आपकी समझ को विस्तृत करेगा। आपके सुझाव और प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए मूल्यवान हैं। कृपया हमें अपनी राय से अवगत कराएं।

–सम्पादक

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 8–11

तुलसी साहित्य में मौलिक शिक्षा

डॉ. शर्मिला यादव
सहायक प्राध्यापक, आई. बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पानीपत।

बहु आयामी प्रतिभा के स्वामी कारयित्री एवं भावयित्री प्रतिभा के धनी महात्मा तुलसीदास जी के काव्य में राम के अवतरण अथवा प्रस्तुतीकरण का उद्देश्य मानव समाज को ज्ञान देना अथवा शिक्षित करना भी है। यह ज्ञान अथवा शिक्षा एक दृष्टि से मानव धर्म अथवा मानवता का ककहरा है।

मानस शब्द सागर, तुलसी शब्द सागर, रामायण कोश आदि शब्द कोशों के अनुसार तुलसी के काव्य में शिक्षा धातु से निर्मित तद्भव शब्द लगभग 150 बार प्रयुक्त हुए हैं। (स), विद्या, सीख, सिखयन, ज्ञान (ग्यान), विज्ञान (विग्यान) कला एवं उनके पर्याय सहित यह शब्द सम्पूर्ण तुलसी काव्य में लगभग 1500 बार ओत–प्रोत है।

धार्मिक एवं आध्यात्मिक काव्य में शिक्षा का चरम उद्देश्य होता है–पाशविकता से निवृत्त होकर मानवता को प्राप्त करना। तुलसी काव्य में निर्गुण ब्रह्म के सगुण अवतार मानव राम के जिन मानवीय गुणों पर प्रकाश पड़ता है उनसे यह स्पष्ट है कि मानवता के प्रत्येक अंग की शिक्षा राम के चरित्र में परिव्याप्त है।

एक विद्यार्थी के रूप में तुलसी के राजपुत्र राम ऐश्वर्यमय वातावरण से दूर मुनि वशिष्ठ में सहज, सरल व कष्टमय जीवनचर्या से विद्यार्जन करते हैं।

विद्या से विनय की प्राप्ति होती है – विद्या ददाति विनयं। एवं विनय से ही विद्या शोभित होती है। विनय को चरित्र में उतारना विद्यार्जन का प्रमुख लक्ष्य भी होता है – 'विनयः शिक्षाप्रणभ्योः।' अर्थात् एक दृष्टि से विनय विद्या अथवा शिक्षा की पूरक भी है। रामचरित में विनय अनुशासन की पर्याय है। अनुशासन का पाठ राम के विद्यार्थी जीवन की प्रमुख उपलब्धि है। आन्तरिक एवं ब्राह्म दोनों प्रकार का अनुशासन राम–चरित्र में यत्र–तत्र – सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। साधारण सा कार्य हो या बड़ा से बड़ा कार्य राम अनुशासन का पालन करते हैं :–

"परम विनीत सकुचि मुसुंकाई। बोले गुर अनुशासन पाई।।
नाथ लखन पुरू देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं। ।
जौ राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाई तुरत लै आवौं। ।[1]

जनकराज के उद्यान से पुष्प एकत्रित करने से पूर्व वे माली से अनुमति लेना नहीं भूलते :–

"चहुँ दिसि चितइ पूंछि मालीगन। लगे लेन दल फूल मुदित मन। "[2]

यहाँ तक कि विश्राम के लिए भी वे अपने संरक्षण विश्वामित्र की आज्ञा से अनुशासित हैं :–

करते हैं :–

"करि मुनि चरन सरोज प्रनामा। आयसु पाइ कीन्ह विश्रामा।[3]

अनुशासन का उल्लंघन हो जाने पर तुलसी के राम पश्चाताप करते है :–

"कौतुक देखि चले गुरू पाहीं। जानि विलंब त्रास मन माहीं।।"[4]

इतना ही नहीं वे अपनी अनुशासनहीनता अथवा गलती के लिए उचित प्रायश्चित करने से भी नहीं कतराते – परशुराम–लक्ष्मण संवाद में तो वे जनक की प्रतिज्ञा के अनुसार हुए धनुर्भंग पर भी स्वयं को अपराधी बनाकर विनयशीलता का महान् आदर्श प्रस्तुत करते हैं :–

"कहिए वेगि जगहि विधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौ उपाई।। " [5]

सुमंत के सम्मुख दशरथ के प्रति अनुज लक्ष्मण की कटु वाणी अनुशासन प्रिय राम को खलती है :–

"पुनि कछु लखन कही कटुबानी। प्रभु बरजे बड़ अनुचित जानी।।
सकुचि राम निज सपथ देवाई। लखन संदेसु कहिअ जनि जाई।।"[6]

मानव राम का विनयावत् रूप यत्र–तत्र–सर्वत्र एक प्रेरक आदर्श है। रावण वध के उपरान्त एवं वनवास की अवधि बीत जाने पर जब राम अयोध्या लौटते हैं तो कुलगुरु वशिष्ठ एवं सखाओं को विजय को श्रेय देते हुए उनका उचित आभार व्यक्त करते हैं :–

"गुरू वशि□ठ कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपा दनुज रन मारे।।
ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहुँ बेरे।।
मम हित लागि जनम इन हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पियारे।।[7]

यथा राजा तथा प्रजा जैसा राजा है वैसी ही उनकी प्रजा भी होनी चाहिए। राजा रामचंद्र स्वयं अनुशासन प्रिय है इस कारण प्रजा से भी उनकी यही अपेक्षा है :–

"नहि अनीति नहि कछु प्रभुताई। सुनहू करहु जो तुम्हहिं सुहाई।।
सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुशासन मानें जोई। ।
जो अनीति कछु भा□ौं भाई। तौ मोहि वरजहू भय बिसराई।।
बड़े भाग मानु□ा तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा।।[8]

गुरु शब्द की व्याख्या करते हुए स्कंद पुराण के गुरु गीता प्रकरण में कहा गया है कि 'गु' शब्द का अर्थ हैं– अंधकार और 'र' का अर्थ है – तेज।

अर्थात् अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करने वाला तेज रूपी ब्रह्म गुरु कहलाता है।

इसी प्रकार बौद्ध धर्म ग्रन्थ विशुद्धि पग्ग में कहा गया है कि 'जिस प्रकार जन्मांध व्यक्ति हाथ पकड़कर ले जाने वाले व्यक्ति के अभाव में कभी सही मार्ग से जाता है, कभी कुमार्ग से उसी प्रकार संसार में संसरण करते हुए अज्ञानी मनुष्य सद्गुरु के अभाव में कभी पुण्य करता है तो कभी पाप। हमारे द्वारा अर्धसत्य अथवा असत्य को ही पूर्ण सत्य स्वीकार कर लेने का मूल कारण है सद्गुरु अथवा श्रेष्ठ पथ प्रदर्शक का अभाव। गुरु शिष्य को जीवन जीने की कला सिखाता है, उनमें मनुष्योचित भावों का विकास करता है। उसे उपलब्ध साधन सामग्री व क्षमता योग्यता के उत्कृष्टतम सदुपयोग द्वारा महान अभिव्यंजना प्रस्तुत करने का कौशल सिखाता है। यही कौशल गुरुदीक्षा अथवा गुरुमंत्र का आधार है जो गुरु के गुरुत्व एवं शिष्य के शिष्यत्व की कसौटी है। महात्मा

तुलसी ने गुरु को नर रूप हरि कहा है एवं गुरु का मुख्य सान्निध्यालय अज्ञान रूपी अंधकार बताया है :–

"बदऊँ गुरू पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।
महामोह तम पुंज, जासु वचन रवि कर निकर।।
दलन मोह तम सो सप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू।
भूमि जीव संकुल रहे, गए सरद रितु पाई।।।
सद्गुर मिलें जाहि जिमि, संसय भ्रम समुदाई।।"[9]

शील, सदाचार, विनम्रता, विवेक, विनय आदि गुण मानव धर्म की शिक्षा के ही अंग हैं। मानस में किष्किन्धा कांड में वर्णित ऋतु वर्णन की उपमाओं के नैतिक मूल्यों के अर्जन की विशेष प्रेरणा सन्निहित है यथा :–

"जथा नवहिं बुध विद्या पाए।
साधक मन जस मिले विवेका।।
जिमि बुध तजहिं मोह मद नाना।
जिमि हरिजन हिय उपज न कामा।
ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।। " [10]

सेवक धर्म की शिक्षा के लिए लक्ष्मण का चरित्र सर्वाधिक प्रेरणाप्रद है जो एक ओर पुरुषार्थ का शंखनाद करते हैं दूसरी ओर सेवाव्रत की रक्षा में पूर्णतः सत्रद्य है :–

"सवेहि लखनु सीय रघुवीरहिं। जिमि अविवेकी पुरू□ा सरीरहि।। "[11]

अनुशासन के एकरस दर्शन के लिए पवन पुत्र–आंजनेय का चरित्र दृष्टव्य है। श्रीराम द्वारा आस्तिक लोक–सेवा की शिक्षा :–

"सो अनन्य जाकें, असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक, सचराचर-रूप स्वामि भगवतं।।[12]

का पालन पवनपुत्र जैसे चरित्र द्वारा ही संभव है। इसके अतिरिक्त मानस के प्रायः प्रत्येक पात्र के चरित्र द्वारा तुलसी ने शिक्षा का विधान किया है यथा :–

रावण के चरित्र से हमें यह शिक्षा मिलती है कि अन्याय, अत्याचार से अर्जित वैभव, प्रभुता के मद से उपजी मदांधता एवं असत्य का पोषक ज्ञान अन्ततः व्यक्ति व समाज को विनाश की ओर ले जाते हैं :–

"जगत विदित तुम्हारि प्रभुताई। सुत परिजन बल बरनि न जाई।।
राम विमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा।।"[13]

निष्कर्ष :-

सारांश रूप में हम यह कह सकते हैं कि तुलसी काव्य में शिक्षा को विशेष महत्व मिला है। एवं यह शिक्षा मूलतः मानव धर्म की शिक्षा है। इसे हम श्रेष्ठ मानवीय नैतिक मूल्यों की शिक्षा भी कह सकते हैं। रामचरितमानस महात्मा तुलसीदास की प्रतिनिधि काव्य है और यह मानवता की शिक्षा का विश्वको ा है।

संदर्भ :-

1. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 217

2. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 227
3. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 237
4. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 224
5. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 278
6. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 62
7. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 7
8. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 42
9. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 6–7
10. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 148
11. तुलसीदास कृत जानकी मंगल, पृष्ठ संख्या 14
12. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 3
13. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, पृष्ठ संख्या 103

ibcetbm2024@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 12–18

भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020

डॉ. जोगेश
सहायक प्राध्यापक, आई. बी. (पी. जी.) कॉलेज, पानीपत।

भाषा मानव व्यवहार की महत्त्वपूर्ण कड़ी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 भाषाई सुदृढ़ता, सुगमता, सहजता तथा सुलाभ्यता की स्वीकारोक्ति है। संस्कृत एवं संस्कृति के संरक्षण की ओर एक गंभीर पग लेते हुए यह नीति शिक्षार्थी को पारिवारिक धरातल से जोड़ कर उसे एक आदर्श नागरिक बनाने की पैरवी करती है।

भारत विविधताओं का देश है। भारतीय संस्कृति में बहुभाषिकता इसकी पहचान है। मातृभाषा इसका एक अभिन्न अंग है। जीवन में भाषा एक ऐसे पुल का काम करती है जो एक व्यक्ति को दूसरे के विचारों को समझने और ग्राह्यता के लिए सर्वथा उपयोगी मानी जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में भाषा शिक्षार्थी के सर्वांगीण विकास में एक अचूक माध्यम सिद्ध होती है। भाषा मानव व्यवहार में प्रासंगिकता के तत्व को एक सुदृढ़ता प्रदान करती है।

भाषा व्यवहार एवं संप्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम मानी जाती है। व्यक्ति अपनी बात को दूसरे तक पहुँचाने के लिए उसी भाषा का प्रयोग करता है जो भाषा सामने वाले को समझ में आ सकती है। आचार्य दंडी ने इसी को 'वाक्' कह कर संबोधित किया है। अर्थात् वह माध्यम है जिसके कारण कोई भी व्यक्ति अन्य व्यक्ति से बातचीत संपन्न करता है, अपनी बात को समझा पाता है। भाषा के माध्यम से समाज में व्यक्तिगत एवं सामाजिक संतुलन तथा सांस्कृतिक जागरूकता और अभिव्यक्ति का सोपान संपन्न होता है।

भाषा की उपादेयता को समझने के लिए प्राचीन विदेशी यात्रियों का उदाहरण मिलता है। विदेशी यात्री इस देश की भाषा को सीख कर ही यहाँ की संस्कृति, आचार–व्यवहार और गुणों को पहचान पाए और उन्होंने अपनी महान पुस्तकों एवं पर्यटन दस्तावेज़ों में इसका वर्णन भी किया। सम्राट अशोक के समय में आने वाले विदेशी यात्रियों ने सम्राट अशोक की प्रशासन संचालन, कार्य व्यवहार और प्रजा की भलाई के लिए किए गए कार्यों को अपनी भाषा में लेखबद्ध किया। यह इतिहास नहीं बन पाता यदि भाषा का अचूक अस्त्र हमारे पास नहीं होता।

स्वतंत्रता पूर्व शिक्षा नीतियाँ :–

भारत को जगद्गुरु की संज्ञा प्राप्त है। भारत गुरुकुल का देश माना जाता है। प्राचीन समय में हमारे यहां शिक्षा के लिए बच्चों को गुरुकुल ही भेजा जाता, गुरुकुल की यह प्रथा बच्चों में 25 वर्ष तक उनके सर्वांगीण विकास के लिए प्रयासरत रहती थी किंतु अंग्रेजी शासन की फलस्वरूप शिक्षा के इस क्षेत्र को चुनौतियों का सामना करना पड़ा और 'लॉर्ड मेकाले की शिक्षा नीति' के कारण भारत की प्राचीन गुरुकुल संस्कृति समाप्त हो गई। संसार की अधिकांश भाषाओं को जन्म देने वाली जन्मदात्री कही जाने वाली संस्कृत कहीं छुपा कर बैठ

गई और अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप अंग्रेजी भाषा शिक्षा का प्रमुख माध्यम निश्चित की गई। समय–समय पर विविध विचारकों, बुद्धिजीवियों तथा शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा नीतियों का निर्धारण किया जिससे शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षार्थी लाभ प्राप्त कर सके।

दलितों के उत्थान के लिए सर्वप्रथम ज्योतिबा फुले ने महाराष्ट्र में सन् 1848 में एक कन्या विद्यालय की स्थापना की।

वुड की शिक्षा नीति – 1853 में शिक्षा की प्रगति की जाँच हेतु एक समिति बनाई गई। वुड के अनुसार संस्कृत अरबी और फारसी का ज्ञान आवश्यक समझा गया।

भारतीय शिक्षा आयोग – 1882 में शिक्षा के क्षेत्र में आने वाली चुनौतियों विचार करने हेतु सर विलियम विल्सन हंटर की अध्यक्षता में 'भारतीय शिक्षा आयोग' की स्थापना की गई। इसमें अनुशंसा की गई की 'प्राथमिक शिक्षा पर भी ज़ोर' दिया जाना चाहिए और 'माध्यमिक स्तर पर भाषा अंग्रेजी' रहनी चाहिए।

लॉर्ड कर्जन के प्रयासों से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति हुई और 1902 में 'भारतीय वि वविद्यालय आयोग' नियुक्त किया गया।

गोपाल कृ□ण गोखले के प्रयास – 1911 में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को निशुल्क और अनिवार्य बनाने का प्रयास किया। अंग्रेज सरकार और उनके समर्थकों के विरोध के कारण वे इसमें सफल नहीं हो पाए।

1913 में ब्रिटिश सरकार ने शिक्षा नीति में अनेक परिवर्तनों की कल्पना की जिसमें हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्ड का संगठन।

1916 में मदन मोहन मालवीय ने काशी हिंदू वि वविद्यालय की स्थापना की।

बुनियादी शिक्षा का प्रस्ताव एवं क्रियान्वयन – 1937 में शिक्षा की एक नवीन योजना का मसौदा तैयार किया गया जो 1938 में बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसके अंतर्गत 7 से 11 वर्ष के बालक–बालिकाओं की शिक्षा अनिवार्य हो, शिक्षा मातृभाषा में हो, हिंदुस्तानी पढ़ाई जाए और इसके साथ–साथ चरखा कातना, कृषि और लकड़ी का काम शिक्षा के पाठ्यक्रम में कौशल विकास के रूप में सिखाया जाए।

सार्जेंट योजना – इस योजना के अंतर्गत– 6 से 14 वर्ष की अवस्था के बालक और बालिकाओं के लिए अनिवार्य शिक्षा, जूनियर बेसिक स्कूल, सीनियर बेसिक स्कूल, हाई स्कूल और व्यावसायिक हाई स्कूल की पढ़ाई 11 वर्ष की अवस्था से 17 वर्ष की अवस्था तक की जाए, इसके बाद वि वविद्यालय में प्रवेश हो, डिग्री पाठ्यक्रम 3 वर्ष का, इंटरमीडिएट कक्षा समाप्त कर दी जाए तथा 5 से कम अवस्था वालों के लिए नर्सरी स्कूल का प्रावधान किया गया जिसका माध्यम मातृभाषा ही हो।

गांधी जी ने बुनियादी शिक्षा के अंतर्गत शिल्प आधारित शिक्षा द्वारा बालकों का सर्वांगीण विकास तथा एक आत्मनिर्भर आदर्श नागरिक की भूमिका को स्वीकार किया और मैकाले ने इसमें सुझाव दिया कि अंग्रेजी भाषा सीखने से ही विकास संभव हो सकता है।

स्वतंत्रता के पश्चात विविध शिक्षा नीतियाँ :–

स्वतंत्रता के बाद, राधाकृ□णन आयोग – 1948 से 1949, माध्यमिक शिक्षा आयोग मुदालियर आयोग 1953, वि वविद्यालय अनुदान आयोग–1953, कोठारी शिक्षा आयोग–1964, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1968 एवं नवीन

शिक्षा नीति–1986 में समय–समय पर बदलाव होते रहे। वर्ष 1948 से 1949 में वि वविद्यालय के सुधार के लिए 'भारतीय वि वविद्यालय आयोग' की स्थापना की गई।

डॉ० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में वि वविद्यालय शिक्षा आयोग के गठन के साथ ही भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित करने का काम शुरू किया गया। 1952 में लक्ष्मण स्वामी मुरलीघर की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा 1964 में दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की सिफारिश के आधार पर 1968 में शिक्षा नीति का एक नया प्रस्ताव प्रकाशित किया गया।

कोठारी शिक्षा आयोग – वर्ष 1964 में कोठारी शिक्षा आयोग ने यह अनुशंसा की कि '6 वर्ष तक के बच्चों के उचित विकास के लिए समेकित बाल विकास सेवा योजना आरंभ की जानी चाहिए। शिक्षा को राज्य विषय से समवर्ती विषय में परिवर्तन करने के लिए संविधान में संशोधन करना आवश्यक माना गया।

'वर्ष 1986 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति' में सुझाव दिया गया जिसका उल्लेख भारतीय संविधान के चौथे भाग में नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत दिया गया है कि प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

वर्ष 1992 में 'आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा नीति' 1986 में संशोधन के लिए कुछ सुझाव दिए गए। इस आयोग ने शिक्षा के उद्देश्य, सामान्य विद्यालयी प्रणाली, परीक्षा सुधार, मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने पर बल दिया गया।

निर्धन वर्ग के बच्चों को प्रोत्साहित करने हेतु 15 अगस्त 1995 को केंद्रीय प्रायोजित स्कीम के अंतर्गत प्रारंभिक शिक्षा के लिए 'राष्ट्रीय पोषणिक सहायता कार्यक्रम' शुरू किया गया। इसके अंतर्गत खाली पेट आने वाले बच्चे को विद्यालय में भोजन प्रदान करना, 'मध्यान्ह भोजन' के नाम से पूरक पोषण के स्रोत और उनके स्वास्थ्य विकास के रूप में इस क्षेत्र में कार्य किया गया तथा समतावादी मूल्य के प्रसार में भी इससे सहायता प्राप्त हुई। इससे बच्चों में पोषण तथा शिक्षा के प्रति एक आकर्षण पैदा करना व भूख से भरपेट भोजन के माध्यम से शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त कर एक आदर्श नागरिक बनाने हेतु प्रोत्साहित करना ही एक महत्वपूर्ण लक्ष्य था।

रा□ट्रीय शिक्षा नीति–2020 :–

समावेशी शिक्षण' के विचार के अंतर्गत '2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति' एक महत्वपूर्ण शिक्षा नीति मानी जाती है। इस नीति का लक्ष्य विद्यार्थी एवं शिक्षा की प्रत्येक आवश्यकता को पूर्ण करना है।

यह नीति भारत की बहुविध संस्कृति की विशेषता को एक आकार प्रदान करती है। नीति का लक्ष्य छात्रों में 'भारतीय होने का गौरव' आत्मसात करना है। भारत संस्कृति का समृद्ध कोष है जो कि हजारों वर्षों से अपनी आस्था, विचार, कला, साहित्य, परंपराओं और अभिव्यक्तियों के साथ–साथ अपने विस्तृत विचारधारा को भी साथ लेकर वि व के विस्तृत पटल पर अपनी एक छाप छोड़ता है। भारत के विविध मौसम, पर्यटन तथा यहाँ के लोगों के भीतर संस्कृति को लेकर जो एक जुड़ाव है, वह इसको वि व पटल पर 'अतुल्य भारत' बनाती है।

मातृभा□ा में शिक्षण – बहुभाषिकता के जिस लक्ष्य को लेकर भारतीय शिक्षा नीति आगे बढ़ती है उसके संदर्भ में बुद्धिजीवियों ने यह प्रस्ताव रखा कि भाषाओं का शिक्षण एवं विकास शिक्षा के अंतर्गत होना आवश्यक है। विद्यार्थी अपनी 'मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण' कर सकता है।

त्रिभा□ा सूत्र – नई 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' के अंतर्गत विद्यार्थी को त्रिभाषा सूत्र पर काम करना होगा,

जिसके अंतर्गत मातृभाषा भी एक महत्वपूर्ण माध्यम रहेगी।

सतत् विकास लक्ष्य और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा – 'सतत विकास लक्ष्य' की चौथी सीढ़ी पर 'सतत् विकास लक्ष्य –4' के अंतर्गत 'गुणवत्ता शिक्षा' की बात की गई है। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' के वृहद् पत्र में 'परिचय' शीर्षक के अंतर्गत इस बात का वर्णन मिलता है कि भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए 'सतत् विकास एजेंडा– 2030' के 'लक्ष्य–4' में परिलक्षित 'वैश्विक शिक्षा विकास से झंडा के अनुसार वि व में 2030 तक सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्ता युक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवनपर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने का लक्ष्य रखा गया है।[1]

त्रिभा□ा सूत्र-भा□ा ज्ञान एवं सीखते रहने की कला – ज्ञान के परिदृश्य में पूरा वि व तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। वि व आज इंटरनेट के आविष्कार के साथ ही एक ग्राम के रूप में परिवर्तित हो गया है। यह संप्रेषण टूट जाएगा यदि हमारे पड़ोस में रहने वाला व्यक्ति क्या कह रहा है उसकी भाषा की जानकारी यदि हमें नहीं होगी। इस विचार के समाधान हेतु 'सीखते रहने की कला' श्रेष्ठ है।[2] यह भाषा शिक्षण के अधिगम के लक्ष्य को प्राप्त करके ही संभव है। शिक्षण प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जिसके अंतर्गत शिक्षार्थी केंद्र में हो। उसके 'भीतर की जिज्ञासा उसे खोज अनुभव और संवाद के लिए प्रेरित' करे और यह इतनी लचीली भी हो कि उसकी समग्रता और समन्वित रूप के प्रति विद्यार्थी सक्षम बन सके और वह रुचि पूर्ण भी हो और यह तभी संभव हो पता है जब शिक्षा के क्षेत्र में विविध भाषिकता वाले भारत में 'त्रिभाषा सूत्र' का क्रियान्वयन किया जाता है।

विविध भा□ा पुस्तकालय निर्माण एवं पढ़ने की रूचि का विकास :– 'शिक्षा नीति 2020 की पदक्रम संख्या 21.9 विद्यार्थियों में 'पढ़ने की आदत को विकसित करने' के लिए 'पुस्तकों तक पहुँच और उपलब्धता बेहतर करने' को आवश्यक माना गया है। यह नीति इस बात की अनुशंसा करती है कि 'सभी समुदाय और शिक्षण संस्थान, विद्यालयों, महाविद्यालयों से यह अपेक्षा रखी जाती है कि विशिष्ट समुदाय या विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थियों के लिए तथा सभी के लिए पुस्तकें उपलब्ध कराई जाएगी और शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं और रुचियों का पूर्ण रूप से ध्यान रखा जाएगा।' राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 'भारतीय भाषाओं में शिक्षार्थियों को पठन सामग्री उपलब्ध कराने' की अनुशंसा भी रखती है जिसके अंतर्गत बाल पुस्तकालय एवं चल पुस्तकालय खोलने का प्रस्ताव रखा गया है। पूरे भारत में समस्त विषयों पर सामाजिक पुस्तक क्लबों की स्थापना तथा शिक्षण संस्थानों और पुस्तकालयों में आपसी सहयोग बढ़ाने के लिए सुझाव दिया गया है।[3]

अतुल्य भारत की संकल्पना – भाषा संरक्षण, कला संरक्षण–वैविध्य होने के बावजूद भारत के कला एवं संस्कृति के मध्य भाषा ही एक अटूट संबंध रखती है। भाषा एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से जोड़ती है। संस्कृति भारत की प्रत्येक भाषा में समाहित है विविध कलाएं चाहे वह साहित्य नाटक संगीत फिल्म या पाक कला ही क्यों ना हो सभी में पूरी तरह से भाषा का सौष्ठव देखते ही बनता है। बिना भाषा के कलाओं का अस्तित्व भी संकट में दिखाई देता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति इस बात का सुझाव देती है कि 'संस्कृति के संरक्षण के लिए किसी भी राष्ट्र को उसके संवर्धन और प्रसार के लिए 'भाषा का संरक्षण और संवर्धन करना आवश्यक है।[4] इतिहास उठाकर देखा जाए तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति में मातृभाषा की तो बात की गई है किंतु इसके अतिरिक्त भारतीय भाषाओं की ओर पूर्ण रूप से ध्यान और इसका संरक्षण नहीं किया गया है। जिसके कारण देश ने 50 वर्षों में ही 220 भाषाओं को खो दिया है।' यूनेस्को के अनुसार 197 भारतीय भाषाएँ लुप्तप्राय घोषित की गई हैं और इसके अतिरिक्त

बहुत–सी भाषाएँ विलुप्त होने की कगार पर हैं। विशेष रूप से वे भाषाएँ जिनकी लिपि नहीं है।' यह उस विशिष्ट समुदाय और जनजाति के अस्तित्व पर भी संकट की स्थिति की कारक बनती है। विविध भाषाओं के माध्यम से वास्तव में विविध संस्कृतियों की अभिव्यक्ति को संरक्षण प्राप्त होता है। इसके लिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति सुझाव देती है[5] कि इस ओर ध्यान देना आवश्यक है।

भा□ा संरक्षण – अध्ययन सामग्री का निर्माण एवं क्रियान्वयन :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण प्रयास है क्योंकि 'जो 22 भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची में संयोजित की गई हैं उसके अतिरिक्त 'उच्च स्तरीय शिक्षा के अंतर्गत शिक्षार्थी को ज्ञान से जोड़ने, अपनी भाषा के संरक्षण और उसके प्रयोग में प्रोत्साहन देने हेतु भाषाओं को उसके जीवन के साथ जोड़ा गया है। इन भाषाओं में उच्चतर गुणवत्ता पूर्ण अधिगम और प्रिंट सामग्री का सतत प्रवाह होना आवश्यक माना गया है जिसमें पाठ्य–पुस्तक, अभ्यास पुस्तक नाटक, दृश्य–श्रव्य माध्यम, कविताएँ, उपन्यास, पत्रिकाओं को शामिल करने की बात कही गई है। भाषाओं के प्रयोग के लिए शब्दकोश और शब्द भंडार का होना भी अत्यंत आवश्यक है। 'इसके लिए सतत प्रयास करने हेतु' उनके समृद्ध भंडार को अद्यतन बनाने हेतु पूर्णतः अपडेट करने' की बात कही गई है ताकि समसामयिक मुद्दों और विचारों पर इन्हीं भाषाओं में चर्चा की जा सके और शिक्षार्थी लाभ पा सके[6] और वह स्वयं को अन्य वि व से पृथक ना जानकर उसका एक अभिन्न अंग स्वीकार करने में गौरव का अनुभव करें।

उच्च शिक्षा में विविध भा□ा शिक्षण – अनुभव से गुणवत्तापूर्ण शिक्षण एवं अधिगम :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति –2020 में केवल 'विद्यालय स्तर पर ही नहीं अपितु उच्च स्तरीय शिक्षण में भी बहुभाषिकता' को प्रोत्साहित करने के लिए 'प्रिय भाषा फार्मूला–त्रिभाषा सूत्र' का प्रस्ताव रखा गया है और इसके क्रियान्वयन' पर बल दिया गया है। इसके अतिरिक्त इस प्रयास को संभव बनाने के लिए मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा में शिक्षण पर जोर दिया जाना चाहिए। इस क्षेत्र में सफलतापूर्वक लक्ष्य प्राप्ति हेतु 'उत्कृष्ट स्थानीय कलाकारों, लेखकों, हस्तशिल्प कलाकारों और अन्य विशेषज्ञों को स्थानीय विशेषज्ञ के विभिन्न विषयों में प्रशिक्षक के रूप में जोड़ा जाना चाहिए'[7] ताकि शिक्षण और भी सहज हो सके।

विविध भा□ायी □ाब्दकोश एवं पुस्तक निर्माण – भाषाई शिक्षण, उच्चतर शिक्षा में एक बहुत बड़ी चुनौती है क्योंकि बहुत से विषयों में आज भी हमारे पास शब्द भंडार की कमी है तथा उस विशेष भाषा में पुस्तक उपलब्ध नहीं है इसलिए इस शिक्षा नीति में इस बिंदु पर भी विचार किया गया कि 'एक ऐसी टीम तैयार की जाए जो कि भारतीय भाषाओं, तुलनात्मक साहित्य, सृजनात्मक लेखन, दर्शन शास्त्र तथा अन्य विषयों जैसे कि विधि, वाणिज्य और प्रौद्योगिकी जैसे विषयों पर भी शब्द भंडार एवं पुस्तकों का निर्माण किया जाना चाहिए।' राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के 22.9 बिंदु में इस बात पर चर्चा की गई है कि 'भारतीय भाषाओं, तुलनात्मक साहित्य, सृजनात्मक लेखन आदि के सशक्त विभाग एवं कार्यक्रमों को देश भर में शुरू करने हेतु एक उत्कृष्ट टीम का निर्माण करना होगा और उन्हें विकसित किया जाएगा। साथ ही इन विषयों में दोहरी डिग्री या 4 वर्षीय बी० एड० सहित डिग्री कोर्स विकसित किए जाएँगे। यह विभाग एवं कार्यक्रम विशेष रूप से उच्चतर योग्यता की भाषा शिक्षकों के एक बड़े कैडर को विकसित करने में मदद करेगा।'[8]

अनुवाद द्वारा पर्यटन उद्योग में समृद्धि – भाषा वृद्धि को एक–दूसरे से जोड़ने के लिए एक सेतु के रूप में अनुवाद विभाग काम करेगा। 'उच्चतर शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत अनुवाद और विवेचना कला और संग्रहालय

प्रशासन एवं वेब डिजाइन के उच्चतर गुणवत्तापूर्ण कार्यक्रम एवं डिग्रियों का सृजन भी किया जाएगा। भारतीय भाषाओं में सतत विकास लक्ष्य–4 के अंतर्गत उच्चतर गुणवत्तापूर्ण सामग्री की बात कही गई है। इससे न केवल शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का विकास हो सकेगा साथ ही भाषा वृद्धि के मध्य अनुवाद के आने से पर्यटन उद्योग को भी काफी मजबूती मिलेगी। देश के 100 पर्यटन स्थलों को चिन्हित कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जाएगा।'[9]

संस्कृत को संरक्षण एवं संवर्धन – शास्त्रों के पाण्डुलिपि संस्करणों का संरक्षण एवं अभिलेख संग्रह – भारत के इतिहास में शास्त्र एक महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में इस संदर्भ में भी अनुशंसा दी गई है जिसमें 'जिन शास्त्रीय भाषाओं एवं साहित्य को संस्थाओं एवं वि वविद्यालयों के स्तर पर पढ़ाया जा रहा है, उनका और भी अधिक विस्तार किया जाएगा। अभी तक जो भी अभिलेख संग्रह उपेक्षित रहे अथवा जिनकी पांडुलिपियों अभी तक समय की धूल में दबी हुई हैं उन्हें पुनः एकत्र करके उनका संरक्षण और अनुवाद किया जाएगा देशभर के संस्कृत एवं सभी भारतीय भाषाओं के संस्थानों एवं विभागों को पूर्ण रूप से मजबूत'[10] किया जाएगा।

प्रोत्साहन हेतु छात्रवृत्ति एवं पुरस्कार – भारतीय भाषाओं के अध्ययन के लिए युवाओं को प्रोत्साहन देने हेतु 'छात्रवृत्ति की स्थापना तथा भारतीय भाषाओं में विभिन्न श्रेणियों पर काव्य–गद्य पुरस्कार की स्थापना इसके अतिरिक्त भारतीय भाषाओं में कविता, उपन्यास पाठ्य–पुस्तक तथा साहित्य का निर्माण तथा पत्रकारिता में भी इसके अस्तित्व को सुनिश्चित किया जाएगा।' भारतीय भाषाओं में प्रेरणा के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि यह दैनिक व्यवहार का अंग बने।[11]

अंतत यह कहा जा सकता है कि 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020' भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं क्रियान्वयन के लिए तत्पर है तथा भविष्य में **'मेरी भाषा, मेरी पहचान'** के अंतर्गत विविध भाषाओं को एक अस्तित्व प्रदान करने में कारगर सिद्ध होती है।

संदर्भ सूची :-

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), शीर्षक–परिचय, पृष्ठ–4
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), शीर्षक–परिचय, पृष्ठ–4
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), प्रौढ़ शिक्षा और जीवन पर्यंत सीखना, पृष्ठ – 86
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.1), पृष्ठ – 87
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.5), पृष्ठ – 88
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.6, 22.7), पृष्ठ – 88–89
7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.8), पृष्ठ – 89
8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.9–22.

10), पृष्ठ – 89
9. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.11–22.13), पृष्ठ – 89–90
10. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.15), पृष्ठ – 91
11. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (भारत सरकार), भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का संवर्धन (22.20), पृष्ठ – 93

ibcetbm2024@gmail.com
E-mail:jogeshbanger83@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 19–22

रघुवीर सहाय के काव्य–सर्जना में जीवन संघ□ि

डॉ. शर्मिला यादव
सहायक प्राध्यापक, आई. बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पानीपत।

रघुवीर सहाय स्वाधीन भारत के उन महत्त्वपूर्ण रचनाओं में से थे, जिनकी रचनाओं में स्वातंत्रयोत्तर भारत के विविध रूप और समस्याएँ सम्पूर्णता से उद्घाटित हुई हैं। उनकी रचनाएँ गतिशील जीवन यथार्थ से हमेशा सार्थक संवाद बनाए रही हैं। सहज और सामान्य के प्रति उन्मुखता उनकी रचनाओं का केन्द्रीय स्वर है। ये रचनाएँ जीवन की छोटी से छोटी वास्तविकता को अपने में समाहित करना चाहती हैं। अपनी रचनाओं में रघुवीर सहाय ने मानव जीवन और उसके विविध आयामों को सम्पूर्णता में व्यक्त किया है। उन्होंने लोकतंत्र, साम्प्रदायिकता, जातिप्रथा, स्त्रियों की स्थिति आदि राजनीतिक, सामाजिक समस्याओं का गहराई से विश्लेषण किया है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी रघुवीर सहाय दूसरे सप्तक के महान् कवि हैं। रचनाकार अपनी काव्याभिव्यक्ति के द्वारा पहचाने जाते हैं। कविताओं के दायरे में समाज का कितना बड़ा हिस्सा सम्मिलित है, इसी पर कवि की महानता का आधार रहता है। उन्होंने लगभग सारी विधाओं में जीवन के सारे पहलुओं को अभिव्यक्ति दी है। कविता, कहानी, नाटक, निबंध आदि हर विधाओं में अपने रचनाकर्म को उभारा है। तेजी से बदलते हुए समय में नई वास्तविकताओं के नए अनुभव की अभिव्यक्ति रघुवीर सहाय जी की कविताओं में अधिक है। यही काव्य गुण उन्हें अपने दौर का प्रतिनिधि कवि बनाता है।

"साहित्यकार की सफलता उसकी रचना–क्षेत्र की व्यापकता के आधार पर किया जाए तो निश्चित ही रघुवीर जी एक सफल साहित्यकार है। जिस प्रकार एक पौधे को फल–फूलों से लदा वृक्ष बनाने के लिए वातावरण सहयोगी होता है, उसी प्रकार रचनाकार का परिवार, वातावरण एवं परिस्थितियाँ उसके मन मस्तिष्क को परिपक्व बनाती हैं और वह समाज को अपनी कृत्तियों के द्वारा लाभान्वित करता है। साहित्यकार साहित्य को अपने विचारों एवं मतों को प्रकट करने का माध् यम बनाता है।"[1]

कवि रघुवीर सहाय जी के पाँच स्वतन्त्र संग्रह और दो सम्मिलित संग्रह प्रकाशित हुए हैं। कवि की रचनाओं का समावेश 'दूसरे सप्तक' में रचित है। इन कविताओं में कवि ने यथार्थ के प्रति जागरूक रहकर समाज में यथार्थ को समझाने का प्रयास किया है। कवि ने प्रकृति के सतत् बदलते हुए मनोरम्य चित्र को दर्शाया है। वसंत ऋतु के स्वागत में प्रकृति अपने बदलते हुए रंगों से मदमदाती हुई फूलों और सुवास के चारों ओर अपना हर्ष दर्शाती है। कविता में कवि ने प्रकृति के साथ अपनेपन की झलकियाँ प्रस्तुत की हैं। यथा :–

"सब ऋतुओं का सुख खिंच आए

इस फागुन के पास
सरस फलों की मीठी आशाओं की उड़े सुवास
नव आशाओं का मानव को वसंती उपहार
मिले प्यार में सदा जीव हो, नहीं कभी हो घर।। [2]

महान् रचनाकार रघुवीर सहाय ने स्नेह प्रेम की पीड़ा को परखा है। प्रेम की गहराई को नापकर देखा है। पारम्परित लकीरों पर चलकर सिर्फ आँसू बहाना नहीं चाहते कविता में कवि की याचना की झलक मिलती है–

"युक्ति के सारे नियंत्रण तोड़ डालें
मुक्ति के कारण नियम सब छोड़ डाले
अब तुम्हारे बंधनों की कामना है।"[3]

कवि रघुवीर सहाय जीवन के प्रतिकूल परिस्थितियों को नकारते नहीं बल्कि निराशा पर विजय प्राप्त करके नई आशा का संचार करना चाहते हैं. क्योंकि वे जीवन में समझौता करके माध्यम मार्गी नहीं बनना चाहते हैं–

"तुम चलों चुपचाप होकर
ताकि खा जाओ न ठोकर
और आँखों को गड़ा दो क्षितिज के पार,
क्योंकि बसता है क्षितिज के पार भी संसार।[4]

"सीढ़ियों पर धूप में" रघुवीर सहाय का प्रथम काव्य संकलन है। इसमें कविताओं के अतिरिक्त कहानियाँ, लेख और टिप्पणियाँ भी संकलित है। कवि ने प्रतिकार शक्ति का उपयोग करने का आह्वान करके समाज के दलित एवं पीड़ित लोगों को अन्याय का विरोध करने का आह्वान देते हैं :–

"जब तक यह न हो बोध
मुझ में भी क्रोध
और लूँगा प्रतिशोध और जब तक प्रतिशोध न हो
क□ट गहन
करो सहन
ओरे मन।"[5]

कवि रघुवीर सहाय परमात्मा को भी जगत् के दुःख–दर्दो के लिए आड़े हाथों लेते हैं। परमात्मा द्वारा दिये गये कष्ट भी अनेक हैं। परन्तु दुःख के बाद सुख का अनुभव होना निश्चित है :–

"वे जीवित रहते हैं, जीवित ही रहने के लिए नहीं
तू देता है क□ट और कुछ तू दे ही क्या सकता है।[6]

'आत्महत्या के विरुद्ध' कवि रघुवीर सहाय का दूसरा काव्य संकलन है। युग की बदलती हुई राजनीति को देखकर कवि ने इतिहास के साथ कदम मिलाया। इतिहास और साहित्य का अटूट रिश्ता होता है। इतिहास घटी हुई घटनाओं का वास्तविक रूप चित्रित करता है, तो साहित्य इतिहास की यथार्थता को मानवता का चोला पहनाता है। समाज की मनोदशा में पीसता हुआ हर एक नागरिक जीवन संघर्ष का मुकाबला करता है। मानव

परिस्थिति से संघर्ष करते हुए थक जाता है और दम तोड़ देता है। कविता 'कोई एक मतदाता' में कवि ने संघ रित शब्दों के द्वारा कविता में प्रस्तुत किया :–

"जब ाम हो जाती है तब खत्म होता है मेरा काम
जब काम खत्म होता है, तब ाम खत्म होती है
रात तक दम तोड़ देता परिवार
मेरा नहीं, एक और मतदाता संसार का।"[7]

कवि ने तत्युगीन समाज का हूँ – बहु चित्रण करके मतदाता, जिसकी आँखों में स्वतंत्र भारत का सुनहरा सपना है। वह सूझता हुआ मृत्यु की शरण पाता है।

'हँसो हँसो जल्दी हँसो' महान रचनाकार का तीसरा काव्य संग्रह है। इसमें लोकतंत्र के भीतर डर के बल पर टिकी हुई व्यवस्था में एक स्वतंत्र मनु य के रूप में जीने की स्थितियों को खत्म हो जाने का अकेलापन है।

"रघुवीर सहाय ने अधिकतर रचनाएँ समाज और उसके आम–आदमी को ध्यान में रखकर की है। अपने साहित्य में वे किसी कल्पना की उड़ान नहीं भरते बल्कि एक साधारण आम आदमी की तरह कड़वी सच्चाईयों से जूझते दिखाई देते। कभी अकेले असहाय से, तो कभी साहस के साथ।[8]

कवि इस समाज में विभिन्न मोर्चे और स्तरों पर चलने वाले संघर्ष का प्रतिनिधित्व सम्पूर्णता से करते हैं। जो वर्तमान शोषण व्यवस्था में जिन्दा रह सकने के लिए संघर्षरत है। 'सेब बेचना' कविता में सेब दागी न होने पर खरीददार बड़े रुआब के साथ सेब बेचने वाले से पूछता है। दूसरी ओर सेब बेचने वाला अपने बचाव के लिए शारीरिक असमर्थता के बावजूद विश्वास दिलाने की कोशिश करता है, पर वह कुछ बोल नहीं पाता। हाँ पर उसकी खांसी जरूर सीना थामें उसकी स्थिति का ब्यान करने लगती है। उसकी शारीरिक असमर्थता निरन्तर शोषण के शिकार का दुष्परिणाम है।

'लोग भूल गये हैं' इस काव्य संग्रह की रचनाएँ समाज में मानवीय रिश्तों की पहचान खो जाती है। कवि महसूस करता है कि अन्याय और दास्ता के पोषक और समर्थक व्यक्तियों ने मानवीय रिश्तों को इस हद तक बिगाड़ दिया है कि अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाला जन हर मौके पर अपने आप को पराजित पाता है। 'दयाशंकर' शीर्षक कविता में कवि ने समाज के कटु यथार्थ का वर्णन किया है। इस कविता के शीर्षक में चित्रित गरीब तो और भी भयावह है। दयाशंकर बेचारा जो अपने परिवार के लिए दो वक्त की रोटी जूटा नहीं पाता, पत्नी को बुआ कहाँ से खिलायें। किसी तरह पत्नी बच्चों से अलग बचाकर चार पुए बनाकर अपने पति को खाने के लिए देती है, मानो पुए ही उनका मधुर सपना हो, पर जैसे ही वे खाने बैठते हैं, बच्चे जग जाते हैं। इस कविता में कवि ने जिस प्रकार दयाशंकर की आर्थिक स्थिति उसकी पत्नी की इच्छाओं और भावनाओं का चित्रण किया है, वह जीवन के कटु संघर्ष का यथार्थ है।

'कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ' : इस काव्य संग्रह की कविता 'दयावती का कुनबा' शीर्षक कविता में नारी की करूणा स्थिति का यथार्थ चित्रण है। 'रघुवीर सहाय ने दयावती के जीवन की लम्बी कहानी को संक्षिप्त रूप दिया है। दयावती के पिता अपने सिर का बोझ कम करने के लिए दयावती को किसी श्वर के हाथ में देता है।

एक अन्य कविता **'कस्बे में दिन ढले'** काव्य में कवि ने भारत के छोटे से कृषक परिवार का चित्र अंकित किया है। कवि का ध्यान गाँव की लड़की सुलगाती हुई लालटेन छाये हुए कोहरे किसी को बेध्यान नहीं कर पाया

है :–

"युवती के चेहरे पर
लालटेन की आभा
अब और कोहरे में
खोया हुआ आँगन
करती हूँ पार उसे रोशनी लिए युवती।"[9]

कवि समाज के विभिन्न वर्ग के लिए हमदर्दी है। "रघुवीर सहाय स्वाधीन भारत के उन महत्वपूर्ण रचनाकारों में से थे। जिनकी रचनाओं में स्वातंत्रयोत्तर भारत के विविध रूप और समस्याएँ सम्पूर्णता से उद्‌घाटित हुई है। उनकी रचनाएँ गतिशील जीवन यथार्थ से हमेशा सार्थक संग्रह बनाए रही है।"[10]

वस्तुतः रघुवीर सहाय स्वतंत्र भारत के उन विरले रचनाकारों में से हैं, जिन्होंने न केवल समकालीन जीवन के यथार्थ को सम्पूर्णता से साक्षात्कार किया, बल्कि उस यथार्थ को बदलने की कोशिश की। उनकी रचनाओं में एक ओर यदि सामान्यः मनुष्य की पीड़ा, बेबसी एवं यंत्रणा का चित्रण है, तो दूसरी ओर इन मनुष्य विरोधी स्थितियों का प्रतिरोध भी है।

उनकी रचनाएँ मनुष्य विरोधी स्थिति की पहचान करती है और फिर उसे बदलने के लिए प्रेरित करती है।

संदर्भ :–

1. डॉ. मोहिनी टाया, रघुवीर सहाय का जीवन एवं रचना संसार, पृ. सं 34
2. सम्पा. अज्ञेय, दूसरा सप्तक, पृ. सं 141
3. वही, पृष्ठ संख्या 143
4. वही, पृष्ठ संख्या 150
5. रघुवीर सहाय, सीढ़ियों पर धूप में, पृ. सं 82
6. वही, 'दादा तुझे क्या मतलब' पृ. सं 95
7. वही, आत्महत्या के विरुद्ध, पृ. 72
8. वही, पृ. 32
9. डॉ. अनन्त तिवारी, रघुवीर सहाय की काव्यानुभूति और भाषा, पृ. 46
10. डॉ. मोहिनी टाया, रघुवीर सहाय का जीवन एवं रचना संसार, पृ. 19

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 23–31

दलित विमर्श : आंबेडकरवाद

Prof. Shaikh Anisa Mahebub
Assistant Professor, S. R. R. B. Shinde College,
Paranda, Distt. Osmanabad-413502

सारांश:

जब व्यक्ति शिक्षित होता है, तब उसके विचार अधिक सक्षम बन जाते हैं। उसे अच्छे-बुरे की सही-गलत की पहचान होने लगती हैं । दुनिया भर में अनेकों चिंतक हुए हैं, साथ ही उनकी विचारधारा को मानने वाले भी हुए हैं, लेकिन इन चिंतकों में चिंतनशीलता विकसित करने में इन महापुरुषों की महती भूमिका रही। वैश्विक धरातल पर देखे तो गौतम बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह, गुरुनानक, मोहम्मद पैगंबर, संत रैदास, संत कबीर, गुरु घासीदास, ज्योतिबा फुले, छत्रपति शाहू महाराज, पेरियार, ललई सिंह यादव, डॉ बी आर आंबेडकर, ग्राम्सी, कार्ल मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, डार्विन, सिगमनफ्रायड, नेल्सन मंडेला जैसे महानतम विचारक हुए। इन विचारों को ने समाज की समस्याओं को वास्तविक रूप में समझते हुए पुराने जर्जर पड़े ध्वस्त पाखंडता, अंधविश्वास को दूर करने का तथा बेहतर समाज निर्माण की बात की है । नए वैज्ञानिक तर्कपूर्ण संदेश भी दिए । इस संदेश से मानव समाज में चेतना आई और मानव विकास के मार्ग पर चल पड़े है।

दलित विमर्श पर विचार करते समय महात्मा गौतम बुद्ध द्वारा चलाए गए आंदोलन की याद ताजा हो जाती है। बुद्ध ने खोजने की ताकत जुटाई और खोज की प्रक्रिया की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। बुद्ध की मानवतावादी और समतावादी विचारधारा से उनका बताया हुआ उँच-नीच का साम्राज्य डगमगाने लगा । दलित वर्ग से मनुवादी व्यवस्था का साहस और विश्वास डगमगाने लगा । गौतम बुद्ध पूर्ण वैज्ञानिकता पर जोर देते हैं , इसलिए आज इनके वाणी के आगे ही अंबेडकरवाद के मायने बने, गौतम बुद्ध की विचार व परंपरा को आगे बढ़ाना सही मायने में आंबेडकरी विचारधारा को मारना है।

<u>सुरुवात</u>:

वर्तमान दौर डॉ बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों को सत्कार करने वालों का है, इसमें ज्यादातर दलित बहुजन व आदिवासी शामिल हैं। डॉ बाबासाहेब के विचारों को समझने का या जानने का मतलबी है कि हमारे अतीत के साथ ही वर्तमान को समझना जानना व मानना हैं, जिसमें दलित बहुजन को आगामी सदियों के लिए कैसे कार्य प्रारूप तैयार करना शामिल है ।

सोशल नेटवर्किंग साइट के आने से या संचार क्रांति का आगाज होने से अंबेडकरवादियों में जुड़ा हुआ हैं और अंबेडकरी नजरियों से समाज से वाकिफ हुए हैं और प्रबुद्ध भारत निर्माण में अपना हर तरह से योगदान दे रहे हैं । आज फेसबुक, ट्विटर पर लाखों लोग डॉ बाबासाहेब आंबेडकर के विचार लिखकर पोस्ट व साझा कर रहे हैं। जिसमें डॉ. आंबेडकर के जीवन और उनके विचारों के साथ ही संविधान में समाज के बेहतर विकास हेतु की कई बाते शामिल हैं।

<u>प्रस्तावना</u>:

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान समाज सुधारकों ने समाज में व्याप्त बुराइयों की ओर ध्यान दिया । महात्मा फुले , छत्रपति शाहू महाराज , राजा राममोहन राय ,

स्वामी दयानंद सरस्वती , महात्मा गांधी , डॉक्टर बाबासाहेब आंबेडकर तथा समाज प्रेमियों ने दलितों के उत्थान से संबंधित महत्वपूर्ण कार्य किए । जिस समय भारत के अनेक क्रांतिकारी , वीर योद्धा आजादी की लड़ाई लड़ रहे थे उसी समय भीमराव अंबेडकर जैसे महान मानव दलितों के हक की लड़ाई लड़ रहे थे। वैसे दलित चेतना बहुत पहले जागृत हुई थी , लेकिन उस चेतना की आग की ज्वाला अंबेडकर के मन में धड़कने लगी और वह समाज परिवर्तन के लिए प्रेरित हो गए । जब दलितों को पीने के लिए पानी भी नसीब नहीं हुआ करता था , उस समय अंबेडकर 1927 में महाड में चवदार तालाब का आंदोलन चलाया था। ऐसे कई कार्य है जो आंबेडकरने अपने आंदोलनों से दलितों का जीवन उद्धार करने का प्रयास किया है। और आधुनिक युग में उसके अच्छे परिणाम हमें दिखाई देते हैं।

<u>उद्देश</u>:

अंबेडकरवादी विचारधारा के संदर्भ में लिखने का उद्देश्य यह है कि, दलितों के आत्मसम्मान को किसी भी कीमत पर भुलाने की गलती ना हो । महापुरुषों ने अनेक प्रयासों से दलितों की स्थिति सुधारने का महत्वपूर्ण प्रयास किया और इस प्रयास को डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने योग्य दिशा देने का कार्य किया है । आत्म सम्मान के सामने जो जो भी बाधाएं दिखाई देंगी उन्हें खुले दिल से ठुकरा देना ही मुख्य भूमिका है । सनातन वर्णव्यवस्था, भेदाभेद , शोषण , पीडाएं , जबरदस्तियाँ , ऊँचनिचता ज्यादतियां आदि के विरुद्ध मोर्चा खोलना ; तथा अपनी पूरी क्षमताओं से उन सब का खात्मा कर देना आवश्यक है। डॉ. बाबासाहब अंबेडकर की सीख तथा शिक्षा के प्रभाव की वजह से दलित वर्ग के दिल और दिमाग में आत्मसम्मान, आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता की चेतना जागृत करना इतना ही नहीं तो लोकतंत्र , समता, समाजवाद आदि लाभप्रद लगनेवाली संकल्पनाओं को

यह मूलभूतता से समझना ही नहीं बल्कि उस पर अमल करना आवश्यकता है। यह भी भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। उन्हें अज्ञान के अंधकरों से निकालकर ज्ञान की रोशनी की ओर ले जाना है।

<u>मुख्यभाग</u>:

डॉ। बाबासाहब अंबेडकर ने दलित साहित्य की न्यू डाली है। दलित समाज को तथा उनकी समस्याओं को सृजनात्मकता से अंबेडकर ने नई सोच प्रदान की। प्राचीन काल से हमारे देश में वर्ण और जाति व्यवस्था प्रचलित रही है।प्रारंभिक काल में वर्ण व्यवस्था प्रचलित नहीं थी। उत्तर वैदिक काल में भारतीय समाज व्यवस्था में चार वर्ण कायम रहे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ;पहले 3 वर्ग की सेवा करने का काम शुद्र करते थे, शुद्र अन्य और एक नाम से जाना जाता है वह कि 'दलित' इस शब्द से दलित या पीड़ित कौन हैं? उनकी क्या समस्या हैं? इस पर हम अपना ध्यान आकृष्ट करते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि जिस व्यक्ति का 'दलन' हुआ है जो दुःख, दर्द, कष्ट, वेदना से पीड़ित है, जो सवर्णों के अत्याचार का शिकार बना है, वही दलित या पीड़ित हैं। रश्मि चतुर्वेदी दलित के बारे में लिखते हैं, " उपेक्षित, अपमानित, ,प्रताड़ित, प्रतिबंधित और पीड़ित मानव दलित हैं। "१ दलित वह व्यक्ति हैं जो सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से जिसका शोषण हुआ । जिसमें सभी प्रकार के शोषित आते हैं, जो मानव के हक़ से वंचित हैं वह मानव दलित हैं। आज नई समाज की व्यवस्था, नई सभ्यता ने दलित को नया अर्थ देने का प्रयास किया है। केशव मेश्राम के अनुसार " अनुसुचित जाती , बौद्ध , मजदूर , आदिवासी, गरीब किसान भूमिहीन दलित है ।"२ इस का अर्थ यहि हुआ कि शोषित मानव ' दलित ' हैं। जिसने आजीवन घृणा , उपेक्षा, दुत्कार, अपमान, धिक्कार, बदनामी, पीड़ा, गरीबी, दरिद्रता को सहा वह दलित हैं।

भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वर्तमान दौर डॉ. बाबासाहब अंबेडकर के विचारों का सत्कार करने वालों का है। इसमें ज्यादातर दलित, बहुजन व आदिवासी

शामिल हैं। हमारे अतीत के साथ ही वर्तमान को समझना, जानना व मानना है, जिसमें दलित बहुजन को आगामी सदियों के लिए कैसे कार्य प्रारूप तैयार करना शामिल है।

जब वर्ण एवं जाति के बंधन कडे हो जाते हैं, तब मनुष्य के विकास में बाधक आ जाते हैं। वही दलित विमर्श की करुण कहानीयाँ जन्म लेने लगती है। इस संदर्भ में डॉ. सुरेशचंद्र लिखते हैं " किसी भी समाज में सुख और शांति के लिए लोगों के बीच समरसता की स्थिती होना परम आवश्यक होता है। भारतीय समाज में इस स्थिति हेतु अनेक प्रयास हुए परन्तु परिणाम उनके अनुकूल नहीं मिल पाया है। वर्ण और जाति की कसौटियाँ मनुष्य को श्रेष्ठ और अश्रेष्ठ बनाकर उन्हें परस्पर समरस होने से रोकती हैं।"३

आज आंबेडकरवादी विचारधारा की आवश्यकता क्यों है? क्योंकि कई संस्थानों में आज भी इन श्रमिक दलित, पीड़ित, वंचित वर्ग में प्रबोधन जागृत की आवश्यकता है। सभी क्षेत्र में प्रगति, विकास करना आवश्यक है, इस संदर्भ में सुशीला टाकभौरे लिखती हैं, " समय के साथ शताब्दियाँ हीन हो रही है। मगर इन पिछड़ी, दलित जातियों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनैतिक, धार्मिक स्थिती में कोई परिवर्तन नहीं हो सका है। इन जाति-समुदायों की स्थिती में परिवर्तन होना भी संभव हो सकेगा जब वे गांधीवादी और मनुवादी विचारधारा को छोड़कर अंबेडकर वादी विचारधारा से जुड़ेंगे।"४ डॉ. बाबासाहब अंबेडकर एक समताधिष्ठित समाज का निर्माण करना चाहते हैं। वे अपने विचारों से मानव में मानवता के प्रति करुणा, दयाभाव को पिरोना चाहते हैं। सदियों से चले आ रहे प्रथाओं, परंपराओं, प्राचीन संस्कारों से मुक्त करने की अभिलाषा वे रखते थे। इसलिए डॉ. बाबासाहेब के नाम से आंबेडकरवादी विचारधारा प्रचलित है। आंबेडकरवाद केवल जाति प्रथा तक सीमित नहीं रहता है, जो समस्त शोषित, उत्पीड़ित और उपेक्षित मानव की मुक्ति के लिए प्रयत्न करता है।

समकालीन सभी नेतागण राष्ट्र की स्वतंत्रता चाहते थे। स्वतंत्र राष्ट्र में राजनीति में समानता आएगी परंतु सामाजिक, आर्थिक की असमानता कायम रहेंगी। इसलिए डॉ. बाबासाहब आबेंडकर राजनैतिक समानता के साथ सामाजिक और आर्थिक समानता चाहते थे क्योंकि जब तक हमारे समाज में असमानता रहेंगी, तब तक यह राजनीतिक लोकतंत्र जीवित नहीं रहेगा। अगर यही असमानता की स्थिती लगातार बनी रही तो राजनीतिक स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाएगी समानता नहीं आएगी राजनैतिक लोकतंत्र की धज्जियां उड़ जाएंगे। इसलिए डॉ. बाबासाहब आंबेडकर राष्ट्र की अखंडता चाहते थे। इसमें सभी मानव को समान दर्जा, समान अधिकार मिलने चाहिए, तो ही राष्ट्र का हर व्यक्ति राष्ट्र का सम्मान करेगा, राष्ट्र का गर्व से नाम लेगा। इतनी राष्ट्रभक्ति उनके व्यक्तित्व में थी।

दलित समाज को हजारों सालों से झकडे बंधन से निकालना आसान काम नहीं था। उन्होंने ब्राह्मणवाद का विरोध करके लोगों को समझाया कि यदि आपको उच्च वर्ग के दासता से निकलना हो तो उनके द्वारा लिखित वेद, पुराण और स्मृति आदि साहित्य दहन करना होगा , जो तुम्हें उन की दासता से बांधता है। उन्होंने समाज में असमानता निर्माण करनेवाले ग्रंथों की तीव्र भर्त्सना और निंदा की इस संदर्भ में डॉ. सर्वेशकुमार मौर्य कहते हैं, " हम वेद, पुराण और स्मृति के प्रमाण को नकारते है और हम आज 25 दिसंबर को हमारी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक गुलामी को कायम करनेवाली 'मनुस्मृति' को दहन कर अपने सत्याग्रह को आरंभ करेंगे। यह किताब हमारे लिए विनाशकारी है।"५ इस प्रकार का मनुस्मृति दहन से सवर्ण समाज की नींव हिल गई और 25 दिसंबर 1928 यह दिन दलितों की मुक्ति का आदर्श ऐतिहासिक दिन बन गया।

14 अक्टूबर 1956 को बाबासाहब ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। हजारों साल से पीड़ित दलित समाज बाबासाहब के धर्मांतरण के कारण हिंदू धर्म का त्याग किया। हिंदू देवी देवताओं को नकारा। सदियों से कर रहे हिन कामों को छोड़ दिया।

हम बौद्ध हो गए हैं, इसलिए हिंदू धर्म द्वारा हम पर लादे गए हीन काम अब हम नहीं करेंगे। ऐसी नई चेतना पूरे दलित समाज में जागृत हुई।

बाबासाहबने बौद्ध धर्म ही क्यों स्वीकारा ? यह प्रश्न उपस्थित होता है। बौद्ध धर्म में जाति व्यवस्था को कोई स्थान नहीं है, बौद्ध धर्म में समता का समर्थन करनेवाला और विषमता नकारने वाला धर्म है। बुद्ध ने जाति प्रथा को नकारा और संघ में सभी को प्रवेश दिया। इसलिए बाबासाहबने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। शोषण-मूलक व्यवस्था की यहाँ लंबी परंपरा आज खंडित हो रही है। सदियों से दबा एवं कुचला हुआ यह समाज का एक प्रताड़ित हिस्सा अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर शोषण के विरोध में विमर्श कर रहा है। 'अनटचेबल' कहलाने वाले लोगो में वैचारिक क्रांति हो रही है। वे अपने अस्तित्व को लेकर सजग हो गए हैं। इस दलित विमर्श की संघर्षगाथा ने साहित्य के माध्यम से विश्व को व्यापक लिया है। इसी बात को डॉ. हनुमंत राव एवं डॉ. इबतवार स्पष्ट करते हुए लिखते हैं " चावक दर्शन बुद्ध, कबीर, रैदास के साथ महात्मा फुले, राजर्षि शाहू , डॉ. बाबासाहब आदि के विचारों के कारण दलितों में जागृति आई। वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गए। इस कारण उन्हें आंदोलन किए। इन आंदोलनों से प्रेरित होकर दलित साहित्य का निर्माण हुआ है। यह निर्माण कार्य वैश्विक स्तर पर दिखाई देता है।"६

दलित आंदोलन में मनुष्य ने मनुष्य का विरोध नहीं किया है। इसमें मानवता का विरोध करनेवाली प्रवृतियों का विरोध किया गया है। दलित विमर्श को हिंदी साहित्य की विधवाओं में पूर्ण सम्मान के साथ अभिव्यक्ति मिली है। शिक्षा क्षेत्र में हुई क्रांति ने इन्हें इंसान बनने का मौका दिया। इनकी सोई हुई अस्मिता को जगाकर उनकी गुलामी और जहालत भरी जिंदगी को छोड़ने के लिए प्रवृत्त किया। इस संदर्भ में नितिन गायकवाड लिखते हैं, " जब इन अस्पृश्यों ने शिक्षा हासिल की तब उन्हें इनके इंसान होने का अहसास हुआ, उन्हें उनके गुलामी का अहसास

हुआ। धीरे धीरे उनके भीतर का मृत स्वाभिमान जीवित हो उठा। यही स्वाभिमान उन्हें अस्वस्त करने लगा। उनकी उस गुलामी और जहालत भरी जिंदगी को ठुकराने के लिए उकसाता रहा। तब इन अस्वस्थ गुलामों ने गुलामी और शोषण के कारणों को खोजना शुरू किया। उन पर हुए अनगिनत जुल्मों और जख्मों पर खुलेआम चौराहे पर बोलना और लिखना शुरू किया। "७

गुलामी के प्रति विरोध करके डॉ. बाबासाहब अंबेडकर ने अस्पृश्यों को अधिकार दिलाने के लिए विधानमंडल में अस्पृश्यों का एक प्रतिनिधि हो ; प्रतिनिधि होने से अस्पृश्यों पर हो रहे अन्याय के खिलाफ़ आवाज उठाई जा सकती है। इसलिए उन्होंने दलितों एंव आदिवासियों के लिए स्वतंत्र निर्वाचन संघ और आरक्षित जगहों का प्रस्ताव रखा था।

दलितों को उनकी अस्मिता का अहसास सही मायनों में डॉ. बाबासाहेब साहेब अंबेडकर ने कराया। उन्होंने ही दलितों को अन्याय और शोषण के खिलाफ़ संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया तथा उनमें यह विश्वास पैदा किया कि वे किसी से कम नहीं हैं, उनमें भी ऊपर उठने तथा आगे बढ़ने की सभी संभावनाएँ हैं।

डॉ. बाबासाहब ने दलित अस्पृश्य समाज को शिक्षा का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण विचार दिया। जिसे अस्पृश्यों और दलितों ने स्वीकार करके खुद को स्वयं प्रकाशित किया।

" शिक्षा लो, संगठित बनो और संघर्ष करो। "

यह जीवन का मूलमंत्र देकर शिक्षा से ज्ञान प्राप्त करने के बाद समाज का संगठन करके अपने हक्क, अधिकार तथा अन्याय के खिलाफ़ लड़ने की बाबासाहब ने दलित समाज को प्रेरणा दी।

निष्कर्ष।

युगों से दलित समाज अन्याय अत्याचारों से पीड़ित था। डॉ. बाबासाहब ने अस्पृश्य समाज को समानता के मूल्य देकर बताया कि अब अस्पृश्य लोगों ने जैसा है वैसा रहने की आदत छोड़ देनी चाहिए। अगले जन्म में अपना कल्याण होगा ऐसी अंधविश्वासी बातों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। सभी लोगों को अपनी उन्नति करनी चाहिए। सभी लोगों को समानता का दर्जा देना चाहिए। अस्पृश्यता जैसे कलंक को हिंदू समाज से मुक्त करना चाहिए। अंबेडकर जी के विचारों से प्रेरित होकर दलित समाज जागृत हुआ। सदियों से शोषित मुक्त समाज की पहली वाणी सृजनात्मक दलित साहित्य है, जो दलितों के अंतर्मन की आर्त पुकार और आक्रोश की आवाज है। उन्होंने दलित , पीड़ित, शोषित, गरीब किसान इन सभी को मौलिक विचार देकर सदियों से अंधकार में जी रहे इस अज्ञानी समाज को नया जीवन और एक नई दिशा दी।

<u>संदर्भ ग्रंथ</u>

१) डॉ. धनंजय चौहान - हिंदी साहित्य में दलित सरोकार , पृ क्र.३४
२) डॉ. धनंजय चौहान - हिंदी साहित्य में दलित सरोकर , पृ क्र.३३
३) डॉ. सुरेशचंद्र - दलित चिंतन की दिशाएँ , पृ क्र.१४५
४) सुशिला टाकभौरे : संघर्ष (कहानी संग्रह) शरद प्रकाशन २००६ , पृ क्र.०४
५) डॉ. सर्वेशकुमार मौर्य - हिंदी दलित एकांकी संचयन, स्वराज्य प्रकाशन , नई दिल्ली पृ क्र.१३७
६) डॉ. वीरन्द्रसिंह यादव - दलित विमर्श के विविध आयाम , पृ क्र.१७४
७) नितीन गायकवाड - दलित जीवन संघर्ष और स्वप्न पृ क्र.२८

Phone No – 8149770446

Email ID – anisashaikh1689@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 32-35

Changing Fact of Family: A Global Perspective

Dr. Harpreet Kaur
56, Central Town, Ludhiana

Family is a single word, with many different meanings. People have many ways of defining a family and what being a part of a family means to them. Families differ in terms of economics, cultural, social and many other facets, but the every family has in common is that the people who call it a family are making clear that those people are important in some way to the person calling them his family. Family may seem like a simple concept, but there is no simple definition of family. In its most basic terms, a family as a group of individuals who share a legal as genetic bond, but for many people, family means much more, and even the simple idea of genetic bond can be more complicated then it seems. In the most basic definition, a group of people who share a legal bond or a blood bond is a family.

Types of Family :

There are many different types of families, each of which is equally viable as a supportive, caring unit.

- **Nuclear Family :** Also called a conjugal family, this is the parents and their children living in the same residence or sharing the closest bond.
- **Extended Family :** This type of family includes all relatives in close proximity, such as grandparent's aunts, uncles and cousins. In a family household that is extended, these relatives typically live together and all share daily household duties. This type of family is also called a joint family or multigenerational family depending on which members are included.
- **Complex Family :** This type of extended family has three or more adults plus their children. This type of family may be formed through divorce and remarriage, or it may be formed through polygamy in societies where that practice is acceptable.
- **Step Family :** This family is a family where the adults have divorced and remarried, bringing children from other unions together to form a new nuclear family. The children may come from several different parents or become or both sides of the new union.

- **Traditional Family :** This is a family unit defined in the classic sense as the father working outside the home to support the members financially. While the mother remains at home and tends to domestic duties and child-rearing.
- **Adopted Family :** This type of family share legal bonds but not genetic cones. Two parents may adopt a child to whom they share no blood relationship or one parent may adopt the ch8ld of the other parent.
- **Foster Family :** A foster family includes one or more adult parent who serves as a temporary guardian for one or more children to whom they may or may not be biologically related. In time, more formal arrangements may be made and foster. Children can be legally adopted.

Determinants of Change in Family Structure :-

- **Fertility Change :** The reduction in average annual rate of population growth, which is a global phenomenon, primarily occurred due to reductions in fertility levels. An inevitable outcome of declining fertility. rates and increasing age at first birth in most of the countries in the world declined significantly. In 2021, the global Total Fertility Rate (TFR) was 202 children per women, which is more than half of that it was in 1950.
- **Change in Age at Marriage and Age at First Birth :** In many countries in Asia where significant declines infertility are being experienced, reductions in the proportion of people married have often coincided with or preceded declines in marital fertility. A substantial increase of the proportions never married among both males and females, at young ages, has been noted in many countries. For instance, in Bangladesh, the proportion of females never married in the age group 20-24 increased from 4.6 percent to 18.5 during the period of 1970 and 2000.
- **Change in Mortality :** Mortality decline, particularly infant mortality, everywhere preceded fertility declines improved. Survival rates of children mean that when women reached the age of 30 they increasingly had achieved the completed family size they desired. Earlier, much larger numbers of births where require d to achieve the desired completed family size.
- **Marriage Dissolution :** It is no longer the case rate all marital unions, whether formal or informal reach the final dissolution through death. A considerable proportion of unions are disrupted suddenly for reasons such as desertion, separation or divorce. An obvious failure in family relationship is where husband and wife cease to live together. Divorce is the final dissolution, leaving both spouses legally free to enter another marriage contract.
- **Women's Economic Participation :** The commercialization process which opened markets in many developing countries has succeeded in replacing the traditional co-operation in economic relationship, with that of competition.

Trends in Changing Families :-

In the modern Indian society the trends are changing rapidly. The reasons of such changes are as follow:-

- **Marriage-Divorce-Remarriage :** Divorce rates have decreased since 2000, but almost one out of every two first marriages is expected to end in divorce. Teen marriages and marriages entered into because the women become pregnant are especially likely to unravel. Stepfamilies are also becoming much more common. About 12 percent of Americans are currently in their second, third or fourth marriage.
- **One-Parent Families :** As more adults remain single into their 30's and because divorce rates are high, the number of children living with one parent has increased.
- **Employed Mothers :** The high participation of mothers in the labor force since the 1980s has been one of the most striking changes in American families. The percentage of two earner married couple with children under age 18 more from 31 percent in 1976 to 66 percent in 2007 & more than 45 percent in 2020 in India.

Guidelines for Families Adapting to Change :

To keep the family healthy and wealthy, one should try to follow the certain guidelines. These guidelines are as follow :-

- **Accept the Hardship :** Well-functioning families quickly accept the hardship and use their energy and resources to meet the challenge.
- **Don't Blame each Other :** Poorly functioning families try to attach the blame to someone inside or outside the family. Healthy families see the crisis as a family centered problem.
- **Be Patient :** Well-functioning families recognize the need for peace-making, patience and consideration. Poorly functioning families quickly respond with anger.
- **Be Good Stress Managers :** Practice a healthy lifestyle and plan well deserved relaxation times.
- **Remain Optimistic :** Striving to see the brighter side, without denying reality.
- **Do Things Together as a Family :** Go on family outings, plan fun time at home, hold family meetings, play together and go to religious places together.

Conclusion :

Families are transforming, not destroying, themselves. There have been changes in family structure, but families of all kinds seek caring, supportive, comforting, and, enduring relationships. There is nothing inherently better about one type of family form than another. Moreover, family structure don't appear by themselves. People crate families that meet their needs for love and security.

The greatly expanded choices in family structure and function mean that the definition of family no longer reflects. The interests of any on social class, gender or ethnic group. To deal with changes, choices and constraints, we need as much information as possible about the family.

References :

1. Achenbach, et al. (1995). Six year predictors of problems in a national sample of children and youth 1 crores information. *Journal of the American Academy of Child and Adolescent Psychiatry,* 34, 336-346.
2. Aun Son, O. (1981). Living arrangements and women's health. *Social Science and Medicine,* 16, 201-208.
3. Clifford, T. and Clark, R. (1995). Family climate family structure and self-esteem in college females. The physical vs. psychological-wholeness divorce debate revised. *Journal of Divorce and Remarriage,* 23, 97-110.
4. Dawson, D.A. (1991). Family structure and children's' wellbeing. Data from the 1988 National Health Interview Survey. *Journal of Marriage and Family,* 53, 573-584.
5. Erickson, M.T. (1993). Rethinking Oedipus: An evolutionary perspective of incest avoidance. *American Journal of Psychiatry,* 150, 411-416.
6. Gilder, G. (1986). Men and marriage. Gretna, L.A.: Pelicon.
7. Glenn, W.D. and Kramer, K.B. (1987). The marriages and divorces of the children of divorce. *Journal of Marriage and the Family,* 49, 811-825.
8. Hobart, C. and Grigel, F. (1992). Cohabitation among Canadian students at the end of the eighties. *Journal of Comparative Family Studies,* 23, 311-336.
9. House, J.S., Landis, K.R. and Umberson, D. (1988). Social relationships and health. *Science,* 241, 540-545.
10. Oakley, D.L. (1986). Low fertility child bearing decision making. *Journal of Social Biology,* 33, 256.
11. Olsen, P. et al. (1995). Epidemiology of pattern delivery in two birth cohorts with an interval of 20 years. American Journal of Epidemiology, 142, 1184-1193.
12. Zill, N. and Rogers, C.L. (1988). Recent trends in the well-being of children in the United States and their implications for public policy. In A.J. Cherlin (Ed.), The Changing American Family and Public Policy. Washington, DC: Urban Institute.

M: 98725-05975
harpreetkr05@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 36–38

नासिरा शर्मा की कहानियों में अभिव्यक्त नारी जीवन

Khan Reshma Bano
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी, महिला विश्वविद्यालय, मुंबई–400020

नासिरा शर्मा हिंदी की प्रमुख लेखिकाओं में से एक हैं। उन्होंने फारसी भाषा और साहित्य में एम.ए. किया है तथा हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी और पश्तो भाषाओं पर भी गहरी पकड़ रखती हैं। उनका साहित्यिक योगदान उपन्यास, कहानी संग्रह, लेख, अनुवाद और पत्रकारिता जैसे क्षेत्रों में व्यापक रहा है। उन्होंने अपने रचनात्मक लेखन में नारी विमर्श, सामाजिक परिवेश और अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्यों को भी उजागर किया है। नासिरा शर्मा हिन्दी साहित्य की उन महत्वपूर्ण लेखिकाओं में से एक हैं जिन्होनें अपनी कहानियों, उपन्यासों और लेखों के माध्यम से सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में विशेष रूप से नारी जीवन की सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। वे नारी पात्रों को केवल पीड़िता के रूप में नहीं दिखाती बल्कि उन्हें एक सशक्त व्यक्ति के रूप में चित्रित करती हैं, जो सामाजिक बंधनों को तोड़ने और अपने अस्तित्व की खोज करने के लिए संघर्षरत रहती हैं।

'खुदा की वापसी' कहानी महर पर केंद्रित है। इस कहानी में नायिका फरजाना और और उसके पति जुबेर के दांपत्य जीवन का चित्रण है। महर के कारण उनके संबंधों में दरार पड़ जाती है। शादी की पहली रात जुबेर अपनी पत्नी फरजाना को बहलाकर उस से महर माफ करवा लेता है। वो कहता है कि, "देखिए, अगर आप मेहर के रुपये चाहती हैं तो मुझे कोई एतराज नहीं है, हम बिजनेस क्लासवाले हैं। चेक अभी काटकर आपके हवाले कर सकता हूँ, मगर बात कुछ और है। वह औरत शौहर के लिए बहुत मुबारक होती है जो पहली रात अपने शीहर का मेहर माफ कर दे। वह बड़ी पाकदामन समझी जाती है।"[1] फरजाना पति के मोह में महर माफ कर देती है। बाद में उसे जब यह पता चलता है कि महर माफ कर देने के संबंध में कोई शरई कानून कहीं नहीं है। तब वह नाराज होकर अपने मायके चली जाती है और यह माँग करती है कि उसका पति अपनी गलती मान कर उससे माफी माँगे। किंतु जुबेर अपने पुरुषत्व के अहंकार के कारण माफी नहीं मांगता और संपूर्ण मामले से अपनी जान छुड़ा के विदेश भाग जाता है। फरजाना उसकी इस मनमानी को गुनाह समझती है और अपनी जिद पर अड़ी रहती है जिसके फलस्वरूप उसका घर उजड़ जाता है। इस कहानी में लेखिका ने नायिका फरजाना के माध्यम से मेहर के प्रति स्त्रियों में जागरुकता लाने की कोशिश की है।

देहलीज कहानी स्त्री पक्ष का समर्थन करने वाली कहानी है। मुस्लिम समाज में स्त्रियाँ आज भी धार्मिक कट्टरताओं के बीच फँसी हुई है। लेखिका का मानना है कि पूरे विश्व में अलग अलग तरीके से महिलाएँ अपनी लड़ाई लड़ रहीं हैं। उनके द्वारा किये गए सर्वे से पता चलता है कि शरीयत के नाम पर अंधकार में रखकर

स्त्रियों को उनके अधिकारों से वंचित किया जाता है। "इस्लाम ने यदि औरतों को बराबरी का अधिकार दे रखा है तो फिर वह अपने समाज, परिवार में इस तरह कैद क्यों रखी जाती हैं? एक तरफ कयामत के दिन मुरदों की पहचान माँ के नाम से होगी बाप के वंशवृक्ष से नहीं, फिर उसी औरत को आखिर प्रताड़ित कौन कर रहा है–सियासत, समाज, अज्ञानता? जवाब साफ है कि वह मर्द है जो औरत के अधिकार का हनन करता है। मगर क्या औरत कम कसूरवार है जो अपने अधिकारों को लेना नहीं जानती है, उसको समझती नहीं है, उसको पढ़ती और दूसरी औरत को बताती नहीं है?"[2]

इस कहानी में तीन नारी पात्रों का चित्रण है यह कहानी तीन बहनों सकीना, शाहीन और हुमैरा की है। सकीना इंटर के बाद आगे पढ़ना चाहती थी, लेकिन उसकी दादी उसकी पढ़ाई के खिलाफ थी। जिसके कारण सकीना घर में कैद सी हो गई। सकीना की जिंदगी को बदतर बनाने वाली उसकी दादी है वो हमेशा कहती है, "याद रखो, नस्ल बेटों से चलती है, यह लड़कियाँ तो मुँडेर पर बैठी गौरैया हैं, अपने बसेरे को उड़ जाएँगी, पलटकर नहीं आएँगी। बुरे वक्त का साथ लड़का होता है चाहे काना ही क्यों न हो।"[3] पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों के अधिकार कहीं न कहीं दम तोड़ते दिखाई दिखते हैं। इस कहानी में सकीना की दादी और भाई जावेद उसी पुरुष प्रधान समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं जो अपने ही घर की महिलाओं को उनके अधिकारों के साथ जीने नहीं देते। इसमें लेखिका ने तीनों बहनों के द्वारा उनकी इच्छाओं, प्रगति की कामना तथा शिक्षा के प्रति उनका लगाव इत्यादि का बखूबी चित्रण किया है।

दिलआरा कहानी की नायिका सुदृढ़, स्वतंत्र और खुले विचार रखनेवाली सशक्त महिला हैं। दिलआरा अपने हक के लिए लड़ने वाली स्वाभिमानी महिला है। लेखिका ने इस कहानी में साजिदा, दिलआरा, सुनंदा जैसे पात्रों के माध्यम से हमें यह अनुभव करवाया है कि हमारे समाज में स्त्री का स्वतंत्र होकर जीना मुश्किल तो है किंतु नामुमकिन नहीं है। दिलआरा एक बड़े परिवार की लड़की है, जो जमाल से प्रेम करती है। वह दिलआरा को शादी का वचन भी देता है। लेकिन जब दिलआरा के घरवाले, दिलआरा की शादी और कहीं करने की सोचते हैं, तब जमाल, "मैं उसे कहाँ रखूँगा शादी के बाद? ... मैंने इस तरह का कोई वायदा दिलआरा से नहीं किया था। ... मुझे बहनाई के अहसानों का बदला चुकाना है और मुझे पता है कि मेरी सारी जिंदगी कर्ज उतारते गुजर जाएगी...।"[4] कहकर शादी से इनकार कर देता है। इस कहानी में मुस्लिम समुदाय में वर्षों से चली आ रही पुरुष प्रधानता, कट्टरता और शरीयत कानूनों का नाजायज फायदा उठाने वाले समाज में अपनी अस्तित्व बनाए रखने के लिये संघर्षरत स्त्रियों का चित्रण है।

नासिरा शर्मा की कहानी 'ततईया' नारी जीवन की पीड़ा, संघर्ष और समाज में उसके स्थान को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती है। इस कहानी में स्त्री के दमन, उसकी इच्छाओं के दमन, और पारिवारिक तथा सामाजिक बंधनों में जकड़े होने की व्यथा को गहराई से उकेरा गया है। कहानी में स्त्री की मानसिक स्थिति और उसकी पीड़ा को 'ततईया' के प्रतीक के माध्यम से दर्शाया गया है। 'ततईया' को एक रूपक के रूप में प्रयोग किया गया है, जो नायिका की व्यथा और उसके भीतर की चुभन को दर्शाता है। ततईया का काटना उस दर्द को दिखाता है जो स्त्री अपने जीवन में लगातार झेलती है। 'ततईया' सिर्फ एक कहानी नहीं, बल्कि एक स्त्री की अव्यक्त वेदना और सामाजिक व्यवस्था पर गहरी टिप्पणी है।

'इनसानी नस्ल' कहानी संग्रह की 'अग्निपरीक्षा' यह कहानी कम्मों की है उसका पति अपाहिज रहता है।

कम्मों की जमीन के पास नया रेलवे का स्टेशन बनने के कारण उसकी जमीन की कीमत बढ़ जाती है और उसे हड़पने के लिए सारा खेल रचा जाता है। 'अग्निपरीक्षा' नारी जीवन के संघर्ष, समाज में उसकी स्थिति और उसकी मानसिक व भावनात्मक पीड़ा को प्रभावी ढ़ंग से प्रस्तुत करती है। इस कहानी में स्त्री के साथ होने वाला अन्याय, उसके अस्तित्व की पहचान, और सामाजिक मानदंडों के प्रति उसके विद्रोह को दर्शाया गया है। कहानी का शीर्षक 'अग्निपरीक्षा' स्वयं इस बात का प्रतीक है कि स्त्रियों को हर मोड़ पर परीक्षा देनी पड़ती है, चाहे वह व्यक्तिगत जीवन हो या सामाजिक प्रतिष्ठा। यह कहानी बताती है कि स्त्री को बार–बार अग्निपरीक्षा से गुजरना पड़ता है, लेकिन यह भी दर्शाती है कि अब वह इन बेड़ियों को तोड़ने की क्षमता रखती है।

नासिरा शर्मा की कहानियों में नारी केवल सहनशील और परंपरागत भूमिकाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह अपने आत्म–सम्मान और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती है। उनकी कहानियां नारी जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ते कदमों को प्रभावी रूप से प्रस्तुत करती है। वे समाज में स्त्री की बदलती भूमिका और उसकी अस्मिता को सशक्त रूप से चित्रित करती है, जिससे उनकी कहानियां समकालीन हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

संदर्भ सूची :-

1. शर्मा, नासिरा, खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1988, पृ. क्रमांक 18
2. शर्मा, नासिरा, खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1988, पृ. क्रमांक 8
3. शर्मा, नासिरा, खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1988, पृ. क्रमांक 67
4. शर्मा, नासिरा, खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1988, पृ. क्रमांक 95

rk3989205@gmail.com
Mobile 9137510965

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 39–44

Revamping Vocational Educational Curriculum Fulfilling 21st Century Demand of Automotive Industry : A Case Study

Dr. Anil Kumar, Principal
District Institute of Education & Training (NE) Bhola Nath Nagar, Delhi -110032
Dr. Sunil Kumar, Assistant Professor,
District Institute of Education & Training (NE) Bhola Nath Nagar, Delhi -110032
Mr. Sushil Kumar, Vocational Teacher
DOE, Delhi

Abstract :

The impacts of project-based learning in vocational education on developing 21st-century skills are assessed. This study covers recently five years of literature, we findings how important project-based learning is in preparing students for a dynamic technology-driven workforce, through improvements in capabilities such as learning and innovation, technology, and career skills. Addressing the lack of technology expertise and inadequate curriculum, project-based learning can create more successful learning strategies that meet business demands. Therefore project-based learning is a valuable approach to provide students with the skills needed for the ever-changing labour market. This paper aims to analyze the current automotive industry's required competencies and develop the automotive industry requirements for the automotive technology vocational education curriculum.

Key Words : Innovation, Technical Skills, Curriculum, Competency, Automotive Industry

Introduction :

With the fast-paced evolution of the automotive sector in the 21st century spurred by innovations like electric vehicles (EVs), self-governing technologies, and digital transformation vocational training needs to adapt to correspond with these changes. This necessitates a strategic plan or curriculum overhaul to satisfy present and upcoming industry requirements.

In the context of the expanding automotive industry, vocational education in automotive

technology is crucial for equipping future workers to fulfill its demands. There are several challenges related to digital technology in higher education vocational training. The automotive industry is characterized by high dynamism and ongoing substantial transformations as it adapts to technological advancements, environmental requirements, and consumer trends.

To ensure graduates are work-ready, the automotive technology vocational education curriculum must adapt to the evolving digital competency needs of the industry. Rapid development has led to a disconnect between skills taught in vocational institutions and the actual demands of the automotive sector. Key challenges include a limited understanding of current industry requirements. Therefore, it is essential to align the vocational education curriculum with industry needs and adjust evaluations accordingly.

This study will address and examine the automotive industry's current needs and determine their implications for developing vocational education curricula in automotive technology. By gaining a clearer insight into these industry needs, the aim is to adjust educational curricula accordingly, ensuring that graduates possess skills and knowledge pertinent to job market demands. This study will also explore the implications of these industry needs for automotive technology vocational education curricula. Additionally, it is necessary to analyze the driving and hindering factors involved in curriculum implementation thus far.

Literature Review :

The literature review focuses on skill development in the automotive industry, particularly as India is emerging and evolving into a high-capacity manufacturing sector within the global automotive market. The automotive sector in India is recognized as a mass manufacturing industry that has established itself as a leading sector in terms of employing a skilled workforce. However, it faces emerging challenges such as a high turnover of manpower and a lack of skill training, which results in inconsistencies in quality. The automotive cluster has now raised this issue : how can we confront the challenges to overcome the problem?

The educated and technically qualified youth is a national asset, but structured upskilling is necessary to enhance overall manufacturing in technology and related areas such as quality, process engineering, and safety. This can also aid in identifying the need to bridge the skill gap in the automotive sector. Developing skills is crucial for boosting productivity and decreasing customer complaints, contributing to sustainable development and inclusive growth. The skill gap is the primary concern for companies, and to address this, they are creating training programs and developing curricula tailored to students' future needs. Training is a structured enhancement of the knowledge, skills, and attitudes

that an individual needs to improve their vocational development.

The vocational curriculum aimed at technological advancement and implementation within the industry is essential for development and industry alignment. Auto sectors are channeling investments into the development of internal skills, focusing on vocational education curricula that align with the industry's automotive demands. The automotive sector in India, which contributes to the economy and employment, is experiencing rapid technological and structural transformations. As electric vehicles have progressed, so too have autonomous technology and sustainable practices. Nonetheless, the vocational education system frequently has difficulty aligning with the requirements of industry, which results in skill gaps. This study allows us to pinpoint the issue of critical skill deficiencies in the Indian automotive sector and proposes curriculum adjustments for vocational programs to effectively bridge these gaps.

The skill gaps in the Indian automotive sector pose a considerable challenge to its growth and global competitiveness. These gaps can be filled with industry-aligned vocational curricula, enhancing employability and productivity necessary for educators and the automotive industry to develop a skilled workforce for the future.

Objective of the research :

This research is highly urgent, as the success indicators of the automotive technology vocational education curriculum are largely determined by the effectiveness of partnership programs with industry. When the implementation is executed properly and accurately, the goals will be met: producing value-added goods and services, enhancing industrial income sources, and fostering greater collaboration with related industries or business entities. This research aims to achieve the following objectives :

- Assessing the skills required by the automotive sector within Automotive Technology Vocational Education.
- Examining the effects of the automotive industry's requirements on the curriculum for Automotive Technology Vocational Education.
- Examining the factors that support and hinder partnership programs in the Automotive Technology Study Program.

Methodology :

The case study research design focuses on the Vocational Educational Curriculum aimed at meeting the 21st-century demands of the automotive industry. This research is illustrated with a flow diagram below.

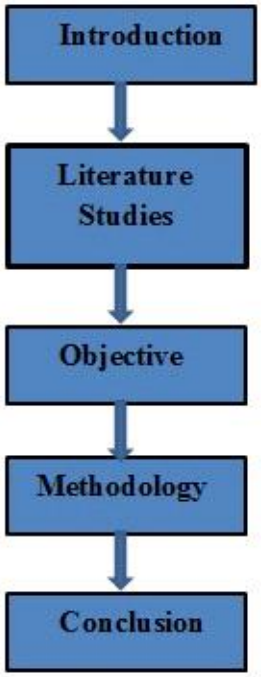

Fig.: Research Flow Diagram

Industry-Focused Skill Development : To ensure that vocational education meets the automotive industry's changing needs, the curriculum must prioritize the development of skills with a focus on the industry. This ensures that students possess the hands-on and technical know-how needed to thrive in today's automotive industry.

- Expert training in new automotive technologies (Electric vehicles, Autonomous Driving systems).
- Digital vehicle troubleshooting and fixing (Knowledge of electronic control units and their programming, expertise in predictive maintenance)
- Sustainable and Green Automotive practices (Training in renewable energy systems used in vehicles, including solar-powered components and the introduction of hydrogen cells and their integration into the automotive ecosystem)
- Manufacturing and Automation Skills (Knowledgeable about smart manufacturing methods such as Industry 4.0, additive manufacturing for component production, and practical experience with robotic painting systems).
- Expertise in software and digital tools (Competence in design and analysis with software such as Solidworks, ANSYS, and ABAQUS, familiarity with Python, C++, and MATLAB for automotive applications).
- Worldwide benchmark (Skills for road vehicle safety standards and awareness of emission norms).

Skill Gap Analysis in the Curriculum of Automotive Industry : The curriculum that is delivered is intended to instill skills in trainees for employment in the automotive industry. The table shows the delivery of benchmarked skills identified for the role of automotive service operator from the auto service and maintenance program curriculum.

Table : Analysis of skill gaps as per benchmarked skills in the service and maintenance program

S.No.	Benchmarked skills for auto service and maintenance program	MET	UNMET	PARTIALLY MET
	General Skills			
1	Basic Literacy	√		
2	Work ethic			√
3	Observation		√	
4	Analyzing and Reasoning		√	
5	Technical Skill			√
6	Digital Skill			√
7	Verbal Communication	√		
	Job Specific Skills			
8	Diagnostic skills		√	
9	Proficiency with hand and power tools	√		
10	Knowledge of various engine systems (diesel, gasoline hybrid, and electric)			√
11	Electrical and electronic system troubleshooting		√	
12	Preventative maintenance		√	
13	Fabrication skills		√	
14	Knowledge of vehicle features and specification	√		
15	Customer service and interpersonal skills			√

Conclusion :

This study shows that the required competencies in the automotive industry include both technical and managerial skills, necessitating a curriculum tailored to industry needs. It is essential to overhaul vocational education in the automotive sector as a strategic step for technology and sustainability preparedness. Considering the development of integrated technology and the promotion of industry collaboration and lifelong learning, vocational programs can create skilled professionals prepared to advance the automotive industry in the 21st century. It concentrates on specialized vocational skills programs designed to keep pace with ongoing developments, in which students play a role in innovation and sustainability within the automotive sector.

References :-

1. www.auto.economictimes.indiatimes.com, www.aicte-india.org
2. Mohammed Omar, Thomas R. Kurfess, Automotive engineering curriculum development: a case study for Clemson University. Journal of intelligent manufacturing, October 20111, doi: 10.1007/s10845-009-0329-z
3. Gupta, S & Jain S.K. A literature review of lean manufacturing, International Journal of Management Science 8(5)241-250, 2013.
4. National Policy of Skill Development and Entrepreneurship, 2015
5. Crouch, G.I., & Mazanov, J. (2017), Automotive Skills and Knowledge Requirements in the 21st Century, Journal of Vocational Education & Training, 69(4), 522-543.
6. European Centre for the development of vocational training(2018), Changing skills for a changing world. An analysis of the demand for skills up to 2030, Luxembourg publication office of the European Union.
7. Halderman, J.D.(2018), Automotive Technology: Principles, Diagnosis, and Service, Pearson.
8. Hardiyanta, R. A.P., Suyanto, W., Arifin, Z., Mujaki, A.,& Saputro, R. D. A(2021), Training needs analysis for management of facilities and infrastructure learning automotive engineering Journal of Physics: Conference Series, 1833(1). https://doi.org/10.1088/1742-6596/1833/1/012016.
9. Industry 4.0, impact on education and training in the Automotive sector(2019), European Training Foundation, Retrieved from https://www.etf.europa.eu/en/publications-andresources/publications/industry-4.0-impact-education-and-training-automotive-sector.
10. Kurniawan, R., Jaedun., A., Mutohhari, F., & Kasuma, W. M.(2021). The Absorption of vocational education Graduates in the Automotive sector in the Industrial world journal of Education Technology, 5(3), 482-490. https://doi.org/10.23887/jet.v5.
11. World Economic Forum(2023), The future of Jobs Report 2023, Geneva: World Economic Forum. https://www.weforum.org/publications/the-future-of-jobs-report2023/digest.

Email ; dr anildietdilshad@gmail.com Mobile No. 09891115415
Email : sktet2010@gmail.com Mobile No. 9540995251
Mobile No. 7376664864

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 45–47

सुधा अरोड़ा की कहानियों में अभिव्यक्त महानगरीय जीवन

Bhumika Kapoor
शोधार्थी, श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी महिला विश्वविद्यालय, मुंबई।

सुधा अरोड़ा समकालीन हिंदी साहित्य की प्रमुख लेखिकाओं में से एक हैं, उनकी कहानियाँ समाज के अलग–अलग पहलुओं को उजागर करती हैं। उनका लेखन विशेष रूप से महानगरीय जीवन के संघर्षों, उसके रिश्तों, और मानसिक स्थितियों के चारों ओर घूमता है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से आधुनिक समाज की विसंगतियों, मनुष्य की जटिलताओं और महानगरीय जीवन की सच्चाइयों को बड़े ही संवेदनशील तरीके से प्रस्तुत किया है।

सुधा अरोड़ा की कहानियों की पृष्ठभूमि कलकत्ता और मुंबई महानगर है। महानगरीय जीवन की अपनी विशेषताएँ होती हैं, जो किसी छोटे शहर या गाँव के मुकाबले पूरी तरह से भिन्न होती हैं। यह तेजी से चलने वाले लोगों के जीवन, स्वार्थ, अकेलापन, संबंधों का विघटन और आदर्शों के पतन को प्रमुखता से दर्शाता है। महानगरों में अक्सर व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत समस्याओं, कामकाजी जीवन और सामाजिक दबावों से जूझता हुआ दिखाई देता है। महानगर का प्रत्येक व्यक्ति अपने अंदर की मानवता को ढूँढने की कोशिश करता है। सुधा अरोड़ा ने अपनी कहानियों में इसी का वर्णन किया है।

सुधा अरोड़ा की कहानियाँ न केवल महानगरीय जीवन की दशा का वर्णन करती है, बल्कि उनके पात्रों के संघर्ष, निराशाएँ और सजीव संवेदनाओं को भी बखूबी व्यक्त करती हैं। सुधा अरोड़ा की कहानियों में महानगरीय जीवन का जो चित्रण मिलता है उसमें जीवन की कठिनाइयाँ और उसकी निराशाएँ वास्तविक रूप में व्यक्त होती हैं। इनके पात्रों को बाहरी दुनिया में सफलता की ओर बढ़ने की उम्मीदें होती हैं, लेकिन भीतर की दुनिया में अकेलापन और निराशा उन्हें घेर लेता है।

'महानगर की मैथिली' कहानी में ऐसी ही स्थिति का चित्रण किया है। इस कहानी में लेखिका ने वर्तमान महानगरीय जीवन की तकलीफों को दर्शाया है। कहानी के प्रमुख पात्र दिवाकर और चित्रा हैं। उनकी चार साल की बेटी है मैथिली। रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने के लिए दोनों ही नौकरी करते हैं। कहानी में चित्रा शिक्षिका है और दिवाकर एक ऑफिस में काम करते हैं। वे दोनों ही अपने अपने काम की वजह से मैथिली की ओर ठीक तरह से ध्यान नहीं दे पाते। उन्हें जब भी काम से जाना होता था वे मैथिली को ताराबाई के यहाँ छोड़ते थे। अपनी नौकरी के चलते वे दोनों भी एक–दूसरे को समय नहीं दे पाते थे और क्योंकि रविवार था इसलिए दोनों ने अंग्रेजी फिल्म देखने का प्रोग्राम बनाया था। वे मैथू को ताराबाई के यहाँ छोड़ना चाहते थे लेकिन मैथू छुट्टी का दिन अपने माता–पिता के साथ गुजारना चाहती थी। इसलिए वह उन दोनों से नाराज होती है तो वे

उसे कहते हैं, हमें चर्चगेट के एक अस्पताल में बीमार आंटी को देखने जाना है। मैथू को ताराबाई के वहां छोड़कर वे फिल्म देखने चले जाते हैं, शाम को आते समय उन्हें देर हो जाती है। जब वे लौटते हैं, तब मैथू बुखार में तप रही थी। रातभर उसका बुखार ठीक नहीं हुआ था। दूसरे दिन दोनों को भी काम पर जाना था। रात में दोनों भी निश्चय नहीं कर पाए कि मैथू के पास कल कौन रूकेगा। चित्रा की पाठशाला में परीक्षा है तो दिवाकर कहता कि उसके ऑफिस में इंस्पेक्शन है। ये सब मैथिली सुन रही थी और वह खुदको अकेला महसूस करती हुई कहती है कि, "हम ताराबाई के घर जाएँगे तुम्हारे साथ" और पलंग से उतरती है और मैथू बेहोश हो जाती है। महानगर की जिंदगी में अपनी बाहरी जरूरतें पूरी करते करते चित्रा और दिवाकर अपने रिश्तों में संतुलन नहीं बना पाते।

'तेरहवें माले से जिंदगी' में भारत की वित्तीय राजधानी मुंबई का वर्णन है। यह दो विपरीत छोरों के जीवन की खोज करता है, एक ओर मध्यवर्गीय वैभव और चालाकी है, और दूसरी ओर गरीबी में डूबा जीवन है, जो इस मध्यवर्ग से अपनी आजीविका संभालता है। दोनों एक–दूसरे के परजीवी हैं, एक–दूसरे की मजबूरियों के अनुसार ढलते हैं। सुधाजी मुंबई में नौकरानियों की कमी का सामना कर रही एक मध्यवर्गीय महिला के चरित्र और लक्षणों का संकेत देती हैं, जो एक निश्चित स्थिति और दबाव के तहत उसे संवेदनहीनता और क्रूरता की कगार पर ले जाती है। कहानी के अंतिम दृश्य में, हम समुद्र तट पर मोर्चा देखते हैं। वहाँ भगदड़ मच गई है और झुग्गियाँ ध्वस्त की जा रही हैं। लोग पुलिस की लाठी से भाग रहे हैं, और एक मध्यवर्गीय परिवार फर्श पर खुशी मना रहा है कि इन ध्वस्त घरों से एक महिला जल्द ही उनके दरवाजे पर काम माँगने आएगी और वह उसे बहुत 'सस्ते वेतन' पर रख लेगें।

"डेसर्ट फोबिया उर्फ समुद्र में रेगिस्तान" कहानी में अकेलापन अपने सबसे नाजुक चरण में है जहाँ रिश्ते, संबंध, प्रेम, मातृत्व, विवाह आदि का अर्थ खो चुका है। यह पाठक के मन में एक अकेली महिला और एक महानगर में उसके सामाजिक अलगाव के अविस्मरणीय अनुभव की तरह प्रवेश करता है। उसका जीवन पूरी तरह से वीरान हो गया है। उसके सामने लहराता हुआ समुद्र को भी एक रेगिस्तान की तरह लगता है। कहीं न कहीं, यह महानगरीय जीवन की एक सच्ची झलक है जहाँ लोग रिश्तों की तुलना में भौतिक वस्तुओं को अधिक महत्व देते हैं।

"करवाचौथी औरत" कहानी मध्य तथा उच्च वर्ग की पढ़ी लिखी औरत की दयनीय स्थिति की कहानी है। इस कहानी में एक मध्यमवर्गीय स्त्री अपनी वास्तविकता की खोज कर रही है और अपने आप को अपने ही घर में महत्वहीन महसूस करती है। महानगर की चमक धमक में लोग मूल्यों को भूलते जा रहे हैं और संवेदनहीन होते जा रहे हैं। उच्च वर्गीय परिवार में पारिवारिक सदस्यों से ज्यादा महत्त्व 'फ्लॉपी' कुली को दिया जा रहा है। सुधा अरोड़ा ने इस कटु सत्य का वर्णन अपनी कहानी में किया है।

सुधा अरोड़ा ने बहुत ही सरल, सजीव, और प्रभावी ढंग से महानगर के जीवन का प्रत्यक्ष वर्णन किया है। वे अपनी कहानियों में पात्रों के आंतरिक द्वंद्व को अच्छी तरह से चित्रित करती हैं। उनके लेखन में पात्रों की मानसिक स्थिति और जीवन की कठिनाइयों को प्रभावी तरीके से दर्शाया जाता है। सुधा अरोड़ा अपने पात्रों के माध्यम से हमें यह समझने का अवसर देती हैं कि महानगरों में रहते हुए कैसे लोग अपनी मानवीय संवेदनाओं से दूर होते जा रहे हैं। उनकी कहानियाँ बहुत ही वास्तविक होती हैं, उनमें जीवन के कड़वे पहलुओं का चित्रण

किया जाता है। वे हमें समाज की सच्चाई से रूबरू कराती हैं और यह दिखाती हैं कि भले ही महानगरों में मनुष्य का बाहरी जीवन खुशहाल दिखे, लेकिन अंदर से उसके जीवन में एक गहरी खामोशी है और उसके मन में अकेलापन समाया हुआ होता है। उनके पात्र सामाजिक और पेशेवर जीवन के बीच संतुलन बनाने की कोशिश करते हैं, लेकिन कभी–कभी यह संतुलन टूट जाता है और वे अपनी पहचान और अस्तित्व को लेकर उलझन में पड़ जाते हैं। उनके महानगरीय पात्र इस महानगर की भीड़ में भी हमेशा खुदको अकेला महसूस करते हैं, भले ही वह कितनी भी बड़ी इमारत में क्यों न रहते हो। वे रिश्तों के खोने के डर से जूझते है।

सुधा अरोड़ा की कहानियाँ महानगरीय जीवन के उन अज्ञात पहलुओं को उजागर करती हैं जिन्हें समाज अक्सर नजरअंदाज करता है। उनके पात्रों के जीवन और संघर्ष हमारे समाज की वास्तविकता को दर्शाते हैं। उनकी कहानियों के माध्यम से यह साबित होता है कि भले ही कोई व्यक्ति महानगरों में सफल हो, वे आंतरिक रूप से अकेले और संघर्षरत होते हैं। सुधा अरोड़ा की लेखनी इस बात का प्रमाण है कि हमारे चारों ओर की दुनिया में, हमारे बीच कई छिपे हुए पहलू हैं जिन्हें समझने और महसूस करने की आवश्यकता है। महानगरीय जीवन का चित्रण सुधा अरोड़ा की कहानियों में एक महत्वपूर्ण विषय है। उनकी कहानियाँ शहरी जीवन की विविधता, जटिलता और चुनौतियों को उजागर करती हैं।

संदर्भ सूची :-

1. अरोड़ा, सुधा, अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी, साहित्य भण्डार, इलाहाबाद–2014, पृ. 24
2. अरोड़ा, सुधा, एक औरत : तीन बटा चार, बोधि प्रकाशन, जयपुर–2011

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 48–52

सोशल मीडिया का हमारे जीवन पर प्रभाव

नीलम पाटीदार
सहायक प्राध्यापक, इतिहास, मां नर्मदा शासकीय महाविद्यालय, सोण्डवा, जिला–अलीराजपुर (म.प्र.)

शोध सार :–

सोशल मीडिया संचार का एक इंटरनेट–आधारित रूप है। विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स उपयोगकर्ताओं को बातचीत करने, जानकारी साझा करने और वेब सामग्री बनाने की अनुमति देते है। वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र का एक अहम पहलू है। इस अधिकार के उपयोग के लिये सोशल मीडिया ने नागरिकों को अवसर दिया है। सोशल मीडिया के माध्यम से समाज में सकारात्मक बदलाव लाया जा सकता है। लेकिन वर्तमान में सोशल मीडिया अपने नकारात्मक प्रभावों के लिए के लिये ज्यादा चर्चा में रहता है।

शब्द संकेत :– सोशल मीडिया, सूचना प्रौद्योगिकी, अभिव्यक्ति, ब्रेन रॉट, एल्गोरिथम।

सोशल मीडिया का अर्थ :–

सोशल मीडिया साइट्स इंटरनेट का एक अभिन्न अंग है जिनका दुनिया में एक अरब से अधिक लोगों द्वारा उपयोग किया जाता है। सोशल मीडिया एक ऑनलाइन मंच है जो उपयोगकर्ता को एक सार्वजनिक प्रोफाइल बनाने एवं वेबसाइट पर अन्य उपयोगकर्ताओं के साथ सहभागिता करने की अनुमति देता है। इसका उपयोग विचारों को साझा करने तथा परिचित या अनजान लोगों से बात करने में किया जा सकता है। उदाहरण दृ यूट्यूब, फेसबुक, ट्विटर, इन्स्टाग्राम आदि। यह पूरी प्रक्रिया सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित होती है, जहाँ विभिन्न प्रकार के सॉफ्टवेयर का उपयोग किया जाता है।

सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव :–

सोशल मीडिया दुनिया भर के लोगों से जुड़ने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है और इसने विश्व में संचार को नया आयाम दिया है। सोशल मीडिया उन लोगों की आवाज बन सकता है जो समाज की मुख्य धारा से अलग हैं और जिनकी आवाज को दबाया जाता रहा है। सोशल मीडिया के माध्यम से लोग अपने विचारों को एक–दूसरे के साथ साझा कर एक नई बौद्धिक दुनिया का निर्माण कर रहे हैं। कई शोधों में सामने आया है कि दुनिया भर में अधिकांश लोग रोजमर्रा की सूचनाएँ सोशल मीडिया के माध्यम से ही प्राप्त करते हैं। वर्तमान में सोशल मीडिया कई व्यवसायियों के लिये व्यवसाय के एक अच्छे साधन के रूप में कार्य कर रहा है। सोशल मीडिया के साथ ही कई प्रकार के रोजगार भी पैदा हुए हैं। वर्तमान में आम नागरिकों के बीच जागरूकता फैलाने के लिये सोशल मीडिया का प्रयोग काफी व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। कहीं भी लोकतांत्रिक मूल्य तभी विकसित हो सकते हैं जब लोगों के पास अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हो। दुनिया भर में सोशल मीडिया लोगों के लिये सरकार के

कामकाज में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने एवं आवाज उठाने के लिये एक बेहतर प्लेटफॉर्म बनकर उभरा है। सोशल मीडिया विभिन्न प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से डिजिटल लोकतंत्र की अवधारणा को मजबूत करता है।

सोशल मीडिया का मस्तिष्क पर प्रभाव :-

सोशल मीडिया का अधिक उपयोग मस्तिष्क को कई तरह से प्रभावित करता है। यह किसी भी काम में हमारी ध्यान लगाने की अवधि तथा याददाश्त को कम करता है। सोशल मीडिया का इस्तेमाल हमारे मस्तिष्क में डोपामाइन के स्राव को ट्रिगर कर सकता हैं। डोपामाइन को हैप्पी हार्मोन भी कहा जाता है। यह खुशी की भावनाओं को व्यवहार से जोड़ता है। इसका स्तर बढ़ने पर अच्छा महसूस होता है। उदाहरण के लिए सोशल मीडिया पर हमारी तस्वीरों पर लाइक और कमेंट प्राप्त करना या ऐसी सामग्री पर क्लिक करना जो हमें उत्साहित करती है, डोपामाइन के स्राव को बढ़ावा दे सकती है। हर बार जब सोशल मीडिया का उपयोग डोपामाइन स्रावित करता है, तो अच्छा महसूस होता है और सोशल मीडिया पर अधिक समय बिताने की इच्छा पैदा होती है। जल्द ही इसकी लत लग सकती है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म ऐसे डिजाइन किया गया है कि उपयोगकर्ता इस पर अधिक समय बिताए। क्योंकि जितना अधिक समय बिताएंगे उतने अधिक विज्ञापन देखेंगे जिससे इन प्लेटफॉर्म्स के लिए पैसा बनता है। सोशल मीडिया सेवाएं उपयोगकर्ताओं की लत से लाभान्वित होती हैं, इसलिए वे उपयोगकर्ताओं को लंबे समय तक सोशल मीडिया पर व्यस्त रखने पर ध्यान केंद्रित करती हैं। लगभग सभी प्रमुख सोशल मीडिया साइट्स पर उपयोगकर्ताओं के लिए स्क्रॉल करने हेतु एक अंतहीन समाचार फीड होती है, जिसका अर्थ है कि उपयोगकर्ता आसानी से बिना सोचे–समझे घंटों तक स्क्रॉल कर सकते हैं। इन अंतहीन फीड्स के भीतर, एक कम्प्यूटर प्रोग्राम होता है जिसे एल्गोरिथम कहा जाता है, उपयोगकर्ता द्वारा पहले की गई देखे गए कंटेंट के आधार पर सामग्री प्रस्तुत करता है, ताकि उपयोगकर्ता लंबे समय तक इन साइट्स तथा एप पर बने रहें।

ब्रेन रॉट :-

हमारे आसपास कई लोग होते हैं जो इंस्टाग्राम रील्स या शॉर्ट वीडियो देखते हुए घंटों बर्बाद कर देते हैं और उन्हें इसका एहसास भी नहीं होता। ज्यादातर रील्स में ऐसा कंटेंट होता है जिसका कोई खास मतलब नहीं होता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी ने इस आदत को बयां करने वाले शब्द को 2024 का वर्ड ऑफ द ईयर चुना है। इसे ब्रेन रॉट कहा जाता है। यह शब्द सोशल मीडिया पर बेकार कंटेंट देखने के कारण दिमाग पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव को दर्शाता है। ब्रेन रॉट का इस्तेमाल इंटरनेट के आने से पहले, 1854 में हेनरी डेविड थॉरो ने अपनी किताब वाल्डेन में किया था। उन्होंने समाज की उस प्रवृत्ति पर सवाल उठाया था, जो जटिल विचारों को कम अहमियत देती है। उन्होंने लिखा, 'इंग्लैंड आलू सड़ने से बचाने की कोशिश कर रहा है, लेकिन ब्रेन रॉट को ठीक करने की कोशिश क्यों क्यों नहीं हो रही है?'

सोशल मीडिया के दुष्प्रभाव :-

सोशल मीडिया की लत के मानसिक प्रभाव के साथ ही बुरे शारीरिक परिणाम भी हो सकते हैं। कंप्यूटर डेस्क पर या अपने फोन पर स्क्रॉल करते समय हम अपने शरीर को किस तरह से रखते हैं, इससे हमारी रीढ़ और गर्दन को नुकसान पहुंचता है। घंटों तक सोशल मीडिया पर स्क्रॉल करने से शारिरीक निष्क्रियता के कारण दीर्घकालिक दर्द और गतिशीलता संबंधी समस्याएं हो सकती हैं। एक हालिया अध्ययन के अनुसार, जो लोग

सोशल मीडिया पर अधिक समय बिताते हैं, उनमें सी–रिएक्टिव प्रोटीन (सीआरपी) का स्तर अधिक होता है, जो दीर्घकालिक सूजन का जैविक सूचक है, जो गंभीर बीमारियों की भविष्यवाणी करता है। इन सीआरपी स्तरों को मधुमेह, हृदय संबंधी बीमारियों और कुछ कैंसर से जोड़ा गया है।

नींद और इंटरनेट उपयोग की समस्याएं एक–दूसरे से जुड़ी है। सोशल मीडिया के आदी लोगों को नींद न आने की समस्या होती है। कम नींद, लगातार गर्दन और पीठ दर्द, तथा उच्च सी–रिएक्टिव प्रोटीन स्तर के कारण संभावित गंभीर बीमारी की आशंका के कारण, सोशल मीडिया के आदी लोगों की प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हो सकती है।

सोशल मीडिया की लत के मानसिक और भावनात्मक प्रभाव :–

सोशल मीडिया के आदी लोगों के मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। शोध से पता चला है कि सोशल मीडिया स्मरण क्षमता को भी प्रभावित करता है। कई युवा वयस्कों के लिए जो सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग करते हैं, उन्हें वर्चुअल दुनिया वास्तविक दुनिया से अधिक महत्वपूर्ण लगाने लगती है। नशीले पदार्थों की तरह सोशल मीडिया की लत भी एकाकीपन पैदा कर सकती है और व्यक्ति परिवारजनों, मित्रों आदि के साथ संबंधों की उपेक्षा कर सकता है। सोशल मीडिया के आदी लोग स्वस्थ रिश्ते बनाए रखने के लिए संघर्ष कर सकते हैं, क्योंकि सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग के कारण वे वास्तविक जीवन की गतिविधियों से दूर वर्चुअल दुनिया में ही रहते हैं। ऑनलाइन दूसरों से अपनी तुलना करने के कारण अपने शरीर, रूप–रंग, कैरियर या जीवनशैली को लेकर आत्मसम्मान की कमी और असंतोष का अनुभव करते हैं। सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग और इंटरनेट की लत, विशेष रूप से युवा वर्ग में अवसाद और चिंता का स्तर का एक प्रमुख कारण है। कई बार व्यक्ति वास्तविक समस्याओं की चिंता से बचने के लिए अपना अधिकांश समय ऑनलाइन बिताते है। सोशल मीडिया की लत के कारण आत्म–अलगाव, शारीरिक गतिविधि की कमी और वास्तविकता का विरूपण अवसाद और चिंता को काफी हद तक बढ़ा सकता है। कुछ मामलों में उनके मन में खुद को नुकसान पहुंचाने या अपना जीवन समाप्त करने के विचार आने लगते हैं।

सोशल मीडिया और साइबर अपराध :–

सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग करने वाले अधिकांश लोग साइबर अपराध के खतरों से अनजान है। सोशल मीडिया साइबर–बुलिंग को बढ़ावा देता है। यह फेक न्यूज और हेट स्पीच फैलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सोशल मीडिया पर गोपनीयता की कमी होती है और कई बार आपका निजी डेटा चोरी होने का खतरा रहता है। साइबर अपराधों जैसे– हैकिंग और फिशिंग आदि का खतरा भी बढ़ जाता है। विभिन्न सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर लोग अपनी व्यक्तिगत जानकारियाँ साझा करते हैं, जिससे हैकर्स इन सोशल नेटवर्किंग एकाउंट्स को आसानी से हैक कर लेते हैं और फिर प्राप्त सूचना का दुरुपयोग करते हैं। लोगों को सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर हैकर्स ऑनलाइन धोखाधड़ी और ठगी का शिकार बनाते हैं। साइबर अपराधी विभिन्न ऑनलाइन गेम्स के माध्यम से बच्चों को भी अपराध करने के लिये प्रोत्साहित करते हैं।

सोशल मीडिया का दुरूपयोग :–

फेसबुक, ट्विटर समेत कई साइटों पर आपत्तिजनक सामग्रियों के मिलने की शिकायत की जाती रही है। इनमें ज्यादातर वह सामग्री थी जो धार्मिक भावनाओं और राष्ट्रीय प्रतीकों के अपमान का निषेध करने वाले

कानूनों का उल्लंघन कर रही थी। सोशल मीडिया के जरिये ऐतिहासिक तथ्यों को भी तोड़–मरोड़ कर पेश किया जा रहा है। न केवल ऐतिहासिक घटनाओं को अलग रूप में पेश करने की कोशिश हो रही है बल्कि आजादी के सूत्रधार रहे नेताओं के बारे में भी गलत जानकारी बड़े स्तर पर साझा की जा रही है। विश्व आर्थिक मंच की रिपोर्ट के अनुसार, दुनिया में सोशल मीडिया के माध्यम से गलत सूचनाओं का प्रसार कुछ प्रमुख उभरते जोखिमों में से एक है। यह न केवल देश की प्रगति में रुकावट है, बल्कि भविष्य में इसके खतरनाक परिणाम भी सामने आ सकते हैं। अतः आवश्यक है कि सरकार को इस विषय पर गंभीरता से विचार करते हुए इसे पूरी तरह रोकने का प्रयास करना चाहिये।

सोशल मीडिया और फेक न्यूज :-

झूठी खबरों से किसी व्यक्ति या संस्था की छवि को नुकसान पहुंचाने या लोगों को उसके खिलाफ भड़काने की कोशिश ही फेक न्यूज है। हमारे देश में फेक न्यूज फैलने के कारण ही कुछ कुछ लोगों को अपनी जान से हाथ भी धोना पड़ा है। फेक न्यूज के कारण चुनाव भी काफी प्रभावित होता है। सोशल मीडिया पर कई ऐसे कंटेंट वायरल किए जाते हैं जिसका सच से दूर–दूर तक कोई वास्ता नहीं है। आज हमारे आसपास हर दिन कई तरह के कंटेंट इन्टरनेट पर अनेकों माध्यम से उपलब्ध कराये जा रहे हैं लेकिन इसकी सत्यता क्या है किसी को नहीं पता। इसकी गहराई में जाने से पहले यह कई लोगों तक पहुँच चुका होता है। भारत में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म सूचना प्रौद्योगिकी (IT) अधिनियम, 2008 के दायरे में आते हैं। भारत में फेक न्यूज को रोकने के लिये कोई विशेष कानून नहीं है। आज देश में कई एजेंसियों ने फेक न्यूज का सच लोगों तक लाने के लिए काम कर रही है लेकिन यह काफी नहीं है क्योंकि इनकी पहुँच अभी व्यापक नहीं है जिसके कारण फेक न्यूज पर लगाम लग सके या लोगों तक तुरंत सच पहुंचे। बढ़ती फेक न्यूज के कारण सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स भी इस पर काम कर रहे हैं क्योंकि कई बार इनकी विश्वसनीयता पर भी सवाल उठे हैं जिस कारण व्हाट्सएप और फेसबुक ने फेक न्यूज को रोकने के लिए अपने फीचर में कई बदलाव भी किए हैं लेकिन इस पर अभी और काम करने की जरुरत है ताकि एक स्वच्छ वातावरण का निर्माण हो सके।

निष्कर्ष :-

सोशल मीडिया ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को नया आयाम दिया है, आज कोई भी व्यक्ति सोशल मीडिया के माध्यम से अपने विचार रख सकता है और उसे हजारों लोगों तक पहुँचा सकता है। सोशल मीडिया ने समाज के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति को भी समाज की मुख्य धारा से जुड़ने और खुलकर अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का अवसर दिया है। परंतु सोशल मीडिया के दुरुपयोग ने इसे एक खतरनाक उपकरण के रूप में भी स्थापित कर दिया है। भारत में नीति निर्माताओं के समक्ष सोशल मीडिया के दुरुपयोग को नियंत्रित करना एक बड़ी चुनौती बन चुकी है। अतः आवश्यक है कि निजता के अधिकार का उल्लंघन किये बिना सोशल मीडिया के दुरुपयोग को रोकने के लिये सभी पक्षों के साथ विचार–विमर्श कर नए विकल्पों की खोज की जाए, ताकि भविष्य में इसके संभावित दुष्प्रभावों से बचा जा सके।

सन्दर्भ :-

1. सुमन स्वर्ण, (2020), सोशल मीडिया, हार्पर कालिंस पब्लिकेशर्स।
2. https://www.addictionhelp.com/social-media-addiction/effects/

3. https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/are-social-media-platforms-the-arbiters-of-truth
4. https://www.aajtak.in/trending/story/what-is-brain-rot-understanding-oxfords-2024-word-of-the-year-tstf-dskc-2112606-2024-12-03
5. https://www.usf.edu/ucm/social-media/intro-social-media.aspx
6. https://www.socialmediamatters.in/fake-news-in-new-media

patidar.neelam@gmail.com
M. 9644143281

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 53–57

बिकास भट्टाचार्जी की आकृतियों का सौन्दर्यात्मक चित्रण

पंकज कुमार, शोध छात्र
डॉ. वन्दना तोमर, शोध पर्यवेक्षक, सहायक आचार्य
नन्दलाल बोस सुभारती कालेज ऑफ फाइन आर्ट्स एण्ड फैशन डिजाइन,
स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ।

कला कोई वस्तु नहीं है। यह एक मानसिक अवस्था है, जिसे कलानुभव, रसास्वादन, सौन्दर्यानुभूति अथवा कलात्मक आनन्दनुभूति आदि कुछ भी कह सकते हैं। यह कलाकृति के माध्यम से होने वाली अभिव्यंजना ही है। कृति 'कला' नहीं होती, 'कृति' में कला होती है जिस तक पहुँचने के लिए कृति के विभिन्न अवयवों अथवा पक्षों की विशेषताओं को अवगत कराना होता है।[1]

सरल और स्पष्ट स्वभाव के भट्टाचार्जी ने अपनी कलाकृतियों द्वारा समाज में व्याप्त कुप्रथाओं और विसंगितयों को उजागर करने की कोशिश की है। समय के सदुपयोग द्वारा उन्होंने अपनी रचना–शीलता से कलाकृतियों में अपने मनोभावों को स्पष्ट रूप में से चित्रित करने की कोशिश की है और इसमें वे सफल भी हुए हैं। विचार एवं गुण, उनकी कलाकृतियों में सदैव चिरस्थायी रहते हैं। उनकी कलाकृतियों में उच्च स्तरीय कलात्मकता का संकेत तथा प्रतीक के रूप में भाव समाहित रहता है। कलाकृतियों में सौन्दर्य की दृष्टि से भावों को उजागर करने पर उन्होंने विशेष बल दिया गया है। उनकी कलाकृतियों में सौन्दर्य का अवलोकन करने से पूर्व उनके द्वारा किए गए यथार्थ आकृतियों के अंकन पर दृष्टि डालेंगे।

बिकास भट्टाचार्जी की कला यात्रा आकृतिमूलक चित्रों से शुरू होती है, जिसमें उनके आस–पास का वातावरण, बंटवारे के बाद के हालात से प्रभावित सामाजिक परिदृश्य सदृश विषय दिखलाई पड़ते हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि प्रत्येक कलाकार सर्वप्रथम अपने आप को, तत्पश्चात् बाह्य जगत को कृतिबद्ध करता है। उसके अपने जीवन में अनेक उतार–चढ़ाव आते रहते हैं, वह उन सब से एक नई प्रेरणा लेता है। यही उतार–चढ़ाव उसके प्रेरणा स्रोत बनते हैं। ठीक इसी प्रकार अपने जीवनकाल के अनेकों उतार–चढ़ाव देख चुके बिकास भट्टाचार्जी ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों को सफलतापूर्वक अपने चित्रों में कई आयामों में दिखाया है, जिसके अंतर्गत उन्होंने यर्थाथवादी, अतियर्थाथवादी, फोटो यर्थाथवादी एवं अमूर्ततवादी चित्रकार के रूप में अपने कार्यों को प्रदर्शित किया है।

'ह्यूमन फेस एंड अर्बन स्पेस' उस तकनीकी प्रतिभा का प्रतिबिंब है जो भट्टाचार्जी के पास अपने छात्र दिनों के दौरान भी थी। एक बंगाल मास्टर, भट्टाचार्जी, जो शायद भारत के पहले आधुनिक यथार्थवादियों में से एक हैं, में तकनीकी ज्ञान को अतियथार्थवादी और अति–यथार्थवादी तत्वों के साथ संयोजित करने की दुर्लभ

क्षमता थी।

(चित्र, 1–4)

उनके रेखाचित्रों में एक जुनून है, जोश है– इसके लिए हमें उनके अंकन को बारीकी से देखना होगा कि भट्टाचार्जी, आंखों या होंठों के रंग को बदलने के लिए स्ट्रोक और पेस्टल का उपयोग कैसे करते हैं, ताकि तीव्रता और अवास्तविक उत्साह का तत्व पैदा किया जा सके। भट्टाचार्जी के कई चित्रों में मौजूद भाव, गुणवत्ता, प्रकाश और बनावट को नाटकीय रूप से बदलने की उनकी क्षमता को उजागर करती है। (चित्र,1–4) एक कला विशेषज्ञ के अनुसार–" भट्टाचार्जी के पास रोजमर्रा की वास्तविकता से जुड़े सांसारिक दृश्यों को एक ऐसे दायरे में ले जाने की प्रतिभा थी, जहां वे कभी–कभी सपनों से अप्रभेद्य होते थे और अधिक गहन वास्तविकता में रहते थे।"

निःसंदेह, उनके रेखाचित्रों में एक चमत्कारिक गुण है, जो उनके द्वारा बनाए गए कई पुरुषों और महिलाओं की आँखों के स्थान पर खघली जगहों अथवा सूक्ष्म चमक वाले रहस्यमयी काले गोले में हम देख सकते हैं।

जहां तक भट्टाचार्जी की आकृतियों के सौन्दर्यात्मक चित्रण की बात है, हम पाते हैं कि– "सौन्दर्य, मूलतः नेत्रों का विषय है, इसे सभी स्वीकार करते हैं। नेत्रों के माध्यम से सुख की अनुभूति देने वाला पदार्थ ही सुन्दर कहलाता है, अतः इन पदार्थो का वह विशिष्ट गुण अथवा स्वभाव, जो नेत्रों को सुखदायी हो, सुन्दर कहलाता है।''[2] महान दार्शनिक कीट्स ने भी कहा है–"सुन्दरता चाहे कैसी भी हो, हमेशा सुख और आनन्द प्रदान करने वाली होती है।"[3]

परन्तु कभी–कभी कुछ कृतियां ऐसी भी होती है जो न तो सुन्दर होती हैं और न ही हमारे नेत्रों को सुखद अहसास दिलाती हैं, अपितु वे हमें विचलित कर देती हैं और सुन्दरता से हटकर दूसरे पहलू पर भी सोचने पर मजबूर कर देती है। पर चित्रों में सौन्दर्य के अस्तित्व को हम नकार नहीं सकते है क्योंकि बाह्य रुप से सुन्दर न दिखने वाला चित्र भी दर्शक या समीक्षक को अपनी ओर आकर्षित कर ही लेता है। यही उस चित्र का सौन्दर्य है।[4] यही गुण और विशेषताएं हमें चित्रकार बिकास भट्टाचार्जी के चित्रों में दिखती हैं, जो सुन्दरता, असुन्दरता, नैतिकता और अनैतिकता आदि सभी पक्षों को अपने में समेटे हुए हैं। उनके चित्रों में सुन्दरता है तो असुन्दरता का भी समावेश है, नैतिकता का समावेश है तो अनैतिकता का भी समावेश है। कहीं करुणा है तो कहीं व्यंग का भी प्रयोग किया गया है। देखा जाये तो उनके चित्रों में इन सब बातों के अतिरिक्त समाज के प्रति एक सन्देश है, जिसको दर्शकों तक पहुँचाने का काम उनके चित्रों ने बखूबी किया है। उनके चित्रों के द्वारा हम समाज के

परिवर्तित पहलू को बड़ी ही सरलता से पहचान सकते हैं। उनके चित्रों के सन्देश को समझने के लिये चित्रों की गहराई में जाना पड़ता है, तब वह चित्र सही तरीके से दर्शक तक अपना सन्देश पहुँचा पाता है। अतः चित्रकार बिकास भट्टाचार्जी के चित्रों की मार्मिकता व गूढ़ संदेशों को आत्मसात करने के लिये उनके चित्रों में निहित सौन्दर्य को समझना आवश्यक है–

सौन्दर्य एवं नारी में परिपूरक सम्बन्ध है, ऐसा माना जाए तो गलत नहीं होगा, क्यूंकि प्रकृति ने नारी को ही सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बनाया है। यही कारण है कि बिकास भट्टाचार्जी ने नारी को अपने चित्रों में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उन्होंने नारी के भावुक रुप, सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति (चित्र–5) के साथ–साथ दुर्गा के रौद्र रूप को भी चित्रित किया है। (चित्र–6) इनके चित्रों में नारी, एक ओर जहाँ अपने रूप को, फूल जैसी कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति देती है तो वहीं दूसरी ओर समाज में पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर खड़ी दिखाई भी दिखाई देती है। जहाँ एक ओर वह प्रियसी के रूप में है तो वहीं दूसरी ओर उसे समाज में पनप रही बुराइयों के खिलाफ चित्कार (आक्रोश जताना) करती चित्रित की गई है। चित्रकार के अनुसार– "नारी इस सृष्टि का सबसे सुन्दर उपहार है, जिसे ईश्वर ने बहुत सोच समझ कर गढ़ा है। वह प्रियसी व माता बनकर प्रेम कर सकती है तो दुर्गा बन कर संहार भी कर सकती है।"[5] इस तरह से नारी स्वयं में सम्पूर्णता को प्राप्त करती है।

(चित्र–5)

(चित्र–6) दुर्गा

(चित्र–7)

कलाओं का अधिकांश भाग सुन्दर रूप से सम्बन्धित रहा है। इस सुन्दर रूप का श्रृंगार पक्ष से विशेष से सम्बन्ध है और श्रृंगार पक्ष का जीवन में व्यापक प्रभाव है। यही कारण है कि कलाकार सदैव से ही श्रृंगारपरक सौन्दर्य के अंकन में विशेष रूचि लेते रहे हैं। शारीरिक सौन्दर्य भी बिकास भट्टाचार्जी का एक लक्ष्य रहा है, अतः उन्होंने नग्न शरीर में विशेषतः नारी का अंकन प्रचुरता से किया है। (चित्र–7) यही अंकन अनैतिक माना जाता है।[6]

बिकास भट्टाचार्जी की जीवनी व उनके कार्यों का सूक्ष्म अध्ययन कर हम पाते हैं कि उनकी कृतियाँ एक नया इतिहास गढ़ती हैं। इसका पता उनकी अपनी डायरी में बंगाली भाषा में लिखे एक संस्मरण से चलता है। तदनुसार, उन्होनें कभी भी कोलकाता की सीमा को नहीं लांघा था, इस कारण उन्हें लगता था कि प्राचीन चित्रकारों की सौन्दर्यपरक आकृतियाँ अजन्ता की गुफाओं में ही देखी जा सकतीं हैं। उनका भ्रम तब टूटा, जब वह कोणार्क (उड़ीसा) घूमने गए, वहाँ रात्रि में उस निर्जन रहस्यमय परिवेश में उन्हें लगा कि कोणार्क की सभी पाषाण मूर्तियां सजीव हो गयी हैं, उन्हें ऐसा अनुभव हुआ जैसे इन मूर्तियों की अंग–भंगिमा को सजीव देख रहे हों। मूर्तियों की सजीवता को समझ पा रहे हों। यह सभी अतीत था, परन्तु यथार्थ जैसे ही लग रहा था। कुछ

दिनों बाद में शहरी बस में जाते वक्त उन्होंने वहाँ यूनिवर्सिटी की कई लड़कियों को बस में चढ़ते देखा। उनमें से एक लड़की की शारीरिक बनावट को देखकर उन्हें कोणार्क की उन पाषाण मूर्तियों सदृश ही लगा, जिसका सौन्दर्य उनकी स्मृति में संचित हो चुका था, जो उनके कतिपय चित्रों में सहज देख सकते हैं। इनमें 'शी इन द नाईट' (चित्र–8) में

(चित्र–8) 'शी इन द नाईट'

(चित्र–9) 'अन्टाईटल'

(चित्र–10) 'डैथलैस एण्टिक'

युवती की भाव भंगिमा पत्थरों पर उकेरी गयी आकृति की तरह है। इसी प्रकार अन्टाईटल (चित्र–9) में बनी युवती की केश सज्जा व आभूषणों की आकृति पाषाणों पर बनी आकृतियों की सदृश दिखती है। यह युवती दीवार की ओर मुँह कर के बैठी हुई है, युवती के केशों का जूड़ा बनाया गया है व गहनों को घुमावदार आकृति में सुन्दर तरीके से बनाया गया है। इसी प्रकार 'डैथलैस एण्टिक' (चित्र–10) में लेटी हुई आकृति पाषाण पत्थर की है, जो अलौकिक है।

अपने संघर्ष के दौरान बिकाश भट्टाचार्जी ने गौर किया कि स्वतंत्रता और विभाजन के बाद में सीमा पार से आए लोग भी कलकत्ता शहर में शामिल हुए, जिनमें शहर के पुराने लोगों को पूर्व की एक विरासत मिली थी जिसे वे पूर्ण करने में असमर्थ व परेशान थे। उत्तरार्द्ध में आने वाले शिक्षित अभिजात्य वर्ग की नई पीढ़ी ने पुराने शहर के सबसे दक्षिणी विस्तार में रहना पसंद किया, जो कि दक्षिणी उपनगर बल्लीगंज से सटे एक गाँव में तेजी से विकसित हो रहा था, जिसकी नई शहरी पहचान दक्षिण कलकत्ता थी, और जो उत्तरवासियों के लिए लगभग विपरीत संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता था, जिनमें ज्यादातर युवा महिलाओं की उदार जीवन शैली स्पष्ट थी। कोई भी युवा अविवाहित महिला, जो आकर्षक ढंग से अच्छी तरह से तैयार हो, नए फैशन के प्रति रुचि प्रदर्शित करती हो, लिपस्टिक और स्लीवलेस ब्लाउज पहने हो, पुरुषों के साथ व्यवहार में स्पष्ट हो, सार्वजनिक स्थानों पर पुरुष साथी के साथ स्वतंत्र रूप से घूमती हो, उसे सहज दक्षिणवासी या बल्लीगंज की महिला के रूप में पहचाना जा सकता था। यह सब उस समय हुआ जब उत्तर के भीड़–भाड़ वाले व्यावसायिक थिएटर और दक्षिण के उभरते फिल्म उद्योग की अभिनेत्रियों पर सामाजिक कलंक अभी तक नहीं लगा था।

यही कारण था कि बिकाश की लगभग 80 प्रतिशत कृतियों में महिलाएँ बार–बार केंद्रीय विषय रही हैं। इसके अलावा एक पारंपरिक समाज में महिलाएँ ही उसके नैतिक स्तर का मापदंड होती थीं। जब महिलाएँ सभ्य, शांत, अच्छे व्यवहार वाली, यौन रूप से मुखर न होने वाली और अपने पुरुष समकक्षों से अलग सामाजिक और नैतिक संहिता का पालन करने वाली होती थीं, तो यह उच्च आदर्श नारी कहलातीं थीं। बेशक, यह मध्यम वर्ग द्वारा ज्यादातर मूल्यवान और प्रचलित मानदंड था।

बिकाश ने अपने बढ़ते हुए वर्षों में अपने तत्काल शहरी परिवेश से जो दृश्य और बौद्धिक रूप से एकत्र किए, उनके सामाजिक और नैतिक महत्व के बारे में सहज जागरूकता ने न केवल यह तय करने में बहुत मदद की कि वह क्या बल्कि कैसे पेंट करने जा रहे थे। उनके नैतिक मूल्य, उनकी बौद्धिक और भावनात्मक संवेदनाएं, और उनके सौंदर्य संबंधी आदर्श शनैःशनैः इतने शानदार सामंजस्य में विकसित हुए कि उनका जीवन और उनकी कला, उनका लोकाचार और सौंदर्यशास्त्र, उनका सामाजिक और रचनात्मक स्व एकीकृत रूपरेखा की एक ही पहचान में फिट हो सकते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बिकास भट्टाचार्जी ने जिस प्रकार नारी आकृतियों का सौंदर्यात्मक चित्रण अपने चित्रफलक पर किया है, किसी अन्य चित्रकार ने नहीं किया। उनकी यही विशेषताएँ हैं, जो बिकाश भट्टाचार्यजी को बिकाश बनाती है।[7]

संदर्भ सूची :-

1. आनन्द, आशा : एस्थेटिक्स, ए जर्नल ऑफ आर्ट, जुलाई–दिस. 2010, पृ. सं.17
2. क्षोत्रिय, शुकदेव : कला विचार, संस्करण– 2001, पृ. सं. 54
3. वही, पृ. सं. 55
4. एचटीटीपीः//डब्लू डब्लू डब्लू. गूगल.काम/लाइफ स्टोरी ऑफ बिकास भट्टाचार्जी।
5. एचटीटीपीः//डब्लू डब्लू डब्लू. द सिटी रिव्यू.काम/एस10सिंड.एचटीएमएल.
6. अशोक–कला सौन्दर्य और समीक्षा शास्त्र, संस्करण–अष्टम्, 2010, पृ. सं. 107–108
7. जोशी, ज्योतिष– समकालीन कला, अंक– 25 (नवम्बर–2004–फरवरी–2005), पृ. सं.–33

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 58–62

दक्षिणी राजस्थान के जनजाति क्षेत्र के जन समुदाय पर वृक्षों एवं पौधों के सापेक्ष ज्योतिष एवं वास्तु के परस्पर प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेंद्र सेन, शोधार्थी,
डॉ अलकनंदा शर्मा, विभागाध्यक्ष,
ज्योतिष एवं वास्तु संस्थान, माणिक्यलाल वर्मा श्रमजीवी महाविद्यालय, उदयपुर।

शोध सारांश :–

सनातन धर्म में कर्म को मूल सिद्धांत माना गया है, जो व्यक्ति वेदांत के आधार पर धर्मों का पालन करता है उसका जीवन अनुशासन पूर्ण रहता है। हमारे कर्म हमारे भाग्य का निर्धारण करते हैं ओर इन कर्मों को प्रभावी बनाने के लिए ग्रहों और नक्षत्रों की स्थिति और गति प्रभावित करती है, प्रस्तुत शोध अध्ययन में ज्योतिष और वास्तु द्वारा व्यक्ति के ग्रहों को सकारात्मकता प्रदान करने की दिशा में कार्य किया गया जिसमें ज्योतिष एवं वास्तु के संदर्भ में जन समुदाय पर वृक्षों एवं पौधों की भूमिका पर कार्य किया गया। शोधार्थी ने उदयपुर जिले के जनजातीय क्षेत्र ऋषभदेव तहसील के निर्वासित 10 गांवों के जातकों पर अपना यह शोध कार्य किया, इसमें 10 जातक पर पौधों की पूजा करने पर होने वाले प्रभावों को जाना, 10 जातकों पर पौधे की जड़ धारण करने पर होने वाले प्रभावों को जाना साथ ही 10 जातकों पर अपने आवास स्थान पर पौधे लगाने पर होने वाले प्रभावों को जाना। अंत में इन 30 जातको पर एक सामान्य साक्षात्कार लेकर उनके ज्योतिषीय उपायों के अनुभवों को संकलित किया यह अनुभव सकारात्मकता में पाएँ गए। जातकों ने कहा कि उनके द्वारा अपनाए गए ज्योतिषी उपाय उनकी अपनी सामाजिक,आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के निवारण के लिए उपयुक्त थे।

प्रस्तावना :–

भारतीय दर्शन के अनुसार आत्मा अमर है इसका कभी नाश नहीं होता केवल यह केवल कर्मो के अनादि प्रवाह के कारण प्रयायों को बदल देती है। सनातन धर्म में कर्म को मूल सिद्धांत माना गया है। कर्म हमारे भाग्य का निर्धारण करते हैं, तो इनको सही तरीके से प्रभावी बनाने के लिए ग्रहों नक्षत्रों आदि की स्थिति और गति भी उन्हीं के अनुरूप बनती है, जिससे हमें उनका उचित फल मिलता है क्योंकि ग्रह हमारे कर्मों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनकी गति यह निर्धारित करती है कि कब, किस समय की ऊर्जा हमारे लिए लाभदायक है या हानिकारक। समय की एक निश्चित प्रवृत्ति होने के कारण एक कुशल ज्योतिष उसकी चाल को पहचानकर भूत, वर्तमान और

भविष्य में होने वाली घटनाओं का विश्लेषण करता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में ज्योतिष और वास्तु द्वारा व्यक्ति के ग्रहों को सकारात्मकता प्रदान करने की दिशा में ज्योतिष एवं वास्तु के संदर्भ में जन समुदाय पर वृक्षों एवं पौधों की भूमिका पर कार्य किया गया।

मानव प्रकृति से प्रभावित होता है और सदा प्रकृति को प्रभावित करता है। इसी प्राकृतिक वातावरण का मुख्य तत्व पौधे/वृक्ष वास्तु एवं ज्योतिष के क्षेत्र में व्यक्ति के कर्म भाग को प्रभावित करने में बहुत बड़ी भूमिका का निर्वाहन करते हैं।

सनातन संस्कृति में सदा की प्रकृति की पूजा की अवधारणा रही है और हमारे पूर्वज इनकी पूजा आराधना करते रहे हैं। प्रकृति पूजा के अंतर्गत पक्षियों और पौधों को संरक्षण किया जा रहा है। इन संरक्षण, पूजन, वंदन द्वारा इनमें ईश्वर के प्रतिनिधित्व का आभास होता है और ये पौधे और वृक्ष हमें अपनी समस्याओं से निजात दिलाते रहे हैं। इनका वैज्ञानिक प्रमाण ज्योतिष तथा वास्तु विज्ञान हमें करवातें हैं क्योंकि प्रत्येक वृक्ष/पौधे किसी न किसी देवता या ग्रह का प्रतिनिधित्व करता है और हम हमारे विपरीत ग्रहों को सकारात्मक बनाने के लिए इनकी वंदना, आराधना करते रहे हैं।

ज्योतिष और वास्तुशास्त्र के द्वारा हम ग्रह और नक्षत्रों कि सकारात्मकता को किस प्रकार में प्रेरित करने में प्रयासरत हो सकते हैं यह इस शोध का विषय रहा।

शोधार्थी ने यह जानने का प्रयास किया की पौध एवं वृक्ष द्वारा विभिन्न ग्रहों को सकारात्मकता कैसे प्राप्त की जा सकती है।

मनु ने प्रलय के बाद श्रद्धा नामक स्त्री के साथ हिमालय क्षेत्र में नया जीवन प्रारंभ किया तब उनकी संतानें मानव कहलाई और इसी मानव ने गुफा छोड़कर आवास बनाना प्रारंभ किया। यह वास्तु शास्त्र की ओर मानव का प्रथम कदम था।

वास्तुशास्त्र में मूल रूप से भवन निर्माण और नगर नियोजन के सिद्धांत है। भारत के वास्तु इतिहास के बारे में जो जानकारी उपलब्ध है उसे सात कालखंडों में प्रस्तुत किया गया है। यह ऐतिहासिक जानकारी ईसा से 5000 वर्ष पूर्व की है।

वास्तुविद्या के बारे में उल्लेख है कि यह ब्रह्मा से मुनियों के पास आई थी और कहते है कि पृथ्वी और आकाश को आतंकित करने वाला कोई अस्तूर पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ था उस असुर की विशालता से आतंकित होकर समस्त देवताओं ने नाराज होकर उस असुर का सिर नीचा करके भूमि में गाड़ दिया और स्वयं वहाँ खड़े रहे, जिससे स्थान पर वो देवता खड़े रहे उनके आधिपत्य क्षेत्र ब्रह्म कहलाया और उस असुर का नाम वास्तुपुरुष रखा तथा घोषणा की पृथ्वी पर यह पूज्य होंगे तभी निर्माण एवं आवास सफल होंगे।

वास्तु पुरुष का सर ईशान कोण में है, पैर नैऋत्य कोण में, दोनों कुहनियां क्रमशः अग्नि और वायु कोण में, उसका नाभी प्रदेश भूखंड के ब्रह्मस्थान के पास है और उसके ऊपर सभी देवता अवस्थित है और इसी के आधार पर निवास के ग्रह की गणना होती है और रहने वाले व्यक्ति पर ग्रह नक्षत्रों का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है यह देखा जाता है। इस प्रभाव को कम ज्यादा करने के लिए वृक्ष और पौधे किस प्रकार सहायक होते हैं यह शोध अध्ययन का विषय रहा।

वैध चार है ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इन चारों वेदों के उपवेद है। क्रमशः आर्युर्वेद, धनुर्वेद,

गन्धर्ववेद और स्थापत्यवेद।

ज्योतिष शब्द का योगीक अर्थ है गृह तथा नक्षत्रों से संबंध, लेकिन सामान्यतः यह फलित विद्या के रूप में मानी जाती है। भारतीय ज्योतिष को तीन स्कंधों में बांटा गया है सिद्धांत, संहिता और होरा।

वैदिक ज्योतिष शास्त्र के अनुसार ग्रहों का सम्बन्ध पेड़ पौधों से भी है क्योंकि यह जल तत्व के साथ साथ किसी ग्रह या देवता से संबंध रखते हैं। इनकी पूजा, अर्चना, धारणा के द्वारा संबंधित ग्रह, देवता, नक्षत्र की नकारात्मकता को दूर कर उसके सकारात्मक प्रभाव को प्राप्त किया जा सकता है और जीवन में सुख की प्राप्ति हो सकती है। प्राचीन ग्रंथों और भारतीय संस्कृति से हमेशा से ही पेड़ों के महत्त्व पर जोर दिया गया है। हम वनस्पति को अपने जीवन में किस तरह से शामिल कर सकते हैं जिससे वह हमारे लिए उपयोगी है इससे पेड़ पौधों की जड़ धारण करने, छाल रस के उपयोग से, पूजा करने से, पौधे लगाकर कई ग्रह दोषों को दूर किए जाते हैं। हर ग्रह के कुछ खास पेड़/पौधे होते हैं जिनकी जड़ धारण करने से, घर पर विशेष दिशा में पौधे लगाने से, विशेष वार, माह पूजा अर्चना करने से ग्रहों को बलशाली बनाने में प्रयुक्त होते।

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा जातक के ग्रह, नक्षत्रों की नकारात्मकता को दूर करने के लिये वृक्ष पौधों की जड़ धारण करना, पूजा करना, तथा आवास पर उचित दिशा में पौधे लगाने के व्यवहार विश्लेषण पर शोध कार्य गया और यही शोध विषय का क्षेत्र रहे।

शोध प्रश्न :-

1. क्या पौधे की पूजा करने पर ज्योतिष ग्रह के प्रभाव को अपने अनुकूल किया जा सकता है?
2. क्या घर पर उचित दिशा में पौधे लगाने से वास्तु ज्योतिष ग्रह को प्रभावी बनाया जा सकता है?
3. क्या वृक्ष की जड़ को धारण कर ज्योतिष ग्रह अनुकूलता प्राप्त की जा सकती है?

समस्या कथन :-

उपरोक्त व्यापक विश्लेषण इसके पश्चात् शोधार्थी के समक्ष यह समस्या उत्पन्न हुई ये समस्या मात्र शोध प्रबंधन की विवेचना मात्र नहीं है ,बल्कि उपरोक्त विषय के संबंध में विस्तृत ज्ञान के उच्चतम स्तर को ज्ञात करके कुछ सुझाव प्रतिपादित करना है जिसके द्वारा निम्न लिखित विषय पर अपना शोध अध्ययन किया –"दक्षिणी राजस्थान के जनजातीय क्षेत्र के जनसमुदाय पर वृक्षों एवं पौधों के सापेक्ष ज्योतिष एवं वास्तु के परस्पर प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन।"

शोध उद्देश्य :-

1. वृक्ष, पौधे की पूजा करने पर ज्योतिष सकारात्मकता प्राप्त करने का अध्ययन करना।
2. वृक्षों की जड़ धारण करने पर ज्योतिष सकारात्मकता प्राप्त करने का अध्ययन का वृक्ष।
3. वृक्ष व पौधे लगाकर वास्तु सकारात्मकता प्राप्त करने का अध्ययन करना।

शोध विधि :-

शोध में शोधार्थी द्वारा व्यावहारिक क्षेत्रीय अध्ययन के अंतर्गत अवलोकन एवं प्रमुख रूप से व्यक्ति अध्ययन विधि का प्रयोग किया गया जिसके अंतर्गत वार्तालाप के द्वारा विश्लेषण कर संश्लेषण परिणाम निकाले गए।

न्यादर्श :-

प्रस्तुत शोध में 10 गांवों के 30 जातकों को शामिल किया गया जो ज्योतिष एवं वास्तु के नकारात्मक

प्रभावों से ग्रसित थे। न्यादर्श का चुनाव सोद्देश्य विधि के द्वारा किया गया क्योंकि जातक के अपने जीवन में किसी न किसी समस्या से ग्रसित होना आवश्यक था और जिसका निवारण ज्योतिष उपाय द्वारा किया जा सके।

समस्या का परिसीमन :-

प्रस्तत शोध उदयपुर जिले के जनजातीय क्षेत्र ऋषभदेव तहसील के 10 गांवों तक सीमित रहा।

शोध निष्कर्ष :-

शोध कार्यो में जो जातकों के तीन विभाग किए गए थे पौधे की पूजा करने, पौधे या वृक्ष की जड़ धारण करनें ओर आवास पर उचित दिशा में पौधे लगाने के संदर्भ में जातकों ने जो उपाय किये उनके संदर्भ में यह निर्णय आय कि –

शोधार्थी द्वारा पौधे की पूजा करने के जो 10 प्रयोज्य लिए गए उससे पाया कि प्रयोज्य सुझाए गए ज्योतिष उपाय का एक निश्चित अवधि में सकारात्मक परिणाम रहा प्रयोज्य को अपनी समस्याओं से राहत हुई। प्रयोजन ने केले की पूजा की और अपने वैवाहिक बाधा से राहत प्राप्त करी, बरगद की पूजा करने पर मानसिक बिमारी का निवारण हुआ, गुलमोहर की पूजा से शारीरिक समस्याओं से छुटकारा मिला, शमी के पौधे की पूजा से जीवन के तनाव से मुक्ति हुई, केले की वृक्ष की पूजा से पेट व शारीरिक समस्याओं से निजात मिली, चंपा की पौधे की पूजा से दांपत्य जीवन में सरसता आई, पीपल के वृक्ष की पूजा से रोजगार में आसानी हुई, गुलमोहर के वृक्ष की पूजा से मंगल दोष का निवारण हुआ, कुषा के पौधे की पूजा से केतु दोष दूर हुआ ओर लाल चंदन के वृक्ष की पूजा से जातक का आत्मविश्वास मजबूत हुआ और सूर्य की अनुकूलता मिली।

शोधार्थी द्वारा पौधे/वृक्ष की जड़ धारण करने के जो प्रयोज्य लिये गयें उसमें पाया कि प्रयोज्य को सुझाए गए ज्योतिष उपाय का सकारात्मक परिणाम रहा और प्रयोज्य को अपनी गृह समस्याओं से राहत हुई।

बेल के वृक्ष की जड धारण रण करने से सूर्य की स्थिति मजबूत बनी, खिरनी की जड़ को धारण करने से मानसिक तनाव में राहत हुई,, खैर के वृक्ष की जड़ धारण करने से विवाह संबंधी बाधा दूर हुई, विधारा के वृक्ष की जड़ को धारण करने से तार्किक क्षमता में सुधार हुआ, केले की जड़ को धारण करने से स्वास्थ्य में सुधार हुआ, शमी के पौधे की जड़ धारण करने से नकारात्मक आदतों में सुधार आया, अपामार्ग के पौधे की जड़ धारण करने से निर्णय लेने में सुगमता हुई, धतूरे की जड़ को धारण करने से घर का वास्तुदोष नष्ट हुआ, अशोक के वृक्ष की जड़ धारण करने से गुरु ग्रह की अनुकूलता प्राप्त हुई, ओर गूलर के वृक्ष के जड धारण करने से दांपत्य जीवन में कलह कम हुआ।

शोधार्थी द्वारा पौधे लगाने के जो 10 प्रयोज्य लिए गए उसमें पाया कि प्रयोज्य को सुझाए गए ज्योतिष उपायों में लगभग 80 प्रतिशत सकारात्मक परिणाम रहा प्रयोज्यको को अपनी समस्याओं पर राहत हुई और ज्योतिष उपाय सफल रहे।

हरसिंगार का पौधा लगाने से जीवन में शांति और आर्थिक समस्याओं से राहत हुई, शमी का पौधा लगाने पर नकारात्मक आदतों से छुटकारा मिला, पीपल का पौधा लगाने का त्वचा संबंधी समस्याओं से राहत हुई, अपामार्ग का पौधा लगाने से मानसिक बिमारी ठीक हुई, अनार का पौधा लगाने से मंगल ग्रह की अनुकूलता मिली, तुलसी का पौधा लगाने से वास्तुदोष कम हुआ, बेल का पौधा लगाने से सूर्य ग्रह मजबूत हुआ और पितृदोष से मुक्ति मिली, लाजवंती का पौधा लगाने से आर्थिक समस्याओं से मुक्ति मिली, पलाश का पौधा लगाने से मानसिक

तनाव में राहत हुई और आंवले का पौधा लगाने से वैवाहिक जीवन की समस्याओं से राहत मिली।

उपसंहार :-

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा 30 जातकों द्वारा अपनायें ज्योतिष एवं वास्तु उपायों द्वारा अपने दैनिक एवं पारिवारिक जीवन की समस्याओं का निवारण पाया गया और यह देखा गया कि किरायों द्वारा जातक को की शारीरिक मानसिक, आर्थिक समस्याओं के निवारण में ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र कहाँ तक उपयोगी हो सकता है ज्योतिष के क्षेत्र में यह शोध एक अहम भूमिका का निर्वाह करेगा। भविष्य में आने वाली जातकों की समस्याओं के निवारण के लिए एक मजबूत पृष्ठभूमि प्रदान करेगा।

संदर्भ :-

1. मिस्र, मुकुलनन्द वल्लभ "अर्ध–मार्तण्ड" मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1983
2. भटटानारायणी, श्री "चमत्कार चिंतामणि" मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975
3. शास्त्री, नेमीचंद : "भारतीय ज्योतिष" भारतीय श्रमपीठ, नई दिल्ली, 2015
4. भद्रबाहु : "भद्रबाहू संहिता" भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2015
5. भृगु : " भृगुसंहिता" चौखंबा कृष्णदास अकादमी, 2016

ltai02091978@gmail.com

मो. 9414160551

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 63–66

भिवानी जनपद के साहित्यकार पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्यिक व सामाजिक योगदान

सरला चहल, शोधार्थी
डॉ. राजेंद्र सिंह, शोध निर्देशक एवं प्रोफेसर
हिंदी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक–124001

शोध आलेख सार :–

पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य समाज की सच्चाइयों से सामना करता है, चाहे वह ग्रामीण जीवन की कठिनाइयाँ हो, शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष हो, या फिर सामाजिक व्यवस्था की असमानताएँ। उन्होंने अपने काव्य, कहानी और निबंध के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानताओं और कुरीतियों को उजागर किया। उनके विचार और रचनाएँ आज भी साहित्यिक समुदाय में सम्मानित हैं तथा सामाजिक बदलाव, चेतना और जागरूकता का द्योतक हैं।

जीवन परिचय :–

पंडित माधव प्रसाद मिश्र का जन्म हरियाणा राज्य के भिवानी जिले के कुगड़ गांव में सन 1859 हुआ था। उनकी शिक्षा–दीक्षा प्रारंभिक जीवन में ही शुरू हो गई थी। उन्होंने संस्कृत, हिंदी और उर्दू भाषाओं में गहरी विद्वता प्राप्त की थी। वे प्रमुख हिंदी साहित्यकार और संस्कृतज्ञ थे। वे हिंदी साहित्य और भारतीय संस्कृति के प्रबल समर्थक रहे, और उनके योगदान ने साहित्य जगत में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। उनके काव्य, निबंध और सामाजिक चिंतन ने उन्हें साहित्य के क्षेत्र में विशेष पहचान दिलाई। वे अपने समय के समाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों पर विचार करते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में जागरूकता लाने का प्रयास करते थे। पंडित माधव प्रसाद मिश्र का जीवन शिक्षा, संस्कृति और साहित्य के प्रति उनके अटूट समर्पण का प्रतीक रहा। उनका निधन 1907 में हुआ, लेकिन उनकी रचनाएँ आज भी लोगों के दिलों में जीवित हैं।

प्रमुख रचनाएँ :–

पंडित माधव प्रसाद मिश्र की प्रमुख रचनाएँ उनके समाजिक चिंतन और संस्कृत में गहरी पकड़ को दर्शाती हैं। उनकी रचनाओं में समाज सुधार, भारतीय संस्कृति, और नैतिकता के विचार प्रमुख रूप से व्यक्त होते हैं। उनकी कुछ प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं :–

1. **समाज सुधार :–**

इस रचना में पंडित जी ने समाज में व्याप्त कुरीतियों और अंधविश्वासों पर प्रहार किया है। उन्होंने

भारतीय समाज के सुधार के लिए जागरूकता की आवश्यकता पर बल दिया।

2. नैतिकता :–

इस काव्यग्रंथ में पंडित जी ने नैतिक मूल्यों और आचरण की महत्ता को रेखांकित किया। उन्होंने यह बताया कि समाज में नैतिक आचरण से ही सशक्त और जागरूक समाज का निर्माण किया जा सकता है।

3. भारतीय संस्कृति :–

इस काव्य में उन्होंने भारतीय संस्कृति और परंपराओं की महिमा का वर्णन किया है। यह रचना भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी श्रद्धा और आदर्शों को व्यक्त करती है।

4. काव्य–विचार :–

इस काव्य–रचना में पंडित जी ने काव्य और साहित्य की गहरी समझ को व्यक्त किया। उन्होंने काव्य की शक्ति को समाज में जागरूकता फैलाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम माना।

पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्यिक दृष्टिकोण :–

पंडित माधव प्रसाद मिश्र हिंदी साहित्य के एक महत्वपूर्ण साहित्यकार थे, जिन्होंने अपनी रचनाओं में समाज की समस्याओं, सामाजिक असमानताओं और मानवता के विभिन्न पहलुओं पर गहरी दृष्टि डाली। उनका साहित्य सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों को लेकर लिखा गया, जिसमें उन्होंने अपने समय की वास्तविकताओं और मानव जीवन के संघर्षों को स्पष्ट रूप से उजागर किया। वे भारतीय समाज के भीतर व्याप्त कुरीतियों और असमानताओं के प्रति संवेदनशील थे, और उनकी रचनाओं में समाज की सच्चाईयों को दर्शाने का प्रयास किया गया। उनकी काव्य रचनाओं में भारतीय संस्कृति, नैतिकता, और समाज सुधार के विषय प्रमुख रहे। उनका लेखन भारतीय परंपरा और सामाजिक सुधार की दिशा में सकारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता था। उनके विचार और रचनाएँ आज भी साहित्यिक समुदाय में सम्मानित हैं।

पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य सामाजिक बदलाव, चेतना और जागरूकता का द्योतक है। उनके साहित्य में समाज के विभिन्न वर्गों, विशेषकर निम्न वर्ग, श्रमिक वर्ग और महिलाओं की समस्याओं का चित्रण मिलता है। उनकी रचनाओं में एक गहरी चिंता और संवेदना है जो समाज में व्याप्त असमानताओं, अंधविश्वास और शोषण के खिलाफ उठी है। मिश्र जी के लेखन में एक स्पष्ट सामाजिक दृष्टिकोण दिखाई देता है, जो उन्हें केवल एक लेखक नहीं, बल्कि एक समाज सुधारक के रूप में प्रस्तुत करता है। पं० माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य समाज की सच्चाइयों से सामना करता है, चाहे वह ग्रामीण जीवन की कठिनाइयाँ हो, शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष हो, या फिर सामाजिक व्यवस्था की असमानताएँ। उन्होंने अपने काव्य, कहानी और निबंध के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानताओं और कुरीतियों को उजागर किया।

सामाजिक मुद्दों पर मिश्र जी का दृष्टिकोण :–

पंडित माधव प्रसाद मिश्र ने अपने साहित्य में जिन सामाजिक मुद्दों को उठाया, वे आज भी प्रासंगिक हैं। उनके द्वारा वर्णित समस्याएँ और विचार न केवल उनके समय के समाज को प्रभावित करते थे, बल्कि वे आज भी हमारे समाज में देखी जाती हैं। उनके साहित्य में निम्नलिखित प्रमुख सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया गया :

1. सामाजिक असमानता :

पंडित माधव प्रसाद जी ने अपने लेखन में समाज में व्याप्त जातिवाद, वर्गभेद और आर्थिक असमानताओं की कड़ी आलोचना की। उनका मानना था कि समाज में हर व्यक्ति को समान अधिकार मिलने चाहिए, और उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से इस असमानता को दूर करने का संदेश दिया।

2. महिला सशक्तिकरण :

पंडित माधव प्रसाद मिश्र जी के साहित्य में महिलाओं की स्थिति को भी प्रमुखता से उठाया गया। उन्होंने महिलाओं के अधिकारों, उनके सम्मान और उनके उत्थान की आवश्यकता को समझा और इसे अपने लेखन का हिस्सा बनाया। उन्होंने स्त्री शिक्षा और स्त्री स्वतंत्रता के मुद्दे पर भी विचार किया।

3. धार्मिक अंधविश्वास :

पंडित जी ने धार्मिक अंधविश्वास और सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ भी अपने साहित्य में आवाज उठाई। उनका मानना था कि समाज में सुधार लाने के लिए धार्मिक रूढ़िवादिता और अंधविश्वासों से मुक्ति जरूरी है।

4. सामाजिक जागरूकता :

मिश्र जी का साहित्य समाज में जागरूकता फैलाने का कार्य करता था। वे चाहते थे कि लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हों और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझें।

पंडित माधव प्रसाद मिश्र, भिवानी जिले के प्रसिद्ध साहित्यकार, हिंदी साहित्य के एक महत्वपूर्ण स्तंभ थे। उन्होंने साहित्य, संस्कृत और समाज के क्षेत्र में गहरा योगदान दिया। उनका लेखन न केवल साहित्यिक दृष्टि से बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण से भी बहुत महत्वपूर्ण रहा है।

पंडित माधव प्रसाद मिश्र के साहित्य का समाज पर प्रभाव :-

पंडित माधव प्रसाद मिश्र के साहित्य ने समाज में गहरी छाप छोड़ी। उनकी रचनाओं ने न केवल पाठकों को सामाजिक समस्याओं पर सोचने के लिए प्रेरित किया, बल्कि उन्हें समाज में बदलाव लाने की दिशा भी दिखाई। उनके लेखन ने यह सिद्ध किया कि साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं होता, बल्कि यह एक शक्तिशाली माध्यम है, जिसके जरिए सामाजिक बदलाव संभव है। मिश्र जी की रचनाओं ने समाज को एक आईना दिखाया और उनके विचारों ने समाज सुधारक आंदोलनों को भी प्रेरित किया। उन्होंने साहित्य के माध्यम से लोगों को यह संदेश दिया कि हर व्यक्ति को समान अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए, और यह सामाजिक न्याय के बिना संभव नहीं है।

पंडित माधव प्रसाद मिश्र के साहित्य की सामाजिक समीक्षाओं से यह स्पष्ट होता है कि वे केवल एक लेखक नहीं, बल्कि एक समाज सुधारक थे। उनका लेखन आज भी सामाजिक जागरूकता का स्रोत है और समाज में सकारात्मक परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। पंडित जी ने यह भी माना कि साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज को जागरूक करने का एक शक्तिशाली औजार है। उनके अनुसार, साहित्य और शिक्षा के माध्यम से ही समाज में सकारात्मक बदलाव लाए जा सकते हैं।

निष्कर्ष :-

पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य भारतीय समाज की सच्चाईयों और समस्याओं को उभारने वाला साहित्य है। उन्होंने अपने लेखन में समाज की गहरी और गंभीर चिंताओं को व्यक्त किया और पाठकों को सोचने

के लिए मजबूर किया। उनका साहित्य समाज में सुधार और जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से प्रेरित था। उन्होंने न केवल साहित्यिक स्तर पर बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी योगदान दिया। उनके लेखन ने यह साबित कर दिया कि साहित्य समाज को प्रभावित करने का एक शक्तिशाली साधन हो सकता है। पंडित माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य और समाजिक दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है। उनकी रचनाएँ न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि सामाजिक जागरूकता और सुधार की दिशा में भी योगदान प्रदान करती हैं। उनके विचारों और रचनाओं ने न केवल हिंदी साहित्य को समृद्ध किया, बल्कि समाज को भी जागरूक और सशक्त किया।

संदर्भ :-

1. माधव प्रसाद मिश्र के साहित्यिक और सामाजिक दृष्टिकोण।
2. भारतीय समाज और हिंदी साहित्यरू माधव प्रसाद मिश्र का योगदान।
3. समाज सुधारक साहित्यकार : माधव प्रसाद मिश्र का साहित्य।

Email Id: sarlachahal5177@gmail.com

Mob: 7087626237

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 67–72

वैश्विक एकता : हिन्दू धर्म के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. दीपक कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास, एन.सी.डब्ल्यू.ई.बी., दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

ॐ सर्वेषां स्वस्तिर्भवतु। सर्वेषां शान्तिर्भवतु। सर्वेषां पूर्णंभवतु।
सर्वेषां मङ्गलंभवतु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॐ।।

भूमिका :–

वैश्विक एकता की अवधारणा एक ऐसे वैश्विक समाज की कल्पना करती है, जिसमें विभिन्न राष्ट्र, संस्कृतियाँ और लोग साझा हितों के आधार पर एकजुट होते हैं, और मतभेदों को दरकिनार करते हुए समृद्धि, शांति और सहानुभूति को बढ़ावा देते हैं। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत, वैश्विक समुदाय को जलवायु परिवर्तन, गरीबी, असमानता, युद्ध और पर्यावरणीय संकटों जैसे गंभीर मुद्दों का सामूहिक रूप से सामना करते है। इसके लिए एकजुटता, सहयोग और पारस्परिक सम्मान के सिद्धांतों का पालन आवश्यक है।

वैश्विक सहयोग वैश्विक एकता के प्रमुख तत्वों में से एक है। देशों और व्यक्तियों को संयुक्त प्रयासों के माध्यम से ऐसे सामूहिक समाधान खोजने होंगे जिनसे सभी को लाभ हो। वैश्विक एकता में आर्थिक मॉडल में भी बदलाव की आवश्यकता होगी। मौजूदा वैश्विक आर्थिक संरचना असमानताओं को बढ़ावा देती है, जबकि वैश्विक एकता में ऐसे मॉडल की आवश्यकता होगी जो समावेशिता, स्थिरता और सामाजिक कल्याण को प्राथमिकता दें। व्यापार नीतियाँ और कराधान प्रणालियाँ अल्पकालिक लाभ की बजाय दीर्घकालिक सामाजिक और पर्यावरणीय कल्याण को बढ़ावा देंगी।

पर्यावरणीय स्थिरता वैश्विक एकता के दृष्टिकोण का केंद्रीय पहलू होगा। जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और महासागर प्रदूषण जैसे मुद्दों को केवल एक देश अकेले हल नहीं कर सकता। इसके लिए वैश्विक स्तर पर सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होगी, जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का विस्तार और पर्यावरणीय प्रथाओं में सुधार।

हालाँकि, इस विचार को लागू करने में कई चुनौतियाँ भी हैं। सांस्कृतिक विविधता को बनाए रखते हुए एकता को सुनिश्चित करना, और राष्ट्रों के विभिन्न हितों के बीच संतुलन बनाना एक जटिल कार्य होगा। इसके अतिरिक्त, राजनीति और ऐतिहासिक विवाद भी वैश्विक सहयोग के रास्ते में बाधा डाल सकते हैं। फिर भी, वैश्विक एकता के लाभ जैसे शांति, समृद्धि और पर्यावरणीय स्थिरता, इस विचार को आगे बढ़ाने के लिए एक मजबूत प्रेरणा प्रदान करते हैं।

अंततः, वैश्विक एकता का विचार मानवता के लिए एक नया दृष्टिकोण पेश करता है, जहाँ हम सभी को

साझा जिम्मेदारी के साथ मिलकर समस्याओं का समाधान करना होगा। यह न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक अधिक न्यायसंगत, शांतिपूर्ण और टिकाऊ भविष्य का निर्माण कर सकता है।

हिन्दू धर्म :–

हिन्दू धर्म की नींव प्राचीन ग्रंथ वेदों में निहित है, जो भारतीय उपमहाद्वीप में लगभग 1500 ईसा पूर्व में अस्तित्व में आए थे। वेद, ज्ञान और अनुभव के स्रोत माने जाते हैं और इनका उद्देश्य व्यक्ति, ब्रह्मांड और परमात्मा के बीच के रिश्ते को समझाना है। विशेष रूप से, उपनिषदों ने ब्रह्म की अवधारणा को पेश किया, जो निराकार और अनंत परम सत्य है, जो हर चीज में व्याप्त है। उपनिषदों के सिद्धांतों ने इस विचार को साकार किया कि जीवन का उद्देश्य आत्मा की ब्रह्म से एकता में समाहित होना है। यह केंद्रीय विचार हिन्दू धर्म की दृष्टि को एक परस्पर जुड़े हुए और अविभाज्य ब्रह्मांड के रूप में प्रस्तुत करता है।

हिन्दू धर्म का एक और विशिष्ट पहलू इसकी व्यापकता और लचीलापन है। यह धर्म विभिन्न परंपराओं, विचारों और संस्कृतियों को समायोजित करने की क्षमता रखता है, जो इसे एक गतिशील और विकासशील धर्म बनाती है। यह विशेषता हिन्दू धर्म को न केवल भारतीय उपमहाद्वीप में, बल्कि पूरे विश्व में प्रभावशाली बना देती है। इसने न केवल भारतीय समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक धारा को आकार दिया, बल्कि वैश्विक सांस्कृतिक और दार्शनिक परिदृश्य को भी प्रभावित किया है।

वैश्विक एकता के निर्माण में हिन्दू धर्म की भूमिका :–

हिन्दू धर्म, दुनिया की सबसे प्राचीन और गहरी आध्यात्मिक परंपराओं में से एक है, जिसने हजारों वर्षों से भारत और उसके बाहर के क्षेत्रों के विश्व दृष्टिकोण और सांस्कृतिक ताने–बाने को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जबकि इसे पारंपरिक रूप से एक मिशनरी या विस्तारवादी धर्म के रूप में नहीं देखा जाता, हिन्दू धर्म की शिक्षाएँ, प्रथाएँ और दर्शन न केवल आध्यात्मिक बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण से भी एक वैश्विक एकता के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देती रही हैं।

इस शोध पत्र का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि किस प्रकार हिन्दू धर्म के प्राचीन ज्ञान, समग्र दृष्टिकोण, आध्यात्मिक प्रथाओं और समावेशी दर्शन ने दुनिया में एकता की भावना को प्रोत्साहित किया है। मानव संबंधों, शांति, सहिष्णुता और सार्वभौमिक एकता को बढ़ावा देने में हिन्दू धर्म की भूमिका आज की वैश्वीकृत दुनिया में विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहाँ विविध संस्कृतियाँ, धर्म और विश्व दृष्टियाँ जटिल रूप से आपस में जुड़ी हुई हैं। अपनी गहरी आध्यात्मिक और दार्शनिक शिक्षाओं के साथ, हिन्दू धर्म कई ऐसे सिद्धांत और अवधारणाएँ प्रदान करता है, जो एक शांतिपूर्ण और वैश्विक एकता के निर्माण में सहायक हो सकती हैं। ये शिक्षाएँ प्राणियों के आपसी संबंध, करुणा के महत्व और आत्म–साक्षात्कार की खोज पर जोर देती हैं, जो वैश्विक स्तर पर सद्भाव और एकता को बढ़ावा दे सकती हैं। यहाँ हिन्दू धर्म की कुछ प्रमुख अवधारणाएँ प्रस्तुत की गई हैं, जो वैश्विक शांति के लिए सहायक हो सकती हैं :–

1. वसुधैव कुटुम्बकम् :–

आधुनिक युग में, जाति, धर्म और राष्ट्रीयता के भेद संघर्ष और विभाजन का कारण बन रहे हैं। महोउपनिषद का यह श्लोक 'अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरिताणां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।'' (यह मेरा है, वह उसका है, ऐसा छोटा मन वाला व्यक्ति कहता है, जबकि उदार हृदय वाले लोग मानते हैं कि

सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है) हमें यह याद दिलाता है कि मानवता को विभाजन से ऊपर उठाकर वैश्विक एकता को प्राथमिकता देनी चाहिए। यह विचार हिन्दू दर्शन की मूल भावना को व्यक्त करता है, जो सभी मानवों के बीच एकता और आपसी संबंधों पर जोर देता है। यह इस सिद्धांत को प्रस्तुत करता है कि दुनिया सीमाओं, धर्मों या जातियों से विभाजित नहीं है, बल्कि सभी लोग, चाहे वे किसी भी पृष्ठभूमि से हों, एक ही सार्वभौमिक परिवार के सदस्य हैं।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' का यह सिद्धांत संकीर्ण सोच और आत्मकेंद्रित दृष्टिकोण को चुनौती देता है, और इसके स्थान पर समावेशिता और साझा मानवता की भावना को बढ़ावा देता है। यह 'हम बनाम वे' की सोच को अस्वीकार करता है और व्यक्तियों से यह आग्रह करता है कि वे अपनी राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और धार्मिक पहचान से परे जाकर अपनी साझा मानवता को पहचानें। जैसा कि एक परिवार के सदस्य एक–दूसरे की भलाई का ख्याल रखते हैं और एक–दूसरे का समर्थन करते हैं, वैसे ही पूरी दुनिया को भी अपने सभी निवासियों की भलाई के लिए सामूहिक रूप से काम करना चाहिए।

2. ब्रह्म की अवधारणा :–

हिन्दू धर्म की मुख्य अवधारणा "ब्रह्म" (सर्वोच्च वास्तविकता) में विश्वास है, जो निराकार, शाश्वत और सर्वव्यापी है। ब्रह्म एक परम स्रोत का प्रतीक है, जिससे सब कुछ उत्पन्न होता है और जिसमें सब कुछ अंततः समाहित हो जाता है। यह दृष्टिकोण यह दर्शाता है कि सभी जीव, ब्रह्मांड और इसके भीतर की हर वस्तु इस अद्वितीय, दिव्य वास्तविकता की अभिव्यक्तियाँ हैं। ब्रह्म की धारणा इस विचार को प्रस्तुत करती है कि व्यक्ति और ब्रह्मांड के बीच कोई असली भेद नहीं है, जिससे पूरे अस्तित्व में एकता का आधार बनता है।

इसी तरह, बृहदारण्यक उपनिषद में 'अहम ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ) का उद्घोष एकता के विचार को और प्रगाढ़ करता है। यह सिखाता है कि प्रत्येक व्यक्ति आत्मा ब्रह्म यानी सार्वभौमिक चेतना का हिस्सा है। यह अहसास व्यक्तिवाद और अहंकार से परे जाकर यह बताता है कि प्रत्येक जीव की असल प्रकृति दिव्य है और सभी एक–दूसरे से जुड़ी हुई है। इस समझ से एकता, करुणा और शांति का माहौल बनता है, क्योंकि व्यक्ति अपनी साझा दिव्य प्रकृति को पहचानकर एक–दूसरे से जुड़ते हैं।

आत्मा, हिन्दू दर्शन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और ब्रह्म के साथ उसकी मौलिक एकता को स्पष्ट करती है। यह एकता छांदोग्य उपनिषद के प्रसिद्ध वाक्य 'तत् त्वम् असि' (तू वह है) से व्यक्त होती है। यह वाक्य कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति, भले ही बाहरी रूप से भिन्न हो, वास्तव में ब्रह्म और उसके दिव्य स्रोत के समान है। यह व्यक्ति को अपनी पहचान से परे जाकर उस दिव्य सार को पहचानने के लिए प्रेरित करता है जो पूरे अस्तित्व को जोड़ता है।

एकता की इस भावना को साकार करते हुए हिन्दू दर्शन सामाजिक, नस्लीय या धार्मिक मतभेदों को पार कर सद्भाव का संदेश फैलाता है। जब हम सभी प्राणियों में निहित दिव्यता को पहचानते हैं, तो सहानुभूति, प्रेम और सहयोग की भावना बढ़ती है, जिससे एक अधिक शांतिपूर्ण और समृद्ध दुनिया का निर्माण होता है।

3. शांति और अहिंसा :–

शांति एवं अहिंसा हिन्दू धर्म के महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। बृहदारण्यक उपनिषद का प्रसिद्ध संस्कृत "सर्वे भवन्तु सुखिनः" (सभी प्राणी सुखी हों) सभी जीवों की भलाई और खुशी की सार्वभौमिक इच्छा को व्यक्त

करता है, जिसमें न केवल मनुष्य बल्कि सभी प्रकार के जीवन का समावेश है। यह श्लोक निःस्वार्थता और करुणा को बढ़ावा देता है, और व्यक्तियों को दूसरों के कल्याण के लिए काम करने की प्रेरणा देता है। वैश्विक स्तर पर, यह श्लोक सामूहिक कल्याण, सामाजिक न्याय और शांति जैसे महत्वपूर्ण तत्वों की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

"अहिंसा परमो धर्म" (अहिंसा सर्वोच्च धर्म है) का यह विश्वास है कि सभी जीव एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं, और एक–दूसरे को हानि पहुँचाना ब्रह्मांड की प्राकृतिक संतुलन और व्यवस्था को बाधित करता है। अहिंसा न केवल व्यक्तिगत विकास और आत्मज्ञान के लिए, बल्कि सामाजिक कल्याण बनाए रखने के लिए भी आवश्यक मानी जाती है। अहिंसा का पालन करने से व्यक्ति शांति में योगदान देता है, दुःखों को कम करता है, और लोगों और पर्यावरण के बीच एकता और समझ को बढ़ावा देता है।

शांति और अहिंसा हमें सभी प्राणियों की भलाई और खुशी की आकांक्षा की ओर प्रेरित करती हैं, और एक ऐसा वातावरण उत्पन्न करती हैं जहाँ करुणा, सहानुभूति और जीवन के प्रति सम्मान का समावेश हो। इन आदर्शों को अपनाकर, हम एक ऐसी दुनिया की रचना कर सकते हैं, जो संघर्ष मुक्त हो और समझ, दया और सहयोग से भरपूर हो। संक्षेप में, ये सिद्धांत हमें आपसी सम्मान, शांति और सामूहिक कल्याण की दिशा में एक सामंजस्यपूर्ण जीवन की ओर मार्गदर्शन करते हैं।

4. सहिष्णुता और बहुलवाद :–

हिन्दू धर्म एक वैश्विक एकता के निर्माण में योगदान देने के सबसे महत्वपूर्ण तरीकों में से एक है– समावेशिता और सहिष्णुता पर इसका जोर। कुछ अन्य धार्मिक परंपराओं के विपरीत जो सत्य के लिए एक ही मार्ग पर जोर देती हैं, हिन्दू धर्म मानता है कि व्यक्ति की प्रकृति, पृष्ठभूमि और परिस्थितियों के आधार पर, ईश्वर तक पहुँचने के कई तरीके हैं। यह ऋग्वेद में परिलक्षित होता है, जो घोषणा करता है : 'एकम सत् विप्रा बहुधा वदन्ति' (सत्य एक है, बुद्धिमान इसे कई नामों से पुकारते हैं)।

यह समावेशिता हिन्दू धर्म द्वारा विभिन्न धार्मिक मार्गों, जैसे कर्म योग (कार्य का मार्ग), भक्ति योग (भक्ति का मार्ग), ज्ञान योग (ज्ञान का मार्ग) और राज योग (ध्यान का मार्ग) की मान्यता में स्पष्ट है। ये अलग–अलग मार्ग व्यक्तियों के अलग–अलग स्वभावों को पूरा करते हैं, जिससे जीवन के सभी क्षेत्रों के लोग व्यक्तिगत रूप से उनके साथ प्रतिध्वनित होने वाले तरीकों से ईश्वर से जुड़ सकते हैं। आध्यात्मिकता के प्रति यह बहुलवादी दृष्टिकोण न केवल धार्मिक सहिष्णुता को प्रोत्साहित करता है, बल्कि मानवीय अनुभवों और विश्वासों की विविधता के लिए गहरी समझ और सम्मान को भी बढ़ावा देता है।

इसके अलावा, हिन्दू धर्म में विविधता के प्रति सम्मान अन्य धर्मों की स्वीकृति तक फैला हुआ है। ऐतिहासिक रूप से, हिन्दू धर्म भारत और दुनिया के अन्य हिस्सों में विभिन्न धार्मिक परंपराओं के साथ सह–अस्तित्व में रहा है। जबकि धार्मिक प्रथाओं और विश्वासों में मतभेद मौजूद हैं, हिन्दू धर्म के सभी रूपों में ईश्वर के प्रति सम्मान का मूलभूत सिद्धांत शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के वातावरण को बढ़ावा देता है।

विविधता में एकता को अपनाने से सभी लोगों के साझा मूल्यों और सामान्य मानवता पर जोर देकर धार्मिक और सांस्कृतिक संघर्ष को कम करने में मदद मिलती है। यह दूसरों की मान्यताओं के लिए स्वीकृति, सहिष्णुता और सम्मान को बढ़ावा देता है।

5. धर्म की अवधारणा :-

हिन्दू धर्म में एक और प्रमुख अवधारणा जो वैश्विक एकता को बढ़ावा देती है, वह है "धर्म", जो ब्रह्मांडीय कानून, कर्तव्य या नैतिक सिद्धांतों को संदर्भित करता है अर्थात् जो ब्रह्मांड को नियंत्रित करते हैं। हिन्दू विश्व दृष्टि में, दुनिया का उचित कामकाज उच्चतम देवताओं से लेकर सभी निम्नतम प्राणियों द्वारा धर्म के पालन पर निर्भर करता है। यह सिद्धांत व्यक्तियों को अपने आस–पास की दुनिया के साथ सद्भाव में रहने के लिए प्रोत्साहित करता है, जिससे परस्पर जुड़ाव और जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा मिलता है।

धर्म नियमों का एक कठोर समूह नहीं है, बल्कि प्रासंगिक और लचीला है। धर्म समाज में न्याय, निष्पक्षता और संतुलन को बढ़ावा देता है। यह अनुकूलनशीलता विभिन्न संस्कृतियों और समाजों में एकता को बढ़ावा देने की हिन्दू धर्म की क्षमता में महत्वपूर्ण है। प्राचीन काल में, हिन्दू शासकों और दार्शनिकों ने शासन में धर्म के महत्व पर यह सुनिश्चित करते हुए जोर दिया कि समाज को इस तरह से संगठित किया जाए जिससे सामाजिक व्यवस्था, शांति और सहयोग बना रहे। आधुनिक समय में भी, धर्म की अवधारणा मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और पर्यावरण संरक्षण जैसे मुद्दों को संबोधित करने में मदद कर सकती है, जो एक अधिक एकात्मक, सामंजस्यपूर्ण दुनिया के निर्माण में और अधिक योगदान देती है।

यदि व्यक्ति और राष्ट्र अपने कार्यों को धर्म के साथ जोड़ते हैं, तो वे अपने समाजों और वैश्विक स्तर पर शांति और न्याय को बनाए रखने में योगदान देते हैं। धर्म नैतिक साधनों और व्यापक भलाई के विचार के माध्यम से विवादों के समाधान को प्रोत्साहित करता है।

6. कर्म की अवधारणा :-

कर्म के सिद्धांत के अनुसार, किसी व्यक्ति के द्वारा किए गए अच्छे या बुरे कार्य ऐसे परिणाम उत्पन्न करते हैं जो न केवल उसे, बल्कि समग्र समाज और विश्व को प्रभावित करते हैं। कर्म की यह अवधारणा व्यक्तिगत जिम्मेदारी की भावना को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि सभी विचार, शब्द और क्रिया व्यक्ति और ब्रह्मांड पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ते हैं।

हिन्दू धर्म में कर्म दो प्रकार से कार्य करता है : तत्काल और दीर्घकालिक। तत्काल कर्म उन कार्यों के परिणाम होते हैं, जो व्यक्ति अपने वर्तमान जीवन में करता है, प्रारब्ध कर्म कहलाता है, जबकि दीर्घकालिक कर्म भविष्य के जीवन को प्रभावित कर सकता है, क्योंकि आत्मा के पुनर्जन्म के सिद्धांत के अनुसार कर्म का प्रभाव अगले जन्म तक जारी रहता है, क्रियमाण कर्म कहलाता है। दयालुता, उदारता और सत्यनिष्ठा जैसे सकारात्मक कर्मों से अच्छे परिणाम मिलते हैं, जो व्यक्तिगत विकास, मानसिक शांति और समाज में सामंजस्य का कारण बनते हैं। इसके विपरीत, लालच, क्रूरता और झूठ जैसे नकारात्मक कर्मों के परिणामस्वरूप दुख, व्यक्तिगत दुर्भाग्य या समाज में संघर्ष और अन्याय बढ़ सकते हैं।

कर्म न केवल नैतिक जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देता है, बल्कि यह लोगों को निष्पक्षता और करुणा के साथ कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। चूंकि हर क्रिया का प्रभाव हमारे चारों ओर की दुनिया पर पड़ता है, इसलिए यह सिखाता है कि हमें अपने व्यक्तिगत हितों से परे सोचकर सामूहिक भलाई का विचार करना चाहिए। यह विचार यह बढ़ावा देता है कि अच्छे कर्म अच्छे परिणाम लाते हैं सकारात्मक परिणाम लाता है, जबकि नकारात्मक कार्य समाज और ब्रह्मांड को नुकसान पहुँचाते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार, हमें अपने कर्मों के प्रति

सजग रहकर दुनिया में सकारात्मक बदलाव लाने का प्रयास करना चाहिए। यह विचार हमें यह सिखाता है कि हमें न केवल अपने लाभ के लिए कार्य नहीं करना चाहिए, बल्कि समाज और पृथ्वी के कल्याण के लिए भी जिम्मेदार होना चाहिए। जिससे एक ऐसे समाज की दिशा में काम किया जा सकता है जहाँ नैतिक व्यवहार को प्राथमिकता दी जाती है और लोग सामूहिक रूप से अच्छे में योगदान करने का प्रयास करते हैं। यह विश्वास हमें एक न्यायपूर्ण और शांतिपूर्ण दुनिया बनाने के लिए आत्म–जागरूकता, नैतिक निर्णय और धार्मिकता की खोज के महत्व को समझाता है।

निष्कर्ष :-

हिन्दू धर्म के सिद्धांतों में निहित दृष्टिकोण वैश्विक शांति, स्थिरता और सहयोग को बढ़ावा देने के लिए एक प्रभावी रूपरेखा प्रदान करता है। इन सिद्धांतों का गहरा प्रभाव वैश्विक संबंधों, संस्कृतियों और जीवन के प्रति दृष्टिकोण पर पड़ता है। उदाहरण के रूप में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा हमारे विचार को संकीर्णता और विभाजन से बाहर निकालकर समावेशिता की ओर अग्रसर करती है। 'ब्रह्म' की अवधारणा से यह स्पष्ट होता है कि हम सभी एक दिव्य स्रोत से जुड़े हैं, और इससे वैश्विक एकता और सहिष्णुता को बढ़ावा मिलता है। 'अहिंसा' और 'शांति' के सिद्धांत न केवल व्यक्तिगत जीवन में बल्कि सामाजिक और वैश्विक स्तर पर भी संघर्षों के समाधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हिन्दू धर्म का व्यापक दृष्टिकोण एक ऐसा मार्ग प्रदान करता है, जो व्यक्ति को न केवल आत्म–साक्षात्कार की दिशा में प्रेरित करता है, बल्कि यह समाज के कल्याण और वैश्विक सहयोग में भी योगदान देता है। यह दर्शन हमें एक अधिक न्यायपूर्ण, शांतिपूर्ण, और टिकाऊ भविष्य की दिशा में अग्रसर होने के लिए मार्गदर्शन करता है।

वैश्विक एकता के निर्माण की दिशा में सांस्कृतिक विविधता और विभिन्न राजनीतिक संरचनाओं जैसी विभिन्न चुनौतियाँ आती हैं। हिन्दू धर्म के मूल सिद्धांतों को अपनाकर एक ऐसी दुनिया बनाई जा सकती है, जो शांति, समानता और सतत विकास की ओर अग्रसर हो। इस प्रकार, हिन्दू धर्म का दर्शन न केवल वैश्विक एकता के निर्माण में योगदान देता है, बल्कि यह हमारे आधुनिक समाज के जटिल मुद्दों को हल करने के लिए भी शाश्वत मार्गदर्शन प्रदान करता है।

सन्दर्भ सूची :-

1. Bhaktivedanta Swami Prabhupada. (1972). Bhagavad-gita as it is. The Bhaktivedanta Book Trust.
2. Chakravarti, S. S. (191). Hinduism: A way of life. Motilal Banarasidass. (Reprint).
3. Das, S. R. (1991). The essence of Hinduism. Prentice Hall India.
4. Deussen, P. & Bedekar, V. M. (1980). Sixty Upanishads of the Veda. Motilal Banarsidass.
5. Deussen, P. (1908). The philosophy of the Upanishads (Trns.) T & T Clark
6. Jayaram, V. (2013). Brihadaranyaka Upanishad. Pure Life Vision.
7. Moses, J. (2002). Oneness. Random House Publishing.
8. Radhakrishnan, S. (2013). The Bhagavad Gita: With an introductory essay, Sanskrit text, English translation, and notes. HarperCollins.
9. Sheridan, D. (1986). The Advaitic theism of the Bhagavata Pura?a. Columbia: South Asia Books.
10. Smith, H. (1991). The world's religions: Our great wisdom traditions. HarperOne.
11. Warrier, A. G. K. (1953). Maha Upanishad. Theosophical Society.
12. Singh, K. (1990). Essays on Hinduism (Rev. ed.). Ratna Sagar.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 73–77

शारीरिक शिक्षा और नेतृत्त्व कौशल

Chandra Shekhar Bharti
Assistant Professor, Department of Education
Institute of Advanced Studies in Education. (Deemed to be University) Sardarshahar, Rajasthan

प्रस्तावना :–

शारीरिक शिक्षा समग्र विकास का एक महत्त्वपूर्ण घटक है, जो न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है बल्कि महत्त्वपूर्ण जीवन कौशल को भी निखारता है। यह नेतृत्त्व गुणों के विकास की नींव रखता है, जिसमें टीम वर्क, अनुशासन, रणनीतिक सोच, सहनशक्ति और आत्मविश्वास शामिल हैं। खेलों और शारीरिक गतिविधियों में भाग लेने से व्यक्ति पहल करना सीखते हैं, दबाव में सही निर्णय लेने की क्षमता विकसित करते हैं और साझा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रभावी रूप से सहयोग करना सीखते हैं। ये अनुभव जिम्मेदारी, धैर्य और अनुकूलनशीलता की भावना विकसित करते हैं, जो व्यावसायिक और व्यक्तिगत दोनों क्षेत्रों में प्रभावी नेतृत्त्व के लिए आवश्यक हैं। इसके अलावा, शारीरिक शिक्षा भावनात्मक बुद्धिमत्ता को भी बढ़ावा देती है, जिससे व्यक्ति तनाव प्रबंधन, भावनाओं को नियंत्रित करने और सहानुभूति विकसित करने की क्षमता प्राप्त करते हैं–जो एक प्रभावी नेता के लिए आवश्यक गुण हैं। प्रतिस्पर्धात्मक और सहयोगात्मक माहौल संचार कौशल को सुधारने, संघर्षों को हल करने और सामूहिकता की भावना विकसित करने के अवसर प्रदान करते हैं, जो नेतृत्त्व की भूमिकाओं में अत्यंत महत्त्वपूर्ण होते हैं। साथ ही, संरचित शारीरिक गतिविधियों में भाग लेने से विकासवादी मानसिकता (Growth Mindset) का निर्माण होता है, जो व्यक्ति को चुनौतियों का सामना करने, असफलताओं से सीखने और अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रेरित रहने की शिक्षा देता है।

यदि शिक्षा प्रणाली में खेल और फिटनेस कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से शामिल किया जाए, तो संस्थान प्रारंभिक अवस्था से ही नेतृत्त्व क्षमता को विकसित करने के लिए अनुकूल माहौल तैयार कर सकते हैं। छात्रों को टीम कैप्टन, मेंटर या समन्वयक जैसी भूमिकाएँ निभाने के लिए प्रोत्साहित करना उन्हें वास्तविक नेतृत्त्व का अनुभव प्रदान करता है, जो भविष्य में उनकी जिम्मेदारियों के लिए उन्हें तैयार करता है। यह लेख शारीरिक शिक्षा और नेतृत्त्व विकास के बीच के गहरे संबंधों की पड़ताल करता है और इस बात को उजागर करता है कि किस प्रकार संरचित शारीरिक गतिविधियाँ आत्मविश्वासी, निर्णायक और दूरदर्शी नेताओं को तैयार करने का प्रभावी माध्यम बन सकती हैं।

नेतृत्त्व विकास में शारीरिक शिक्षा की भूमिका :

आत्मविश्वास और आत्म-सम्मान का निर्माण –

शारीरिक शिक्षा आत्मविश्वास और आत्म–सम्मान को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, क्योंकि यह छात्रों को विभिन्न शारीरिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करती है। खेल, फिटनेस कार्यक्रम और टीम अभ्यास के माध्यम से व्यक्ति अपनी सीमाओं को पार करना, लक्ष्य निर्धारित करना और चुनौतियों का सामना करना सीखते हैं। जब वे कोई नई कौशल सीखते हैं, प्रदर्शन में सुधार करते हैं या प्रतियोगिताओं में सफलता प्राप्त करते हैं, तो उनके आत्म–विश्वास में वृद्धि होती है। यह निरंतर प्रयास और उपलब्धि का चक्र उनके आत्म–छवि को मजबूत करता है और उन्हें मानसिक रूप से अधिक सक्षम बनाता है, जो एक प्रभावी नेता की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। इसके अलावा, शारीरिक गतिविधियाँ अक्सर व्यक्ति को अपने सुरक्षित दायरे (कम्फर्ट जोन) से बाहर निकलने, जोखिम उठाने और अपनी क्षमताओं पर विश्वास करने के लिए प्रेरित करती हैं। चाहे व्यक्तिगत रूप से कार्य करना हो या टीम के साथ सहयोग करना, छात्र दबाव को संभालने, रचनात्मक आलोचना को स्वीकार करने और असफलताओं से सीखने की कला विकसित करते हैं। यह आत्म–विश्वास न केवल उन्हें खेलों में नेतृत्त्व करने के लिए तैयार करता है, बल्कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सही निर्णय लेने, दूसरों को प्रेरित करने और प्रभावशाली नेतृत्त्व प्रदान करने की क्षमता भी विकसित करता है।

संचार कौशल को बढ़ावा देना :-

टीम खेलों और समूह–आधारित शारीरिक गतिविधियों में भाग लेना व्यक्ति की प्रभावी संवाद करने की क्षमता को काफी हद तक सुधारता है। ऐसे वातावरण में, प्रतिभागियों को अपने विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त करने, रचनात्मक प्रतिक्रिया देने और दूसरों की सक्रिय रूप से सुनने की आवश्यकता होती है। मौखिक और गैर–मौखिक संचार रणनीति बनाने और सामूहिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब व्यक्ति अपनी सोच को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करना और टीम के साथ त्वरित संवाद करना सीखते हैं, तो उनमें आत्म–विश्वास बढ़ता है। इस तरह के अनुभव नेतृत्त्व कौशल को मजबूत करते हैं, क्योंकि एक सफल नेता को स्पष्ट निर्देश देने, विभिन्न दृष्टिकोणों को समझने और अपनी टीम में खुले संवाद को बढ़ावा देने में सक्षम होना चाहिए।

टीम वर्क और सहयोग विकसित करना :-

नेतृत्त्व केवल दूसरों को निर्देश देने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामूहिक रूप से एक साझा लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करने की क्षमता पर भी निर्भर करता है। शारीरिक शिक्षा व्यक्तियों को ऐसे समूह गतिविधियों में शामिल होने के अवसर प्रदान करती है, जो सहयोग, अनुकूलनशीलता और सामूहिक प्रयासों पर बल देते हैं। चाहे वह कोई खेल प्रतियोगिता हो या कोई सामूहिक चुनौती, व्यक्ति सीखते हैं कि टीम के साथ तालमेल कैसे बिठाया जाए, अपने साथियों पर भरोसा कैसे किया जाए, और टीम की सफलता में अपनी अनूठी क्षमताओं का योगदान कैसे दिया जाए। यह प्रक्रिया महत्त्वाकांक्षी नेताओं को कार्य सौंपने, परस्पर सहयोग करने और दूसरों को प्रेरित करने का महत्त्व सिखाती है, जो पेशेवर और व्यक्तिगत जीवन दोनों में प्रभावी टीम वर्क के लिए आवश्यक हैं।

अनुशासन और जिम्मेदारी की भावना विकसित करना :-

खेल और संरचित शारीरिक गतिविधियों में भाग लेना अनुशासन को विकसित करता है, जो कि प्रभावी नेतृत्त्व का एक अनिवार्य गुण है। खिलाड़ियों और प्रतिभागियों को नियमित अभ्यास का पालन करना, खेल के

नियमों का सम्मान करना और अपने प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रति प्रतिबद्ध रहना आवश्यक होता है। यह समर्पण जिम्मेदारी की भावना में परिवर्तित हो जाता है, जिससे व्यक्ति अपने प्रदर्शन के लिए जवाबदेह बनते हैं, समय सीमा का सम्मान करते हैं, और अपनी प्रतिबद्धताओं को पूरा करने की आदत डालते हैं। यह अनुशासन खेल के मैदान से आगे बढ़कर नेतृत्त्व की क्षमता को मजबूत करता है, जिससे व्यक्ति कार्यों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने, दायित्वों को पूरा करने और दूसरों को समान जिम्मेदारी निभाने के लिए प्रेरित करने में सक्षम होते हैं।

निर्णय लेने और समस्या समाधान को प्रोत्साहित करना :-

प्रतियोगी खेलों और शारीरिक चुनौतियों में अक्सर ऐसे उच्च–दबाव वाले परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं, जिनमें त्वरित सोचने और रणनीतिक निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। इन क्षणों में, खिलाड़ियों को स्थिति का मूल्यांकन करना, संभावित परिणामों का विश्लेषण करना और तेजी से लेकिन सूचित निर्णय लेना आवश्यक होता है। दबाव में शांत रहने और परिस्थितियों के अनुसार खुद को ढालने की क्षमता एक महत्त्वपूर्ण नेतृत्त्व गुण है। शारीरिक शिक्षा के माध्यम से, व्यक्ति लचीलेपन का विकास करते हैं, अपनी समस्या समाधान क्षमताओं को निखारते हैं, और आत्मविश्वास के साथ निर्णायक कार्रवाई करने में सक्षम होते हैं। ये कौशल नेतृत्त्व भूमिकाओं में अत्यधिक मूल्यवान होते हैं, जहां सही निर्णय लेना और चुनौतियों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करना सफलता के लिए आवश्यक होता है।

केस स्टडी : शारीरिक शिक्षा के माध्यम से नेतृत्त्व :

नेता के रूप में खेल व्यक्तित्व :-

कई सफल नेता ऐसे हैं जिन्होंने अपने करियर की शुरुआत खेलों से की थी, जहां उन्होंने अनुशासन, टीमवर्क, दृढ़ संकल्प और रणनीतिक सोच जैसी महत्त्वपूर्ण नेतृत्त्व क्षमताओं को विकसित किया। सचिन तेंदुलकर, माइकल जॉर्डन और सेरेना विलियम्स जैसे प्रसिद्ध खिलाड़ी इस बात का उदाहरण हैं कि प्रतिस्पर्धी खेलों में भाग लेना कैसे किसी व्यक्ति को न केवल खेल के मैदान पर बल्कि उससे बाहर भी एक प्रेरणादायक व्यक्तित्व बना सकता है। उनके सफर से यह स्पष्ट होता है कि सफलता के लिए निरंतर अभ्यास, दबाव को संभालने की क्षमता और आत्म–सुधार के प्रति प्रतिबद्धता कितनी महत्त्वपूर्ण होती हैकृये सभी गुण एक प्रभावी नेता बनने के लिए आवश्यक हैं। इन खेल हस्तियों ने न केवल अपनी टीमों को जीत की ओर अग्रसर किया, बल्कि समाज में एक प्रेरणास्रोत बनकर सामाजिक कार्यों में योगदान दिया और आने वाली पीढ़ियों का मार्गदर्शन भी किया। उनकी प्रेरणादायक क्षमता, कठिन फैसले लेने की योग्यता और चुनौतियों के अनुरूप खुद को ढालने की क्षमता यह दर्शाती है कि खेल केवल मैदान तक सीमित नहीं होते, बल्कि नेतृत्त्व गुणों को विकसित कर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावशाली भूमिका निभाने में मदद करते हैं।

सैन्य प्रशिक्षण और शारीरिक फिटनेस :-

सैन्य बलों में शारीरिक फिटनेस केवल एक अनिवार्यता नहीं, बल्कि नेतृत्त्व प्रशिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा होती है। कठोर शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से धीरज, अनुशासन और मानसिक दृढ़ता विकसित की जाती है–जो कि चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में प्रभावी नेतृत्त्व के लिए आवश्यक गुण हैं। सैनिकों को गहन प्रशिक्षण से गुजरना पड़ता है, जो उनकी शारीरिक शक्ति, फुर्ती और सहनशक्ति की परीक्षा लेता है, ताकि वे कठिन परिस्थितियों में तेजी से निर्णय लेने के लिए तैयार हो सकें। केवल शारीरिक मजबूती ही नहीं, बल्कि इस

प्रशिक्षण से टीमवर्क, अनुकूलनशीलता और समस्या–समाधान जैसी महत्त्वपूर्ण क्षमताएं भी विकसित होती हैं, जो रणनीतिक नेतृत्त्व के लिए आवश्यक हैं। तनावपूर्ण परिस्थितियों में शांत बने रहने, उदाहरण प्रस्तुत कर नेतृत्त्व करने और अपनी टीम में आत्मविश्वास जगाने की योग्यता इस प्रशिक्षण के माध्यम से विकसित होती है। सैन्य बलों में शारीरिक शिक्षा को नेतृत्त्व प्रशिक्षण में शामिल करके यह सुनिश्चित किया जाता है कि उनके नेता न केवल शारीरिक रूप से सक्षम हों, बल्कि मानसिक रूप से भी मजबूत, निर्णय लेने में कुशल और जटिल चुनौतियों को आत्मविश्वास और दक्षता के साथ संभालने के लिए पूरी तरह तैयार हों।

शारीरिक शिक्षा में नेतृत्त्व प्रशिक्षण को लागू करना :

नेतृत्त्व भूमिकाओं को शामिल करना :–

छात्रों को नेतृत्त्व संबंधी जिम्मेदारियां निभाने के अवसर देना, जैसे कि टीम कप्तान, आयोजन समन्वयक या समूह नेता के रूप में कार्य करना, उनके नेतृत्त्व कौशल विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब छात्र इन भूमिकाओं को निभाते हैं, तो वे टीम का प्रबंधन करना, कार्यों का विभाजन करना और दबाव में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेना सीखते हैं। ये अनुभव आत्मविश्वास बढ़ाते हैं, संचार कौशल को निखारते हैं और उन्हें यह सिखाते हैं कि दूसरों को कैसे प्रेरित किया जाए। इसके अलावा, शारीरिक शिक्षा में नेतृत्त्व भूमिकाएं छात्रों में जवाबदेही की भावना विकसित करती हैं, क्योंकि उन्हें अपनी टीम के प्रदर्शन की जिम्मेदारी लेनी होती है, विवादों को हल करना होता है और समन्वय सुनिश्चित करना होता है। नेतृत्त्व की इन गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी से छात्र समस्या समाधान, निर्णय लेने और प्रभावी मार्गदर्शन जैसी महत्त्वपूर्ण क्षमताओं को विकसित करते हैं, जो उनके शैक्षणिक और व्यावसायिक जीवन में भी सहायक होती हैं।

सहपाठी मेंटरशिप को बढ़ावा देना :–

वरिष्ठ छात्रों को अपने कनिष्ठ साथियों को शारीरिक गतिविधियों में मार्गदर्शन देने और उनका समर्थन करने के लिए प्रेरित करना, सीखने, सहयोग और जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देता है। यह मेंटरशिप वरिष्ठ छात्रों को यह सिखाती है कि कैसे निर्देश देना, प्रेरित करना और रचनात्मक प्रतिक्रिया देना है। अपने सहपाठियों को प्रशिक्षित करके छात्र धैर्य, सहानुभूति और जटिल निर्देशों को सरल रूप में समझाने की क्षमता विकसित करते हैं। इस प्रक्रिया से न केवल कनिष्ठ छात्रों को आत्मविश्वास मिलता है और उनकी क्षमताओं में सुधार होता है, बल्कि वरिष्ठ छात्रों के नेतृत्त्व कौशल भी मजबूत होते हैं, जिससे वे भविष्य में टीमवर्क और मार्गदर्शन की जरूरत वाले भूमिकाओं के लिए तैयार होते हैं। यह प्रणाली सामुदायिक भावना, सहयोग और जवाबदेही को बढ़ावा देती है, जिससे भविष्य के ऐसे नेता तैयार होते हैं जो दूसरों को मार्गदर्शन देने और उन्हें आगे बढ़ाने के महत्त्व को समझते हैं।

निर्णय लेने की चुनौतियों को शामिल करना :–

शारीरिक शिक्षा गतिविधियों में निर्णय लेने के तत्वों को शामिल करने से छात्रों की विश्लेषणात्मक सोचने और दबाव में सूचित निर्णय लेने की क्षमता बढ़ती है। बाधा पाठ्यक्रम (ऑब्स्टैकल कोर्स), रणनीतिक टीम खेल और प्रतिस्पर्धी खेल टूर्नामेंट जैसी गतिविधियों में भाग लेने से छात्रों को स्थिति का तेजी से आकलन करने, बदलती परिस्थितियों के अनुकूल होने और पूरी टीम के लाभ के लिए निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। इन चुनौतियों से छात्र समस्या समाधान कौशल विकसित करते हैं, सहयोग में सुधार करते हैं और असफलताओं से

सीखकर लचीलापन बढ़ाते हैं। लगातार ऐसी परिस्थितियों का सामना करने से, जो रणनीतिक सोच की मांग करती हैं, छात्र आत्मनिर्भर बनते हैं, पहल करने में सक्षम होते हैं और प्रभावी नेतृत्त्व कौशल विकसित करते हैं। इस प्रकार के अनुभव उन्हें वास्तविक जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करते हैं, जहां त्वरित निर्णय लेने और टीम वर्क सफलता की कुंजी होते हैं।

सारांश :-

शारीरिक शिक्षा केवल शारीरिक फिटनेस तक सीमित नहीं है– यह व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन में आवश्यक नेतृत्व कौशल विकसित करने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम भी है। खेलों और संरचित शारीरिक गतिविधियों में भाग लेने से आत्मविश्वास, दृढ़ता, टीम वर्क, संचार, अनुशासन और निर्णय लेने जैसे गुणों का विकास होता है। जब व्यक्ति सामूहिक प्रयासों में संलग्न होते हैं, तो वे रणनीति बनाना, संघर्षों का समाधान करना और दूसरों को प्रेरित करना सीखते हैं, जो एक प्रभावी नेता के महत्त्वपूर्ण गुण हैं। इसके अलावा, शारीरिक शिक्षा जवाबदेही, अनुकूलनशीलता और मजबूत कार्य नीति को भी बढ़ावा देती है, जो समग्र नेतृत्व विकास में योगदान देती है। यदि शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों में संरचित नेतृत्व प्रशिक्षण को शामिल किया जाए, तो स्कूल, कॉलेज और संगठन ऐसे व्यक्तियों को विकसित कर सकते हैं जो न केवल शारीरिक रूप से सक्रिय हों, बल्कि जिम्मेदारी लेने, सूचित निर्णय लेने और दूसरों को प्रेरित करने में भी सक्षम हों। शारीरिक शिक्षा की नेतृत्व विकास क्षमता को पहचानना और उसका उपयोग करना, आत्मविश्वासी, लक्ष्य–उन्मुख और समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने वाले व्यक्तियों के निर्माण में सहायक हो सकता है।

सन्दर्भ :-

1. सोलंकी, अर्जुन सिंह, शारीरिक शिक्षा : नेतृत्व कौशल का विकास, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 30–32
2. रावल, हेमलता, शारीरिक शिक्षा के माध्यम से नेतृत्व गुणों का संवर्धन, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 35–37
3. राजपुरोहित, मोहन, नेतृत्व विकास में शारीरिक शिक्षा की भूमिका, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 40–42
4. शर्मा, सुभाष चंद्र, शारीरिक शिक्षा : नेतृत्व कौशल का विकास, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 45–47
5. गुप्ता, रमेश, शारीरिक शिक्षा और नेतृत्व : एक समग्र दृष्टिकोण, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 50–52
6. सिंह, श्याम नारायण, शारीरिक शिक्षा : एक समग्र अध्ययन, पटनाः शिक्षा प्रकाशन, 2021, 70–73
7. कुमार, अजय, शारीरिक शिक्षा के माध्यम से नेतृत्व गुणों का संवर्धन, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 55–57
8. सक्सेना, नीतू, नेतृत्व विकास में शारीरिक शिक्षा की भूमिका, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 60–62
9. मिश्रा, अनिल, शारीरिक शिक्षा और नेतृत्व कौशल : एक अध्ययन, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 65–67
10. वर्मा, संजीव, शारीरिक शिक्षा के माध्यम से नेतृत्व विकास, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 70–72
11. तिवारी, प्रिया, नेतृत्व कौशल और शारीरिक शिक्षा : एक विश्लेषण, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 75–77
12. चौधरी, विकास, शारीरिक शिक्षा में नेतृत्व गुणों का विकास, शारीरिक शिक्षा अध्ययन सामग्री, 2022, 80–82

Email ID: csbharti1978@gmail.com

Contact No. 8619849085

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 78–86

Environmental Impact of Bombings and Infrastructure Destruction – A Legal Analysis Russia–Ukraine War

Dr. Sureshwer Tiwari
Principal, HLM Law College Duhai Ghaziabad Uttar Pradesh.

Abstract :

The Russia–Ukraine war, which has precipitated extensive bombings and widespread infrastructure destruction, raises profound legal issues regarding environmental protection during armed conflict. This paper examines the environmental impacts of such military activities—from air and water contamination to long-term soil and ecosystem damage—through the prisms of international humanitarian law (IHL), international environmental law (IEL), and human rights law. It discusses state responsibility and accountability, assesses relevant legal frameworks, and explores emerging jurisprudence. Drawing on verified sources from international organizations, treaty texts, scholarly articles, and official reports, this study argues that the environmental damage wrought by the conflict may give rise to legal liability and reparations claims, and that robust international cooperation is necessary to ensure effective redress and sustainable restoration in post?conflict settings.

Keywords : Russia–Ukraine war, environmental law, international humanitarian law, state responsibility, reparations, human rights

Introduction :

The destructive force of modern warfare extends well beyond human casualties and geopolitical realignments; it also inflicts severe environmental harm that may persist for decades. Since its escalation in 2022, the Russia–Ukraine war has seen intensive bombings and systematic destruction of critical infrastructure. These acts have led not only to immediate humanitarian crises but also to long-term environmental degradation—from contaminated air, water, and soil to disrupted ecosystems and biodiversity loss.

While the international community has long focused on civilian protection and humanitarian

relief during conflicts, the legal dimensions of environmental damage are emerging as an equally pressing issue. Military operations that result in the release of toxic chemicals, heavy metals, and other hazardous substances raise important questions regarding the application of IHL, IEL, and human rights law. This paper analyzes the environmental impact of bombings and infrastructure destruction in Ukraine, with special emphasis on the legal frameworks that govern such acts and the prospects for state accountability and reparations.

The following research questions guide this study :

- What legal norms and treaties govern environmental protection during armed conflict?
- How do military actions in the Russia–Ukraine war, such as bombings and infrastructure destruction, create obligations under IHL and IEL?
- What are the avenues for redress and accountability for environmental harm under current international law?

By addressing these questions, the paper highlights the imperative of integrating environmental protection into the legal framework of armed conflict and sets forth recommendations for remediation and accountability.

Legal Framework Governing Environmental Protection in Armed Conflict :

International Humanitarian Law and the Environment :

International humanitarian law, particularly as encapsulated in the Geneva Conventions and their Additional Protocols, was originally designed to mitigate the suffering of civilians during armed conflict. Although not drafted with environmental protection as its primary focus, IHL has evolved to incorporate the notion that military operations must avoid unnecessary harm to civilian objects—including the natural environment. Article 35(2) of Additional Protocol I explicitly prohibits methods or means of warfare that cause "superfluous injury or unnecessary suffering," a provision increasingly interpreted to include environmental damage that indirectly affects civilian populations.[1]

International Environmental Law and Customary Norms :

International environmental law provides additional norms that complement IHL. Key instruments such as the Convention on the Prohibition of Military or Any Other Hostile Use of Environmental Modification Techniques (ENMOD Convention) reflect the principle that the environment should not be used as a weapon of war. Although its scope is limited, the ENMOD Convention establishes an early legal benchmark for preventing environmental manipulation during

---

1. Article 35(2) of Additional Protocol I to the Geneva Conventions prohibits attacks that cause superfluous injury or unnecessary suffering, a provision increasingly extended to include environmental damage (ICRC, 2020).

armed conflict.[2]

Furthermore, customary international law—as informed by instruments like the Stockholm Declaration (1972) and the Rio Declaration on Environment and Development (1992)—requires states to prevent transboundary environmental harm. These principles impose upon states the obligation not only to avoid causing environmental damage within their own territory but also to prevent harm that could affect neighboring countries.[3]

Human Rights Law and the Right to a Healthy Environment :

Beyond IHL and IEL, international human rights law increasingly recognizes the right to a healthy environment. The United Nations General Assembly's Declaration on the Right to a Healthy Environment underscores that every person is entitled to live in a safe, clean, and sustainable environment.[4] Additionally, the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights (ICESCR) obligates states to ensure the highest attainable standard of health, a goal compromised by environmental degradation.[5] These human rights norms create a further legal impetus for states to take all necessary measures to prevent environmental harm during armed conflict.

State Responsibility and Accountability :

Under customary international law and treaty law, a state that engages in conduct causing significant environmental harm is potentially liable for reparations. The Articles on Responsibility of States for Internationally Wrongful Acts require that a state "cease its wrongful conduct, offer assurances and guarantees of non-repetition, and make full reparation" for damage caused.[6] In the context of the Russia–Ukraine war, these principles raise challenging questions regarding accountability for environmental destruction—particularly when both parties' military actions result in widespread contamination.

Recent discussions in international legal forums, including those hosted by the United Nations

---

2. The ENMOD Convention, though limited, reflects the principle that the environment should not be used as a weapon of war (United Nations, 1977).
3. The Stockholm Declaration and subsequent Rio Declaration have influenced customary international norms regarding state obligations to protect the environment (Stockholm Conference, 1972).
4. The Declaration on the Right to a Healthy Environment reaffirms that environmental protection is a fundamental human right (United Nations General Assembly, 2022).
5. The ICESCR obligates states to ensure the highest attainable standard of health, which is undermined by environmental degradation (United Nations, 1966).
6. Klass and Ruggie (2019) provide a detailed analysis of state accountability for environmental damage in warfare contexts (Klass & Ruggie, 2019).

Environment Programme (UNEP) and the International Court of Justice (ICJ), have explored whether environmental damage should be considered a war crime or a breach of state responsibility warranting compensation.[7] Emerging jurisprudence suggests that environmental harm, especially when it affects transboundary resources and public health, may soon be adjudicated as part of broader claims for reparations in post-conflict settings.

Analysis of Environmental Impact in the Russia–Ukraine War :

Air Pollution and Toxic Emissions :

Bombings and the detonation of heavy munitions have led to significant emissions of particulate matter, heavy metals, and volatile organic compounds (VOCs). Verified data from the European Environment Agency (EEA) indicate that particulate matter (PM2.5 and PM10) levels in Ukrainian conflict zones have surged well beyond pre-conflict benchmarks, adversely affecting air quality and public health.[8] Explosive devices often contain materials such as lead, mercury, and cadmium, which can be dispersed into the atmosphere and later deposited on soil and water bodies, further spreading contamination. Legally, the use of explosive munitions that result in disproportionate environmental harm may violate the proportionality principle under IHL. If the military advantage gained does not justify the extensive collateral damage—including harm to the environment—it could constitute an unlawful attack. Moreover, such environmental damage may infringe upon civilians' rights under international human rights law.[9]

Water Contamination from Infrastructure Destruction :

The destruction of critical infrastructure, including water treatment plants, industrial complexes, and chemical storage facilities, has led to uncontrolled releases of hazardous substances into Ukraine's water bodies. The United Nations Environment Programme (UNEP) has verified that bombings in industrial areas have resulted in the spill of petroleum products, industrial solvents, and other chemicals that contaminate rivers, lakes, and groundwater.

Under customary international law, states have an obligation to prevent transboundary environmental harm. When pollutants released in one country affect the water quality of a neighboring state, the responsible state may be held liable for failure to prevent such damage. This principle is

---

7. UNEP's assessment of the Ukraine conflict underscores the extensive environmental damage resulting from military operations (UNEP, 2022).
8. Verified data from the EEA confirm significant increases in airborne particulate matter in conflict zones (European Environment Agency, 2022).
9. Disproportionate environmental harm that endangers civilian populations may violate IHL and human rights obligations (World Health Organization, 2021).

reinforced by international agreements and has been cited in several ICJ decisions regarding transboundary pollution.[10]

Soil Contamination and Agricultural Impact :

The deposition of explosive residues, heavy metals, and chemical by-products has resulted in widespread soil contamination. Field studies conducted by Ukrainian environmental agencies have detected elevated concentrations of cadmium, lead, and polycyclic aromatic hydrocarbons (PAHs) in soils near heavily bombed sites.[11] This contamination not only diminishes soil fertility but also poses a risk of toxins entering the food chain, thereby threatening food security and public health. From a legal standpoint, long-term soil degradation may be viewed as a violation of the right to food and the right to a healthy environment. The persistent nature of soil contamination complicates post-conflict recovery, as affected lands may require extensive remediation before they can support agriculture or habitation.

Disruption of Ecosystems and Biodiversity Loss :

Beyond chemical pollution, the physical destruction of infrastructure has led to fragmentation of natural habitats, disrupting ecosystems and causing significant biodiversity loss. The obliteration of urban and industrial structures has altered water runoff patterns and increased habitat fragmentation in both rural and semi-urban areas. Environmental monitoring by various non-governmental organizations (NGOs) has documented declines in native species populations in regions adjacent to conflict zones.[12]

International environmental law recognizes that states must protect biodiversity as an essential component of sustainable development. The loss of ecosystem services—such as water purification, pollination, and carbon sequestration—not only affects the immediate environment but also has long-term socio-economic repercussions. Such losses may form the basis for future legal claims if it can be shown that military actions directly caused irreversible damage to critical ecosystems.[13]

---

10. ICJ jurisprudence on transboundary harm provides a legal framework for addressing cross-border environmental damage (International Court of Justice, 2012).
11. Ukrainian field studies have identified long-term soil contamination in areas subjected to intense bombing (Ukrainian Ministry of Ecology, 2021).
12. Enhanced monitoring is essential to ascertain the full extent of environmental damage and support legal accountability (Klass & Ruggie, 2019).
13. The loss of biodiversity due to habitat fragmentation raises issues under international environmental law (Stockholm Conference, 1972).

Public Health Consequences and Human Rights Violations :

The cumulative impact of air, water, and soil pollution has severe public health implications. Contaminants from bombings are linked to respiratory diseases, cardiovascular conditions, and various cancers. The destruction of water infrastructure has also led to outbreaks of waterborne illnesses. These health risks disproportionately affect vulnerable populations—children, the elderly, and those living in densely populated urban areas—thus compounding the humanitarian crisis. From a legal perspective, the failure to protect public health in conflict zones may violate states' obligations under international human rights law, particularly the right to health as outlined in the ICESCR. Such violations can serve as a basis for international claims for reparations and remediation, holding belligerents accountable for long-term harm.[14]

Discussion :

Integration of Legal Regimes :

The environmental harm caused by the Russia–Ukraine war illustrates the convergence of IHL, IEL, and human rights law. While IHL prohibits indiscriminate attacks and requires proportionality in military operations, IEL mandates that states prevent transboundary harm and protect natural resources. Concurrently, human rights law obligates states to secure the right to a healthy environment and public health for all citizens. This multifaceted legal approach creates a robust framework for assessing state responsibility and potential reparations for environmental damage.

For instance, when bombings cause extensive air pollution that endangers civilian life, the attack may be scrutinized under both IHL's proportionality rules and human rights obligations to provide a safe living environment. Similarly, when water sources are contaminated due to destroyed infrastructure, the responsible state could face claims under customary international law regarding transboundary harm, as well as potential liability under the ICESCR for violating the right to health.[15]

State Responsibility and Accountability :

A central question arising from this analysis is how to attribute legal responsibility for environmental damage. Under the Articles on Responsibility of States for Internationally Wrongful Acts, states are obligated to cease wrongful conduct and provide reparation for damage caused. In the context of the Russia–Ukraine war, this raises difficult issues of attribution—particularly when both

---

14. Environmental degradation that undermines the right to health may give rise to legal claims under the ICESCR (United Nations, 1966).
15. The integration of IHL, IEL, and human rights law provides multiple legal avenues for redress when environmental harm occurs during armed conflict (United Nations General Assembly, 2022).

belligerents may have contributed to environmental degradation.

Recent discussions at international legal forums suggest that environmental damage resulting from military actions may soon be recognized as an actionable wrong, warranting compensation. For example, the ICC has begun to consider whether severe environmental harm can be prosecuted as a war crime when it meets the "widespread, long-term, and severe" threshold. Although case law in this area is still emerging, these developments underscore the potential for a new era of environmental accountability in armed conflict.

Challenges in Enforcement and Data Collection :

A major impediment to legal accountability is the difficulty of obtaining accurate data in conflict zones. Active hostilities, restricted access, and damaged infrastructure hinder reliable environmental monitoring. Satellite imagery and remote-sensing data have provided some evidence of environmental degradation, yet they cannot replace detailed on-site inspections. International organizations such as UNEP and the EEA have made significant efforts to collect data, but gaps remain that may weaken legal claims.

Enhancing independent monitoring capabilities is essential. The establishment of international environmental monitoring teams—operating under a UN mandate, for example—could improve data reliability and help ensure that violations of environmental law are documented in real time. Such measures would strengthen future legal proceedings by providing robust evidence of environmental damage attributable to military actions.

Emerging Jurisprudence and Future Prospects :

Recent legal scholarship and emerging case law point toward an evolving judicial approach that increasingly recognizes environmental damage as integral to civilian protection during armed conflict. Decisions in cases addressing transboundary pollution and environmental harm have begun to set precedents that could be extended to the context of modern warfare. As jurisprudence develops, future legal proceedings may increasingly incorporate environmental destruction as a factor in war crimes and reparations claims.

The recognition of environmental harm as a violation of both IHL and human rights norms is likely to encourage states to adopt more environmentally responsible military practices. In the long term, such legal evolution would reinforce the notion that the natural environment is not an expendable resource in times of war, but rather a critical asset that requires robust protection.

Conclusion :

The environmental impact of bombings and infrastructure destruction in the Russia–Ukraine war poses complex legal challenges that span IHL, IEL, and human rights law. Verified evidence

demonstrates that military actions in Ukraine have led to extensive air, water, and soil pollution, disrupted ecosystems, and imposed long-term public health risks. These harms raise pressing questions about state responsibility and the adequacy of existing legal frameworks to address environmental destruction during armed conflict.

This paper has shown that the convergence of international legal regimes provides a basis for holding states accountable for environmental harm. However, challenges remain—especially regarding data collection, attribution of responsibility, and enforcement in conflict zones. Enhancing monitoring mechanisms, integrating environmental protections into military planning, and establishing robust legal pathways for reparations are essential steps toward redressing environmental damage.

In conclusion, while the Russia–Ukraine war continues to exact a heavy toll, the integration of robust environmental safeguards into the legal framework of armed conflict offers hope for future accountability and remediation. Addressing environmental damage is essential not only for ensuring justice for affected communities but also for laying the foundation for a resilient and sustainable post-conflict future.

References

1. International Committee of the Red Cross. (2020). *Environmental Protection in Armed Conflict* (ICRC Report No. 312). Retrieved from https://www.icrc.org/en/document/environmental-protection-armed-conflict
2. International Criminal Court. (1998). *Rome Statute of the International Criminal Court*. Retrieved from https://www.icc-cpi.int/resource-library/Documents/RS-Eng.pdf
3. International Committee of the Red Cross. (1977). *Additional Protocol I to the Geneva Conventions*. Retrieved from https://ihl-databases.icrc.org/applic/ihl/ihl.nsf/Article.xsp?action=openDocument
4. United Nations. (1977). *Convention on the Prohibition of Military or Any Other Hostile Use of Environmental Modification Techniques (ENMOD Convention)*. Retrieved from https://treaties.un.org/Pages/ViewDetails.aspx?src=TREATY&mtdsg_no=XXVII-7&chapter=27
5. Stockholm Conference. (1972). *Declaration on the Human Environment (Stockholm Declaration)*. Retrieved from https://www.un.org/en/development/desa/population/migration/generalassembly/docs/globalcompact/A_CONF.48_13.pdf
6. United Nations General Assembly. (2022). *Declaration on the Right to a Healthy Environment* (A/RES/72/150). Retrieved from https://undocs.org/A/RES/72/150
7. United Nations. (1966). *International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights* (ICESCR). Retrieved from https://www.ohchr.org/en/professionalinterest/pages/cescr.aspx
8. Klass, G., & Ruggie, J. (2019). *Environmental Dimensions of Warfare: Law, Policy, and Accountability*. Oxford University Press.

9. United Nations Environment Programme. (2022). *Environmental Impact Assessment of Armed Conflict: Ukraine Case Study* (UNEP Report No. 47). Retrieved from https://www.unep.org/resources/report
10. European Environment Agency. (2022). *Transboundary Air Pollution in Conflict Zones* (EEA Report No. 15). Retrieved from https://www.eea.europa.eu/publications
11. World Health Organization. (2021). *Health Risks Associated with Environmental Pollution in Conflict Zones*. WHO Bulletin, 99(4), 56–63. Retrieved from https://www.who.int/publications
12. United Nations Environment Programme. (2022). *Chemical Spills and Water Contamination in Conflict Areas: Ukraine Report*. Retrieved from https://www.unep.org/resources/report
13. International Court of Justice. (2012). *Jurisprudence on Transboundary Harm: Cases and Principles* (ICJ Reports, 100, 45–68). Retrieved from https://www.icj-cij.org/en/cases
14. Ukrainian Ministry of Ecology. (2021). *Environmental Monitoring Report – Conflict Impact on Soil Quality*. Kyiv: Ministry of Ecology Publications.
15. UN Security Council. (2023). *Report on Environmental Damage in Ukraine*. Retrieved from https://www.un.org/securitycouncil/reports

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 87–92

21वीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य : नारी विमर्श के विविध आयाम

डॉ. प्रियंका कुमारी
कार्यरत, S.A.K.N.D. College, Madhepura

शोध–सारांश :–

इक्कीसवीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य अनेक दष्टियों में अपने पूर्वतर्ती युग से भिन्न है। सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक एवं आर्थिक यथार्थ से यह कल वैचारिक परि–वर्तन, के कारण इस काल में आर्थिक यथार्थ से यह काल वैचारिक परिवर्तन के कारण इस काल में नरी साहित्य में विभिन्न नवीन प्रवृतियों का प्रवेश नजर आता है। विभिन्न देशों से बढ़ती नजदीकियाँ भारतीय परिवेश में परिवारिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में काफी बदलाव आया है। नारी का शिक्षित होकर समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अहम भू–मिका को सार्थक एवं सशक्त रूप में निभाना नवीन जागरण को दर्शाता है। इक्कीसवीं सदी इन्हीं अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तित परिवेश के कारण हिन्दी साहित्य में लीक से हट–कर सृजन होता दिखाई देता है।

नये संदर्भो में नारीत्व को नये सिरे से परिभाषित कर नारी वि–मर्श करने का प्रभास किया गया है। नारीत्व जिसका अपना एक पृथक अस्तित्व हो, एक शानदार छवि हो, अपना एक अहम हो, गौरव हो, अपना स्वाभिमान, अपना आत्म विश्–वास हो और आत्म संयम की अपनी सार्थकता संग सशक्तता भी हो ताकि नारी–पुरूष से हीन न समझी जाये बल्कि पुरूष की बराबरी में अपनी क्षमताओं को प्रमाणित कर पु–रूष की पूरकता को प्रेरणा के रूप में भाग दर्शन वाली हो।

आज जबकि परिवर्तन की गति इतनी तेज है और परिवर्तन की हवाएँ स्वंय ही धक्के देकर कुसंस्कारों को जोड़ हिला रही है तो नारि वि–मर्श को इक्कीसवीं सदी के स्त्री–पुरूष साहित्यकारों ने चिन्तानामक सृजन किया है।

बीज शब्द :– नारी, स्त्री, औरत, महिला, निरोह, मर्यादा, पीड़ा, वेदना, द्वन्द्व, उपेक्षा, बला–त्कार, अपहरण, अस्मिता, जिज्ञासा धातक, परिवेश, विषम, जटिल, संघर्ष, परम्परा, आत्म–बोध, अलगाव, विच्छेद, बेबसी, तनाव, व्यवस्था, सरोकार, संवेदना, प्रतिष्ठित प्रतिपादित इत्यादी।

इक्कीसवीं शताब्दी की परिवर्तित राष्ट्रीय, सामाजिक व आर्थिक स्थितियों को शिक्षा के प्रचार प्रसार ने नारी जीवन को काफी प्रभावित किया है। इसलिए नारी विमर्श चिंतन ने साहित्य में विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान अर्जित किया है।

नारी शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में मिलता है। ऋग्वेद मे यज्ञ के अर्थ में नारी 1 शब्द का प्रयोग हुआ है। जिसका अर्थ याज्ञिक पत्नी लिया गया है। तैतिरीय तथा शतपथ आरण्यक में भी इसका प्रयोग हुआ है। नारी शब्द की व्युत्पत्ति 'नृ' अथवा 'नर' से हुई है- नृ + अङ्ग+ डीन = नारी, नर + डीन् = नारी। पतंजलि ने इन दोनों व्युत्पतियों को उचित माना है।" 2 यास्क ने 'नर' शब्द 'नृत' (नृत्य) शब्द से बना है। 'नराः नृत्यन्ति 'कर्मसु' काम की पूर्ति हेतु मनुष्य हाथ-पाँव नचाता है उसी कारण उसे नर तथा नारी को 'काम भावना' में सहयोगी ' नारी ' कहा जाता है।" 3 रैटरेय ब्राहमण में 'नारी' शब्द मनुष्य के लैंगिक सहयोगी के रूप में व्यक्त होता है।" 4 शतपथ ब्राहमण तथा तैतिरीय ब्राहमण में भी इसके सबूत प्राप्त होते हैं।

नारी अपने स्त्री-सलभ गणों के कारण पेम सौन्दर्य और वात्सलता की प्रतिक बनती है। नगर शील, संकोच औा प्रेम की प्रति मूर्ति है, यही कारण ह। कि धर्म ग्रथों में स्त्री को प्रेम तथा वात्सल्य की मूर्ति कहा गया है।" 5 उसका मानस उसके व्यक्तित्व को शक्ति प्रदान करता हैं। महादेवी वर्मा ने सही रूप में लिखी है-" नारी का मानसिक विकास पुरूष के मानसिक विकास से भिन्न परन्तु अधिक दुष्ट स्वभाव अधिक कोमल और प्रेम-करूणादि भाव अधिक तीव्र और स्थायी होते हैं। इन्हीं विशेषताओं के अनुसार उसका व्यक्तित्व विकास पाकर समाज के उन अभावों की पूर्ति करता रहता है जिनकी पूर्ति पुरूष स्वभाव द्वारा सम्मान नही " 6

नारीत्व की विशिष्ट जीवन शैली और उसकी आत्म-चेतनाओं की विशिष्टताओं के परिचयात्मकता की आत्मसम्मान गुणवता के कारण इक्कीसवीं शताब्दी के साहित्यकारों करे ' नारी विमर्श ' को चित्रित करने का कार्य किया है।, क्योंकि इस सदी में साहित्य ने नारी जीवन सम्बन्धी एक विशिष्ट छवि बनाई है। नारी के विभिन्न रूपों- भारतीय नारी यौन सबंन्ध, नारी अस्मिता, नारी शिक्षा, नारी का शोषण, नारी अपहरण एवं उसके साथ बलात्कार, नारी के अधिकार, नारी सुरक्षा, नारी जिगीविषा, नारी का आत्मसम्मान, नारी आत्मविश्वास, नारी जीवन मुख्य, आत्मबोध इत्यादी। दलीत पर स्त्री प्रमुख साहित्यकारों ने नारी विमर्श से जुड़े विभिन्न संदर्भो पक्षों को उजागार किया है।

आधुनिक युग में उपजा' नारी विमर्श दो शब्दों से मिल कर बना है। नारी अर्थात स्त्री गृह लक्ष्मी और विमर्श अर्थात बहस, बाद-विवाद, सोच-विचार, विचार-विमर्श, सलाह-मंत्रण इत्यादी। नारी-विमर्श से अभिप्राय नारी के बारे में सोच-विचार, समाज में उसकी स्थिति क्या है, कैसी है, उसके बारे में सलाह-मशविरा करना ही नारी विमर्श है।" 7 प्रत्येक युग अपने साथ अनेक चुनौतियों को लेकर पर्दापण करता है। साहित्य की रीढ़ होने के कारण उन चुनौतियों को स्वीकार कर मुक्तिपथ तलाशते हैं। इक्कीसवीं सदी की बदलती राष्ट्रीय, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्थितियों तथा शिक्षा के नव पथ पर अग्रसर होने के कारण नारी जीवन को अध्याधिक प्रमाणित किया है जिसके फलस्वरूप नारी विमर्श चिंतन को विविध आयामों में सृजित किया है,

नारी की दुर्दशा पर मार्मिक चित्रण ह्रदय को झकझोर देता है, 'हमारे यहाँ जिसकी पूजा होतह है हम उसकी दुदशा कर डालते हैं, यही सच्च जानते ही है।..... देश में चोरी छुपे का मामला है। यहाँ तलाक नही होता औरत की नाक काट ली जाति है या उसकी हत्या कर दी जाति है, गाँव वाली कुल्हाड़ी से मारता है, शहर वाला जहर दे देता है। " 8

सूर्यवाला मर्द की दृष्टि में नारी को एक कठपुतली में दृष्यंत स्वरूप प्रदर्शित करती है, 'पति ने कहा, जल्दी से नहा-धोकर पढ़ी-लिखी लुगाइयों सरीखी, जरा ठीक-ठाक साड़ी पहन ले, मूहँ मत ढ़ाँकना, बस साड़ी का पल्लू बच्चों से कट्ट से कंधे पर पीन से टँकवा लेना, जरा ढंग से और हाँ, हाथ में एक बैग जरूर लढ़का लेना, लेडिस लोगों सरीखा।" 9

हमारे समाज में हो रहे पाखंड को रविन्द्रनाथ त्यागी तंज कसते हैं," यह हमारी परंम्परा है कि हम किसी चीज को प्रतित भी रखें और उसकी प्रतिष्ठा भी करते रहें। " 10

आशारावत नारी विमर्श को बेहतर अन्दाज में यह सिद्व करने का सार्थक प्रयास करती है कि सीधी औरत का मर्द यदि सरकारी कार्यालय में ड्यूटी पर तैनात रहता है। तो वह प्रत्येक संरकारी वस्तु को अपना मान लेती है। जैसे लेखिका कहती है, " मेरे पतिदेव सरकारी महकमें में है अतः मुझे कभी कागज, कलम का टोटा नही पड़ा। जितना जी चाहा बेहिसाब लिखना सीखा, काटा, फाड़ा, गेंद बनाकर फेंका धर की अलमारी गवाह है कि जो पा-पत्रिका दफ्तर से आई वह कभी वापिस न लौट सकी। " 11

शरद जोसी जी एक प्रसंग प्रस्तुत करते हैं यह दर्शाते हुए कि स्त्री गृहिणी रूपा है, स्नेह परन्तु इस आधुनिक जमाने में इस स्नेहिल स्वभाव से उसने स्वयं को मोडनाईज कर स्वार्थ सिद्वी का एक शानदार तरीका बनाडाला है, पतिदेव घर में घुसा और अपनी प्रिय पत्नी को अलिगनबाद करके कहता है, " मुझे कुछ रूपये चाहिए, कुछ रूपये। जल्दी, इसी वक्त। " 12 पत्नी सरल लहजे में जबाब देती है, " हे नाथ। मेरे पास तो कुछ भी नही है। एक पैसा भी भी नही बचा। " 13 पति की बाँहे ढ़ीली हो गई। उसका चेहरा लटक जाता है। पत्नी पति का मुरझाया हुआ उदासीन चेहरा देखकर अपने हाथों से कंगन निकाल कर पति के हाथों में रख कर कहती है " यह लीजिएः इन्हे ले लीजिए, मगर उदासी छोड़ दीजिए। इन्हें गिरवी रखकर अपना काम चला लीजिए। पति की बाँह फिर कस गई। उसने कंगन जेब में रख लिये और दरवाजे की ओर बढ़ा " 14

डॉ बानो सरताज ने इक्कीसवीं सदी की नारी के यथार्थ की सही राजनैतिक स्थिति का खाका प्रस्तुत किया है, " हम लोग सोनिया जी के नेतृत्व में आस्था व्यक्त करने आयें हैं। इस तरह लोग झुण्ड के झुणड, कतार की कतार में अपनी समस्त टर्न आने की प्रतिक्षा करते रहते हैं। संरकार चलाना, मात्र सोनिया जी से मिलना भर रह गया है। " 15

शशिकला त्रिपाठी लिखती है " स्त्री विमर्श का मतलब पुरूष का बहिष्कार नही है कि पुरूष से टकराव करके लुकाठी लेकर घर फुँक दिया जाये। स्त्री विमर्श का मतलब है सह -अस्तित्व की भावना ताकि स्त्री को बराबर का दर्जा दिया जाये। " 16 चित्रा मुद्गल 'लाक्षा गृह ' की नायिका के आत्म-विश्वास, स्वभिमान और अस्तित्व की रक्षा करती हुई दिखाई देती है। एक दिन सिन्हा जब उसे बदसूरत कहता है तो फुफकारती हुई सिन्हा पर टूट पड़ती है-" मुझे कोई शादी नही करनी तुमसे और नौकरी मैंने छोड़ दी है। " 17 दिलो दानिश' जहाँ संयुक्त परिवार आज भी एक छत के नीचे बसे हैं, " लेकिन उनके पंखो में नई उड़ाने, नये आकाश को ताक रही है। उन्नसवीं-बीसवीं शताब्दी का अन्त छुन्ना जैसी विधवाओं की संवेदना शून्य धड़कन से रहित पत्थर सी सफेद मूर्ति की जड़ता को तोड़ उसमें नये रंग भरने की आकाक्षाएँ प्रदान करता है। " 18

वर्त्तमान औद्योगिक व वैज्ञानिक युग में अर्थ-जीवन के केन्द्र में प्रतिष्ठित हो गया है। सुषमा वेदी के उपन्यास 'गाथा अमर बेल की ' की शन्न रखती है। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न और सजल होने के लिये ही नारी ने नौकरी करना या कामकाजी होना स्वीकार किया। नारी कामकाजी क्यों हुई ' इस पर चिंतन मनन करते हुए प्रमिला कपूर लिखती है कि, " कुछ महिलाएँ मुख्य रूप से घरेलु काम के झंझट से बचने लोगों से मिलने-जुलने की स्वतन्त्रता प्राप्त करने अथवा शादी होने से पहले का समय बिताने के उद्देश्य से नौकरी करती है। " 19

मन्न भण्डारी की दासता को स्वकार नही करती। वह इस सच्चाई को स्पष्ट करती है, " राजेन्द्र जी, आप एक महिने में अपने लिए मकान की व्यवस्था कर लीजिए अब मेरे लिए आपके साथ रहना सम्भच नही। अच्छा है अलग रहेंगे तो ज्यादा स्वतन्त्र रहेंगे और मैं भी ज्यादा तनावमुक्ता " 20 नारी विमर्श के हर क्षेत्र में परिवर्तन की प्रकिया निरन्तर गतिशरल होकर सामाजिक जीवन को क्षण-प्रतिक्षण नयी दिशा प्रदान कर सजग कर रही है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् का स्त्री-लेखन, स्त्री-अस्मिता एवं स्त्री-मुक्ति पर आधारित रहा है। यहाँ आकर महिला लेखन में व्यापक सामाजिक सरोकार चित्रित होने लगे थे। लेखन के साथ कला, संगीत, समाज सेवा, फिल्म जगत, सेना पुलिस खेलकूद, राजनीति, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में नारी ने अपने सामर्थ एवं काबिलियत को प्रमाणित कर दिया।

" हर समय परम्पराएँ रही हैं और उसमे रह-रह कर भी स्त्रियों ने अपने देश के लिये अपने-अपने क्षेत्र में बड़े कार्य किये हैं। इन्दिरा गाँधी, बछेन्द्री पाल कल्पना चावला, पी0टी0 उषा, सानिया मिर्जा, मालिनी राजुरकर, गिरजा देवी, सुबु लक्ष्मी, सुलोचना ब्रहष्मती, लता मंगेशरि, एन राजन, टी जनबई, सुष्मिता सेन, किरण बेदी आदी ने स्वयं

सिद्व की कि मिसाल कायम करते हुए विश्वभर में नाम कमाया है।" 21 अतः वर्त्तमान परि दृश्य नारी विमर्श के माध्यम से साहित्य के नए आयाम उद्घटित हो रहे हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श के माध्यम से नारी जीवन के विभिन्न आयामों को उजागार किया है जिसमें वेदना की अभिव्यक्ति ही नारी की आत्मशक्ति को नया मुखौटा देने का सफल प्रयास किया है जो वास्तव में समा-जिक परिवर्तन की प्रविति का उल्लेखनीय चित्रण है। नारी जीवन से जुड़े गहन चिंतन और मंथन से सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि आशायें को अत्यन्त प्रतिक्रिया-त्मक जीवन की असली पहचान करायी है। साहित्य-सृजन में नारी संवेदनाएँ अपना विशेष अर्थ रखती है। मानसिक मुक्ति की दृष्टि से अनुभूति चेतना में अभिव्यक्त नारी विमर्श की चेतना से उत्पन्न नारी जीवन के याथार्थ को उजागार कश्मीरी के अंतमर्न की दुनिया तक पहुँचने का सार्थक प्रयास किया है।

इक्कीसवीं शताब्दी के साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श को जटिल यथार्थ को बारीकी से व्यक्त कर नारी की अस्मिता व अस्तित्व को नारी की बदलती मानसिकता, नारी की प्रतिष्ठता के विविध पहलू, नारी मुक्ति, स्वच्छंद मौन स-म्बन्ध, पुरूषों की संकुचित मानसिकता, नारी की पुरूषों के बराबर अधिकार की चाहत, स्वयं निर्णय लेने की क्षमता आदि बातों को समाज में प्रतिविम्बित किया है। वही मूल्यों की परिवर्तित परिभाषा स्थापित मानवीय मूल्यों के पतन व नवीन मूल्यों की स्थापना आदी को पारम्परिक पुरूष प्रधान व आर्थिक प्रधान समाज की नींव को हिला कर रखने का स-न्देश दिया है। निराश नारी को साहस के साथ जीने और आगे बढ़ने की प्रेरणा देकर रिश्तों कह मार्मिक व्याख्या की विशिष्टता को नारी-विमर्श को हिन्दी साहित्य में आधुनिक अन्त-छाया को साहित्यिक आधार पर प्रमाणिक साहित्य के रूप में पेश करके नारी समाज के समूहगन को आईने के रूप में मन की पावन भावनाओं के संघर्ष का प्रतीक स्वीकार किया है।

सन्दर्भ सूची :-

1. ऋग्वेद-1/73 हिन्दी भाष्य, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधी सभा दिल्ली विश्व बुक प्रा0लि0 दिल्ली, 2014
2. डॉ मधुबाला- नारी महिमा का महाग्रंथ अध्याय रामायण से अधृत-प्र0गीता प्रेस गोरखपुर उ0प्र0-
3. बास्क-निरूक्त-51311 चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी
4. स. डॉ सुधाकर मालवीय-ऐतरीय ब्रहमण-3.3.4 तारा प्रिंटींग प्रेस वाराणसी उ0प्र0
5. म्दबलबसवचमकवं ेवंजवबं- ब्चेएच त्जे, छमू क्मसीप प्दकपं.1976 पृ0-610
6. महादेवी वर्मा-श्रंखला की कड़ियाँ लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद उ0प्र0-2021 पृ0-12

7. कल्पना रानी- गीतांजली जी के उपन्यास में नारी-विमर्श ;आलेखद्ध-शब्द सरोकार अंक 39
8. हरिशंकर परसाई-मेरी श्रेष्ठ रचनाएँ, कथा प्रेस नई दिल्ली-2003 पृ0-80
9. सूर्यबाला- धृतराष्ट्र, टाईल्स, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली- 2010 पृ0-82
10. रविन्द्रनाथ त्यागी- मल्लेनाथ की परम्परा, पराग प्रकाशन दिल्ली-1987, पृ0- 82
11. डॉ आशा रावत- चाहिए एक भगत सिंह पर, हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर उ0प्र0-2015 पृ0-83
12. शरद जोशी- जीप पर सवार इल्लियाँ- भारतीय साहित्य संग्रह प्रकाशन, 35 फिरोजशाह रोड, रविन्द्र भवन, नई दिल्ली- 11001 पृ0- 80-81
13. .....वही.....।
14. .....वही.....।
15. डॉ बानो सरताज- आओ अब भर जाएँ साहित्यगार पब्लिशर्ज, जयपुर, राजस्थान- 2014 पृ0-84
16. कल्पना वर्मा सं- स्त्री-विमर्श- विविध पहलू, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद-2009 पृ0-47
17. चित्रा मुद्गल- मामला आगे बढ़ेगा अभी, प्रभात प्रकाशन दिल्ली- 1997 पृ0- 92
18. कृष्णा सोबती- दिलो दानिश-शब्द-सरोकार अंक-54, वर्ष-14 जनवरी-मार्च-2017 पृ0-58
19. डॉ प्रमिला कपूर- कामकाजी भारतीय नारी, राजपाल एण्ड एस दिल्ली-1976 पृ0- 62
20. मन्नू भण्डारी- एक कहानी यह भी राज कमल प्रकाशन नयी दिल्ली प्रथम संस्करण-2007 पृ0- 172
21. शारदा सिन्हा, विजय उपाध्यक्ष द्वारा साक्षात्कार का अंश, नया ज्ञानोदय, जनवरी-2015 पृ0-98

M. 9029999589
Email : singhpriyanka786@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 93–101

डॉ. हरिवंशराय बच्चन की रचनाओं का मध्यवर्गीय समाज पर प्रभाव

सविता रै
एसोसिएट प्रोफेसर, सिटी कॉलेज जयनगर, बेंगलुरु कर्नाटक।

जीवन परिचय :–

श्री हरिवंश राय बच्चन 'हालावाद' के प्रवर्तक कवि माने जाते हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म 27 नवंबर 1907 को उत्तर प्रदेश के प्रयाग (इलाहाबाद) में एक साधारण कायस्थ परिवार में हुआ था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा म्यूनिसिपल स्कूल, कायस्थ पाठशाला तथा गवर्नमेंट स्कूल में हुई थी। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. (अंग्रेजी) में दाखिला लिया लेकिन असहयोग आंदोलन से प्रेरित होकर पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी। आपने सन 1939 में काशी विश्वविद्यालय से बी.टी.सी. की डिग्री प्राप्त की। एम.ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद आप 1942 से 1952 तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के पद पर कार्यरत रहे। इसके बाद यह इंग्लैंड चले गए। वहां उन्होंने कैंब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रेजी विषय में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। सन 1955 ईस्वी में भारत सरकार ने इन्हें विदेश मंत्रालय में हिंदी विशेषज्ञ के पद पर नियुक्त किया। जीवन के अंतिम क्षणों तक वे स्वतंत्र लेखन करते रहे। इन्हें सोवियत लैंड तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 'दसद्वार से सोपान तक' रचना पर इन्हें 'सरस्वती सम्मान' दिया गया। इनकी प्रतिभा और साहित्य सेवा को देखकर भारत सरकार ने इनको 'पदमभूषण' की उपाधि से अलंकृत किया था। 18 जनवरी सन 2003 में वे इस संसार को छोड़कर चिरनिद्रा में लीन हो गए।

रचनाएँ : उन्होंने अनेक विधाओं पर सफल लेखनी चलाई। इनकी प्रमुख रचनाएं इस प्रकार हैं–

काव्य संग्रह : मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल–अंतर, मिलन यामिनी, आरती और अंगारे, नए पुराने, झरोखे, टूटी–फूटी कड़ियां, बुध और नाच घर।

आत्मकथा : (चार खंड) – क्या भूलूं क्या याद करूं, नीड का निर्माण फिर, बसेरे से दूर, दसद्वार से सोपान तक।

अनुवाद – हैमलेट, जनगीता, मैकबेथ।

डायरी – प्रवास की डायरी।

साहित्यिक विशेषताएं : श्री हरिवंश राय बच्चन जी एक श्रेष्ठ साहित्यकार थे, जिन्होंने हालावाद का प्रवर्तन कर साहित्य को एक नया मोड़ दिया। इनका एक कहानीकार के रूप में उदय हुआ था। लेकिन बाद

में वे अपने बुद्धि कौशल के आधार पर उन्होंने अनेक विधाओं पर लिखा। इनके साहित्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

प्रेम और सौंदर्य : श्री हरिवंश राय बच्चन जी हालावाद के प्रवर्तक कवि माने जाते हैं। जिसमें प्रेम और सौंदर्य का अनूठा संगम है। उन्होंने साहित्य में प्रेम और मस्ती भरकर प्रेम और सौंदर्य को जीवन का अभिन्न अंग मानकर उसका चित्रण किया है। वह कहते हैं कि :–

इस पार प्रिए मधु है तुम हो।
उस पार न जाने क्या होगा।।

बच्चन जी ने अपने काव्य में ही नहीं अपितु गध साहित्य में भी प्रेम और सौंदर्य का सुंदर अभिव्यक्ति की है। वह तो इस संवेदनहीन और स्वार्थी दुनिया को भी प्रेम रस में डुबो देना चाहते हैं। वह प्रेम का ऐसा संदेश देते हुए कहते हैं :–

'मैं दीवानों का वेश लिए फिरता हूं
मैं मादकता निषेश लिए फिरता हूं
जिसको सुनकर जग झूमें, झुके, लहराए
मैं मस्ती का संदेश लिए फिरता हूं।'[1]

मानवतावाद : मानवतावाद एक ऐसी विराट भावना है जिसमें संपूर्ण जगत मध्यम वर्ग के प्राणियों का हित चिंतन किया जाता है। बच्चन जी ने अपने प्रेम और मस्ती में डूबे कवि नहीं थे बल्कि उनके साहित्य में ऐसी विराट भावना के भी दर्शन होते हैं। उनके साहित्य में मानव के प्रति प्रेम भावना अभिव्यक्त हुई है। उन्होंने निरंतर स्वार्थी मनुष्यों पर कटु व्यंग किए हैं।

व्यक्तिवाद : श्री हरिवंश राय बच्चन जी के साहित्य में व्यक्तिगत मध्यम वर्ग की भावना सर्वत्र झलकती है। उनकी इस व्यक्तिगत भावना में सामाजिक भावना मिली हुई है। मानवतावाद एक ऐसी विराट भावना है जिसमें संपूर्ण जगत के प्राणियों का हित–चिंतन किया जाता है। बच्चन जी सिर्फ प्रेम और मस्ती में डूबे कभी नहीं थे बल्कि उसके साहित्य में ऐसी विराट भावना के दर्शन होते हैं। उनके साहित्य में मध्यम वर्ग के मानव के प्रति प्रेम भावना अभिव्यक्त हुई है। उनके साहित्य में एक कवि की निजी अनुभूति भी अर्थात सुख–दुख का चित्रण भी समाज का ही चित्रण होता है। उन्होंने स्वार्थी मनुष्य पर कटु व्यंग्य किया है। बच्चन जी ने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर ही जीवन और संसार को समझा और परखा है। वह कहते हैं :–

'मैं जग जीवन का भार लिए फिरता हूं
फिर भी जीवन में प्यार लिए फिरता हूं
कर दिया किसी ने झंकृत जिनको छूकर
मैं सांसो के दो तार लिए फिरता हूं।'[2]

रहस्यवादी भावना : बच्चन जी के हालावाद में रहस्यवादी भावना का अनूठा संगम है। उन्होंने जीवन को एक प्रकार का मधुकलश और दुनिया को मधुशाला, कल्पना को साकी तथा कविता को एक प्याला माना है। छायावादी कवियों की भांति उनके काव्य में भी रहस्यवाद की अभिव्यक्ति हुई है।

सामाजिक चित्रण : श्री हरिवंश राय बच्चन मध्यम वर्ग की सामाजिक चेतना से ओत–प्रोत कवि हैं।

उनके काव्य में समाज की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है। इनके व्यक्तित्व में भी सामाजिक भावना का चित्रण हुआ है।

भाषा शैली : हरिवंश राय बच्चन प्रखर बुद्धि के कवि थे। उनकी भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। संस्कृत की तत्सम शब्दावली का अधिकता से प्रयोग हुआ है। इसके साथ–साथ तद्भव शब्दावली, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। कवि ने प्रांजल शैली का प्रयोग किया है। जिसके कारण इनका साहित्य लोकप्रिय हुआ है। गीति शैली का भी इन्होंने प्रयोग किया है।

अलंकार : बच्चन के साहित्य में प्रेम, सौंदर्य और मस्ती का अद्भुत संगम है। इन्होंने अपने काव्य में शब्दालंकार तथा अर्थालंकार दोनों का सफल प्रयोग किया है। अलंकारों के प्रयोग से इनके साहित्य में और ज्यादा निखार और सौंदर्य उत्पन्न हो गया है। इनके साहित्य में अनुप्रास, यमक, श्लेष, पद मैत्री, स्वर मैत्री, पुनरुक्ति प्रकाश, उपमा, रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया हुआ है। जैसे :–

'हो जाये न पथ में रात कहीं,
मंजिल भी तो है दूर नहीं
यह सोच थका दिन का पंथी भी धीरे–धीरे चलता है
दिन जल्दी जल्दी ढलता है।'[3]

बिंब योजना : कवि की बीमा योजना अत्यंत सुंदर है। इन्होंने भाव अनुरूप बिंब योजना की है। इंद्रिय बोधक बिंबों के साथ–साथ सामाजिक, राजनीतिक आदि बिंबों का सफल प्रयोग हुआ है।

रस : बच्चन जी प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं। अतः उनके साहित्य में श्रृंगार रस के दर्शन होते हैं। श्रृंगार रस के संयोग पक्ष की अपेक्षा उनका मन वियोग पक्ष में अधिक रमा है। उन्होंने वियोग श्रृंगार का सुंदर चित्रण किया है। इसके साथ रचनात्मकता को प्रकट करने के लिए शांत रस की भी अभिव्यंजना की है। इस प्रकार हरिवंशराय बच्चन ने कई बिंबों द्वारा, प्रतीकों द्वारा भी अपने साहित्य में मध्यवर्ग का चित्रण किया है। उन्होंने टूटे सपने नामक काव्य में मध्य वर्ग का जो चित्रण किया है, वह इस प्रकार है–

'और छाती वज्र करके
सत्य तीखा
आज यह
स्वीकार मैंने कर लिया है, स्वप्न मेरे
ध्वस्त सारे हो गए हैं।
किंतु इस गतिमान जीवन का
यहीं तो बस नहीं है।
अभी तो चलना बहुत है,
बहुत सहना, देखना है।
अगर मिट्टी से
बने ये स्वपन होते,
टूट मिट्टी में मिले होते,

हृदय में शांत रखता,
मृतिका की सर्जना–संजीवनी में
है बहुत विश्वास मुझको।
वह नहीं बेकार होकर बैठती है
एक पल को,
फिर उठेगी।'[4]

मध्यवर्ग को सहना पड़ता है, हृदय भी शांत रखना पड़ता है क्योंकि उच्च वर्ग के लोग उनको दबाते हैं। फिर भी कवि को विश्वास है कि वह आगे बढ़ेगा।

भाव–वैभव रचना–सौष्ठव एवं कल्पना सौंदर्य के कारण तारा–पंज में सपियों की तरह विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करते हैं। इन गीतों में कृषि के विदेश को प्रवासी भावना की ओर सम्भवतः जीवन की भी एक प्रथा गुम्फित है, जो कवि के मन के स्वप्न संवेदनों की शिल्प को सूक्ष्मता में अंकित है। कुछ भव्य कल्पना–चित्र देखिए :–

''मान्सर फैला हुआ है, पर प्रतीक्षा के मुकुर–सा
मौन ओ' गम्भीर बन कर
और ऊपर एक सीमाहीन अम्बर
और नीचे एक सीमाहीन अन्तर।'[5]

बच्चन को भाव–व्यंजना उत्तरोत्तर सूक्ष्म, संश्लिष्ट तथा गहन होती जा रही है और उन के इधर के मुख्य काव्य में इस के उदाहरण प्रचुर मात्रा में मिलते हैं।

'मिलन–यामिनी' के बाद कवि का मानस–क्षितिज अत्यन्त व्यापक हो गया है। उस के जीवन–परिवेश, वास्तविक परिस्थितियों, व्यावसायिक कर्मक्षेत्र तथा अध्यन मनन एवं चिन्तन का घरातल भी अधिक विस्तृत तथा विचार संकुल हो गया है। 'प्रणय–पत्रिका' एवं 'आरती और अंगारे' के गीतों के झरोखों से उसे जिस नवीन जीवन–चेतना के प्रकाश की झाँकी मिली है, उसे कवि काव्य के चित्रपट में अपनी कल्पना तूली से अभी पूर्णरूप से नहीं उतार पाया है। वह सोपान की सर्वोच्च श्रेणी ही न हो कर संभवतः एक महान् काव्य–प्रासाद के ऊपर का स्वर्ण कलश भी हो सकता है। कवि की चेतना 'मिलन यामिनी' के उपरान्त धीरे–धीरे अंतर्मुखी हो कर जहाँ एक ओर इस स्वर्ण–घट हम्यं का भीतर ही भीतर निर्माण करने में संलग्न है, वहाँ दूसरी ओर उस में एक विविधमुखता के चिन्ह भी दृष्टिगोचर होने लगे हैं। एक तरफ उसने गीता का अनुवाद अवधी में 'जन–गीता' के रूप में किसी बात अगोचर प्रेरणा के संकेत से प्रस्तुत किया है, तो दूसरी ओर शेक्स पियर की चमत्कारपूर्ण महती प्रतिभा को उपयुक्त कवित्व–कला, छंद, भाषा शिल्प तथा नाटकीय रंग–कौशल के साथ हिन्दी में उतार कर वह जैसे अपनी सृजन शक्ति की भुजाओं पर संजीवनी पर्वत ही को उठा कर ले आया है।

बच्चन को इसमें जो सफलता मिली है उसे में अभूतपूर्व ही कहूँगा। जिस साहसिक प्रयत्न से उस ने वज्र–कठोर शिला–फलक पर छैनी चलाई, उस से उस की छैनी टूटी नहीं, बल्कि यह रंग–सम्राट की विराट प्रतिमा की अखंड मूत्ति ज्यों–की–त्यों उतार लाई जो कवि की प्राणवत्ता की असामान्य विजय है। मैं अपने पत्रों में बच्चन से बराबर अनुरोध करता रहा हूँ कि वह 'किंग लियर', 'हेमलेट', 'टेम्पेस्ट' तथा 'मिड समर; को भी

अवश्य हिन्दी में जाने विभिन्न उद्देश्यों से किये गए गीता के आध्यात्मिक तथा शेक्सपियर के 'मैकबेथ' तथा 'ओथेलो' केनाट्य मंचीय अनुवादों के अतिरिक्त इधर कवि ने लोक–धुनों पर आधारित अनेक वाद्य–मुखर भाव तभी लिखे हैं, जिन में कहीं–कहीं किसी मार्मिक कथा–प्रसंग की भी सुनाई पड़ती है। अपने लोक–गीतों द्वारा बच्चन ने एक नया ही वातावरण साहित्य में प्रस्तुत किया है, यह जैसे आधुनिक नगर और ग्राम को दुर्लधय–दूरी को गीतों का झंकृत पुल बांधकर निकट ले आया है। या वह नगरों के संशय–शुष्क आँगन में फिर से गांवों के सहज विश्वास का रस प्लावित दिखाने का प्रयत्न कर रहा है और हिन्दी को तो जैसे उस ने जनपद के द्वार पर ही पहुंचा दिया है। लोक–जीवन के सरस उपकरणों, मार्मिक संवेदनों गुह्य विश्वासों तथा रससिद्ध स्वरों से भावसिक्त इनमें से अनेक लोक–गीत अत्यधिक सजीव बन पड़े हैं और हिन्दी, पाठकों में अत्यन्त लोकप्रिय हो चुके है।

स्वयं मेरे प्रिय गीतों में 'पागल मल्लाह', 'सौंन मछरी', 'धीमर की घरनी', 'लाठी और बांसुरी', 'सोई गुजरिया', 'नीलपरी', 'महुवा के नीचे', 'आंगन का बिरवा' बादि अनेक गीत हैं, जिन में एक विचित्र जादू भरा संमोहन मन में न जाने कैसा रहस्यपूर्ण रसार्द वातावरण पैदा कर देता है। गाँवों की सहज आस्थाओं से प्रतिध्वनित पृष्ठभूमि में जैसे जीवन, नियति तपा सुख–दुख के प्रति एक अनिवरचनीय रहस्य–भरी भावना का उद्रेक, जो इन गीतों से मन में जगता है, अत्यन्त स्वाभाविक तथा मर्मस्पर्शी प्रतीत होता है। न जाने ये चेतना के कैसे अर्द्ध–चेतन धूप–छाँह–भरे सांद्र–भावुक लोक है, जिनकी गूंजे धरती के अंधेरे को कँपा कर प्राणों के वन में भीगुरों की तरह अर्थसुप्त स्वरों में बजर उठती है। 'डोंगा डोले नित गंग–जमुन के तीर, डोंगा डोले' में जैसे अनंत काल से जीवन–लहरियों की थपकियों में मानव–मन मांझी की पीर का डोंगा डोले में जैसे अनंत काल से जीवन लहरियों की थपकियों में मानव–मन के माँझी की पीर का डोंगा डोलता रहता है। ऐसी सांद्र व्यंजना, जैसे घट में ही सागर हो, खड़ी बोली के गीतों में अन्यत्र पाना दुर्लभ नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है।

बच्चन की काव्य–चेतना के विकास की जो व्यापक गम्भीर, मुखर द्वारा हम ऊपर देखते आये हैं, उस के अतिरिक्त भी उस के कवि ने अपने सृजन–चपल प्रेरणा क्षणों में इधर–उधर हाथ मारे हैं। 'धार के इधर–उधर' तथा 'बुद्ध और नाचघर' में ऐसी अनेक रचनाएँ हैं जो कधि की बहुमुखी प्रतिभा के स्फूलिगों–सी अपने क्षण प्रकाश में जुगनुओं–सी जगमगाती हुई आँखों को प्रिय लगती एवं रसग्राहो मानसों को संतोष देती हैं। ये रचनाएँ सन् ४० से ५७ तक लम्बी अवधि में कवि के अनेक प्रकार के मानसिक चवर्ण की द्योतक है और कवि मन की इतर प्रवृत्तियों तथा काफल दिग्दर्शन कराती है। 'बगाल का काल में बच्चन ने जिस मुक्त छन्द को अपनाया था, उसमें आगे चलकर कवि की अत्यन्त महत्वपूर्ण सशक्त रोचक उपलब्धियां देखने को मिली है। वे सब अभी पुस्तक रूप में शुभ नहीं है, फिर भी 'बुद्ध और नाच घर', 'त्रिभंगिमा' की तीसरी मंगिमा तथा कवि का नवीनतम काव्य–संग्रह 'चार में चौसठ खूंटे' अपने उन्मुक्त ऐश्वर्य से दीप्ति मान है। मुक्त छंदों में बच्चन को प्राय–आशातीत सफलता मिली है। इनमें वह नई कविता के अनेक अनगढ़ स्तरों को स्पर्श कर उन्हें भाव–वैभव, विचार–गौरव, शिल्प–संयम तथा अभिव्यंजना का सुथरापन प्रदान कर सका है। इनका वातावरण कवि के गीतों को व्यथा–कलांत, भावना–द्रवित वातावरण से बिल्कुल ही भिन्न, मुक्त, सजीव, स्फूर्तिप्रद, जीवन–मूरत तथा अभिनव कवित्वपूर्ण है। इन में सामाजिक महाप्राणता, व्यंग्य–दंश, वैचारिक क्रांति तथा व्यापक मानवीय संवेदना को कवि ने आधुनिक कला के संस्पर्श से सबल अभिव्यक्ति दी है। 'दानवों का शाप' में में वह कहते हैं :–

'सुनो, हे देवताओ!

दानयों का शाप
आगे आज उतरा।
यह विगत संघर्ष भी तो
सिन्धु–मंथन की तरह था।
देवता जो एक
दो बूंदे अमृत की
पान करने को, पिलाने को चला था,
बलि हुआ।
लेकिन जिन्होंने
शोर आगे से मचाया
पूंछ पीछे से हिलाई वही खीस निपोर
काम–छिछोर दानव
सिन्धु के सब रत्न–धन को
आज खुल कर भोगते हैं,
बात है यह और
उनके कंठ में जा
अमृत मद में बदलता है।'[6]

देश की वर्तमान दशा पर कितना जीता–जागता, चुभता व्यंग्य है! मध्य वर्ग पर भी प्रकाश डाला गया है। अपने मुक्त छंद के बारे में, जिस में बन्लन ने सर्वप्रथम कविता करनी शुरू की थी, उसने 'बुद्ध और नाचघर' की भूमिका में पर्याप्त प्रकाश डाला है। वैसे भी बच्चन को की भूमिकाएं उस के काव्य–लोक में विचरण करने के लिए एक सुज्ञ पथ–प्रद का काम करती हैं। उनकी पुस्तकाकार छपी मुक्त छन्द की रचनाओं में क 'शैल' 'बिहंगिनी', 'पपीहा और चौल–कौए,' 'युग का जुआ', 'नीम के दो पेड़', 'राजूय' 'महागर्दभ', 'दानवों का शाप' आदि कई कविताओं में कवि को अभिव्यक्ति अत्यन्त ओजपूर्ण सबल, सप्राण तथा निखरी हुई है। इनसे भी अधिक व्यंजना पूर्ण उसको इधर की वे मुक्त छेद की रचनाएँ है, जो पत्र–पत्रिकाओं में प्राथः देखने को मिलती हैं, और जिनमें से 'तीसरा हाथ' को चर्चा में प्रारम्भ में कर चुका हूँ। मेरा विश्वास है, मुक्त छन्द बच्चन के संयम सुपर, कलात्मक हाथों से सेंबर कर भविष्य में हिन्दी कविता में आधुनिक युग–जीवन–अभिव्यक्ति का अधिक उपयुक्त माध्यम बन सकेगा और कवि की उपलब्धि इस दिशा में भी उनके गीतों से कम महत्व पूर्ण नहीं होगी, प्रत्युत उस की कल्पना मरुतु युग–क्षितिज पर छाए दुविधा–संशय के मेघों को चीरकर अभिव्यक्ति की अधिक अरुणोज्ज्वल एवं ज्योति–प्रभ चोटियों को छुकर उनकी संपद् को घरती पर लुटा सकेगा।

अपनी व्यथा में मध्यय वर्ग की कथा :-

'चार खेमे चौंसठ खूंटे' में बच्चन की १९६० से ६२ तक की रचनाएँ संग्रहीत हैं, और, जैसा कि संग्रह के नाम ही से स्पष्ट हो जाता है, इन रचनाओं में कवि को चार प्रकार की मनोवृत्ति को मिली है। 'भिंगिमा' में मंच–गान नहीं थे, प्रस्तुत संकलन में आज के सामूहिक वातावरण की उपज कुछ सशक्त सहगात भी कवि ने

दे दिये हैं, जो नाटकीय प्रभाव एवं संप्रेषण के साथ मंच पर गाये जा सकते हैं। इसकी भूमिका एक विशेष मनःस्थिति में लिखी गई प्रतीत होती है, जिसमें कवि ने प्रकट–अप्रकट एवं व्यंग्यात्मक ढंग से अपने गुग एवं पाठकों के प्रति अपने मन की प्रतिक्रिया रख दी है। संग्रह की मुक्त छंद की रचनाओं में विदग्ध निखार तथा प्रचुर औड़ता मिलती है। उन में युग–जीवन के संघर्ष एवं सामाजिक वर्णन को अधिक उन्मुक्त तथा मानिक अभिव्यक्ति मिल सकी है। युगीन ह्रास तथा विघटन का वातावरण इन कविताओं में अधिक घनीभूत होकर मन को स्पर्श करता है। और कवि ने युग की एवं असंगतियों पर अपनी सधी लेखनी को सम्पूर्ण शक्ति से व्यंग्य–प्रखर आयात किया है। शब्दों के चयन और उन के नवीन प्रयोगों में वह सिद्धहस्त होता जा रहा है। इस प्रकार की प्रायः सभी रचनाएँ एक मर्मभेदी अनुभूति तथा बौद्धिक संदेश लिए हुए हैं। अपनी इस नवीन दिशा की कवि तीव्रता से प्रगति कर रहा है उसे देखकर विस्मय होता है। यह है और उस ने जन–मन को अपने युग के प्रति सचेत करने का जैसे मन ही–मन संकल्प ले लिया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अपने मनु काव्य की तरह अपने बौद्धिक काव्य में भी कवि उसी प्रकार सफल होकर अपनी उद्‌बुद्ध चेतना को जन–साधारण तक पहुंचा सकेगा।

अपनी जिस अंतःप्रेरणा को पहले वह जिस सहज भावना से ग्रहण कर उसे गीति–सय के अंचल में बांध देता था उसे अब यह अपनी जाग्रत मेघा से पकड़ कर, मुक्त छंदों के पंख देकर, लोक–जीवनग्राही बनाने का समर्थ प्रयत्न कर रहा है। बच्चन के भावुक कबि को ऐसी युग–प्रबुद्ध परिणति देख कर आश्चर्य भी होता है, अपार हर्ष भी। 'चार सेमे : जाँसठ खूंटे' में 'आजादी के चौदह वर्ष', 'राष्ट्रपिता के समक्ष', 'स्वाध्याय–कक्ष में बसंत', 'कलश और नींव का पत्थर', 'दैत्य को देन', 'पानी मरा मोती : आग मारा बादमी आदि अत्यन्त सबल, मर्मस्पर्शी तथा संदेशवाहक रचनाएँ है. जिन में कवि ने अपनी व्यथा में युग की कथा गूंथी है और जो मन पर अपना गम्भीर चिन्तन सजग प्रभाव छोड़ती है।

इस संग्रह के लोक गीतों में भी अधिक स्वाभाविकता तथा वैचित्र्य देखने को मिलते हैं। अंग्रेजी के स्प्रिंग की तरह इन गीतों के पद ह्रस्व–दीर्घ मात्राओं की जिन दीवारों को फांद कर जिस सहज स्वर संगीत में प्रवाहित होते हैं उससे लोक गीतों की भाग–लय की नमनीयता सिद्ध होती है। 'मालिन बीकानेर की', 'हरियाने की सनी', 'छिटबन की ओद', 'आगाही', 'जामुन चूती है' आदि लोक–गीत सहज रसपूर्ण तथा वातावरण के रंग में भीगे होने के कारण अत्यन्त सजीव बन पड़े हैं। अपने शोक–गीतों और मुक्त छंदों में समानांतर रूप से कवि की नवीनतम समृद्ध उपलब्धि उसकी धरती के जीवन के प्रेम तथा उसकी अजेय प्रतिभा शक्ति की मांगलिक परिणति के उज्ज्वल प्रमाण है।

मध्य वर्ग के संदर्भ में :-

बच्चन का व्यक्तित्व हिन्दी काव्य में अपनी अद्‌भुत विशेषता एवं महत्ता रखता है। वह मानव–हृदय–मंश, रससिद्ध गायक, भाव–धनी कवि एवं युग–प्रबुद्ध संदेशवाहक है। उस के कला–शिल्प में सादगी, स्वच्छता, संयम तथा अतुल शक्ति है। उनकी अनुभव–द्रवित भावनाओं का प्रभाव विद्युत–स्पर्शी, मंद्र–सजल शब्द संगीत–सम्मोहक तथा कल्पना की उड़ान प्राणों को संजीवनी से भरी होती है। वास्तविकता को धरती पर जीवन के घात–प्रतिघातों में कर्दम में पाँव गढ़ाये, आंधी तूफान में अडिग रहने वाली अपनी गतिशील टांगों पर खड़े, कटि प्रदेश में व कामना की मंदिर ज्वाला लिपटाये गम्भीर साधना से हृद अमृत घटाये अपने विधानत मस्तक को मनुष्यत्व के अभिमान से ऊपर उठाए अविरत–अधांत संपर्य–निरत, अपराजित, दृढ़ संकल्प लौहपुरुप से वह जगत् तथा

जगत स्वामी से भावना के कुछ सुनहले सूत्र में बंधे अपने जीवन के अज्ञात लक्ष्य की ओर तीर पर रुकना अस्वीकार कर प्रेरणा–लहरों का निमंत्रण पाकर निरन्तर बढ़ते ही जाते, अपने अगले कदम के लिए लड़ता जाता है। अदम्य है उसका धैर्य, अटूट है तैलधार वत उसका अंतः विश्वास। अपने ही हृदय–कमल के चतुर्दिक गंध मुग्ध मधुकर की तरह मँडराता उसका मधुलुब्ध कवि अपने प्राणों के तारुण्य, भावना के व्यथासिकत सौंदर्य तथा जगज्जीवन के आघातों के आनन्द–विषाद को अपनी ही अतृप्त कामना के पंखों की गूंज में गुनगुनाता हुआ, संसारकी रसप्रिय मानवता के उपयोग के लिए बिखेरता रहता, संचय करता और बिखेरता रहता है।

मुझ–जैसे विवश व्यक्ति को अपना उन्मुक्त सौहार्द तथा प्रच्छन्न स्नेह देकर वह अपनी उदारता का ही परिचय देता है। बच्चन के घनिष्ठ सम्पर्क में मैं सन् १६४० के बाद 'वसुधा' के सहवास–काल में आया हूँ, जिसकी चर्चा बच्चन अपनी 'हलाहल' की भूमिका में कर चुका है। तब वह प्रयाग विश्वविद्यालय में शोध कार्य करता था। मैत्री का वह बीज बच्चन के भाव–प्रवण हृदय की उर्वर धरती में पड़कर उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। तेजी जी से बच्चन के विवाह के उपरान्त, जिसके लिए में कुछ ही महीने पहले भविष्यवाणी कर चुका था, हस्त–विद्या के ज्ञान से कम, बच्चन की मानसिक दशा के अध्ययन से अधिक मैंत्री का वह त्रिटप वटवृक्ष की तरह दुहरे–तिहरे–चौहरे स्नेह के मूल एवं सद्भाव सौहार्द को बाहें फैला कर अधिक सघन, प्रशान्त तथा प्रच्छाय बन सका। बच्चन को आनन्द–सौन्दर्य भावना तथा सुरुचि को सँवारने में श्रीमती बच्चन का बहुत बड़ा हाथ रहा है। जब १६४० में बच्चन मेरे साथ 'वसुधा' में रहता था, तब मैं उसे अधिक निकट से जान सका या। उसे तब बीच–बीच में नैराश्य तथा अवसाद के धन घेर लेते थे, जिनसे मुक्त होने के लिए वह मर्घट के–से अत्यन्त उदास, ऊँचे स्वर में 'विनय पत्रिका' या 'रामायण' पढ़ा करता था और अंधकार की गुफा से आती हुई भिल्ली की आवाज के समान उसके निदारे कंठ से कुढ कर मैं उससे कहा करता था– ''हाय, बच्चन, तुलसी दास जी पर रहम कर, कहीं तेरे मुहर्रमी स्वर उन के कानों में पड़ गये, तो अपनी कविता के साथ यह बलात्कार देखकर उनकी आत्मा इस देश को छोड़कर कहीं अन्पत्र प्रयाण कर बैठेगी, जहाँ वह तुम्हारे अत्याचार से अपना पिंड छुड़ा सके।'[7] और मैं प्रायः सोचता कि बच्चन के गले की मिठास या लोच क्या उसने अपनी कविता के लिए रख छोड़ी है?

यह तो था परिहास, पर उसके विषण्ण, रुक्ष, आत्मनिष्ठ व्यक्तित्व में तेजी बच्चन जी ने जो मार्दव, उदारता तथा आशा प्रद प्रफुल्लता भरने में सहायता की, उसको कथा में अधिक निकट से और बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। बच्चन को मैं हानि–लाभ का विचार रखने वाला तो नहीं कहूँगा, क्योंकि उसकी उन्मुक्त उदारता के कई उदाहरण मुझे ज्ञात है –पर वह अपने व्यवहार में अकारण ही कुछ गणितज्ञ तथा मुँहफट होने को नीतिमत्ता समझता था। उसकी इस वृत्ति को तेजी जी रोकती–टोकती रहती थीं और जब मैं उनकी सराहना या समर्थन करता तब बच्चन हमेशा कहता कि मैं उनका पक्ष ले रहा हूँ या अपने पक्ष में कहता कि मैं ही ठीक हूं, आप केवल वेद ही जानते हैं, मैं लवेद भी जानता हूँ। इसे पढ़कर भी वह निश्चय ही मन–ही–मन यही कहेगा, किन्तु जो अंतरंग रूप से बच्चन को जानता है, उसे बच्चन के कवि–जीवन में श्रीमती बच्चन की इस देन को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि उन्होंने एकाकी, विष्णण कंठ से निशा को निमंत्रण देने वाली कवि की आत्मा को प्रभात–प्रफुल्लित जीवन–प्रांगण में प्रवेश करने में निष्ठापूर्वक सहायता दी।

बच्चन एक मध्यम वर्ग के लिए रसमधुर कवि :-

बाहर से सूखे अनगढ़ दीखने वाले इस रसमधुर कवि के भीतर अखण्ड आस्था का हृदय उसकी प्राणों की तंत्री को भाव–संगीत–झंकृत करता रहता है। वह गम्भीर आस्था सम्भवतः बच्चन को अपने अन्य उन्नत संस्कारों के साथ अपने पूज्य पितृपाद से दाय रूप में मिली है। उसके पिता जिस घर में रामायण नहीं होती, वहां पानी भी पीना पसंद नहीं करते थे। बच्चन प्रायः प्रति वर्ष जिस लगन से अकेले ही आसन मारकर 'अखण्ड रामायण' का पाठ कर लेता है, उसके लिए निश्चय ही गहरी श्रद्धा चाहिए। वह प्रत्येक प्रसंग पर 'रामायण की चौपाई उद्धृत कर सकता है। मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवउ सो दशरथ अजिर बिहारी' उसके मुँह से निरन्तर दुहराये गये मंत्रपूत चरण मेरे कानों में जब–तब गूंजते रहते हैं। अत्यन्त नियमित तथा सुधर–सुचारू रूप से प्रतिदिन कार्य करने वाला उसका आत्मजयी संकल्प–दृढ़ व्यक्तित्व मेरे लिए सदैव एक प्रेरणाप्रद प्रिय रहा है। अपने सुहृद–मंडल के केन्द्रबिन्दु के रूप में उसे पाकर में प्रसन्न हूँ।

जिस प्रकार कोई क्षिप्रगामी–यान में बैठकर कला–शिल्प की प्रतीक किसी महानगरी की परिक्रमा करते समय इधर–उधर दृष्टिपात भर कर लौट आये, कुछ उसी प्रकार मैंने भी बच्चन के साथ काव्य–जगत की एक सांकेतिक झाँकी भर प्रस्तुत कर छोड़ दी है।

संदर्भ-सूची –

1. बच्चन का व्यक्तित्व तथा काव्य, सं. बाँके विहारी भट्ट नागर, पृ. 23
2. वही, पृ. 45
3. वही, पृ. 49
4. टूटे सपने, बच्चन, पृ. 106
5. वही, पृ. 41
6. वही, पृ. 67
7. वही, पृ. 46

imran@citycollege.ac.in
savitharai008.ab@gmail.com
8951096760

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 102–108

धनबाद जिले की महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन में वाणिज्यिक वृत्तियों की भूमिका : राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 संदर्भित

विवेक जायसवाल, पी–एच.डी. शोधार्थी
डॉ. दिनेश प्रताप सिंह, डीन, वाणिज्य विभाग, एसोसिएट प्रोफेसर
बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद, झारखंड।

सारांश :–

धनबाद जिले की महिलाएँ वाणिज्यिक वृत्तियों में संलग्न होकर अपने आर्थिक स्वावलंबन की दिशा में कदम बढ़ा रही हैं। यह शोध पत्र महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में वाणिज्यिक गतिविधियों की भूमिका को राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के संदर्भ में प्रस्तुत करता है। एनईपी 2020 का उद्देश्य महिलाओं को शिक्षा, व्यवसायिक प्रशिक्षण, और कौशल विकास के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाना है। धनबाद की महिलाएँ लघु उद्योग, कृषि आधारित व्यवसाय, स्वरोजगार, और स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) के माध्यम से आर्थिक विकास कर रही हैं। हालाँकि, उन्हें शिक्षा, वित्तीय संसाधन, और सामाजिक बाधाओं जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। एनईपी 2020 के तहत व्यवसायिक शिक्षा, वित्तीय साक्षरता, और डिजिटल कौशल विकास के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान करने का प्रयास किया जा रहा है। इस शोध पत्र का निष्कर्ष है कि वाणिज्यिक वृत्तियाँ धनबाद की महिलाओं के लिए आर्थिक स्वावलंबन का एक प्रभावी साधन हैं और एनईपी 2020 इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। महिलाओं के लिए सतत प्रोत्साहन और संसाधनों की उपलब्धता उनके सशक्तिकरण को और अधिक गति दे सकती है।

मुख्य बिन्दु :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020, आर्थिक स्वावलंबन एवं वाणिज्यिक वृत्ति।

प्रस्तावना :–

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 का लक्ष्य भारत की शिक्षा प्रणाली में समग्र और व्यापक सुधार लाना है। यह नीति समाज के सभी वर्गों के लिए गुणवत्ता शिक्षा सुनिश्चित करने और सामाजिक–आर्थिक विकास को गति देने के उद्देश्य से बनाई गई है। खासकर महिलाओं के लिए, यह नीति विशेष प्रावधानों के माध्यम से महिला सशक्तिकरण को बल देती है। महिला सशक्तिकरण केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका दायरा महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक भागीदारी तक विस्तृत है। भारत के विकास की

दिशा में महिलाओं की आर्थिक स्वावलंबन एक प्रमुख कारक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 इस दिशा में एक बड़ा कदम है, जो शिक्षा के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाने पर बल देती है। यह नीति महिलाओं के लिए शिक्षा के साथ–साथ वाणिज्यिक और उद्यमशीलता कौशलों के विकास को बढ़ावा देती है। धनबाद जिले की महिलाएं विभिन्न वाणिज्यिक वृत्तियों में शामिल होकर न केवल अपने परिवारों की आय में योगदान दे रही हैं, बल्कि समाज में अपनी पहचान भी बना रही हैं। इस शोध पत्र में धनबाद जिले की महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन में वाणिज्यिक वृत्तियों की भूमिका और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में इसकी प्रभावशीलता पर विचार किया गया है।

आर्थिक स्वावलंबन :–

आर्थिक स्वावलंबन का अर्थ है कि व्यक्ति, परिवार, समाज या राष्ट्र अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए दूसरों पर निर्भर न रहते हुए खुद सक्षम हो। इसका मतलब है कि लोग अपने संसाधनों और कौशल का उपयोग करके आत्मनिर्भर बने, जिससे वे अपनी जरूरतें और आकांक्षाएं पूरी कर सकें।

आर्थिक स्वावलंबन का तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमें व्यक्ति अपनी आर्थिक जरूरतों को स्वयं पूरा कर सकता है और आर्थिक रूप से किसी अन्य पर निर्भर नहीं होता। महिलाओं के लिए आर्थिक स्वावलंबन का विशेष महत्त्व है क्योंकि यह उन्हें आत्मनिर्भर बनाता है, और सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में एक मजबूत कदम है।

आर्थिक स्वावलंबन का महत्त्व :

स्वतंत्रता और आत्मसम्मान : आर्थिक रूप से स्वावलंबी व्यक्ति या समाज अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भर नहीं रहता, जिससे आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की भावना बढ़ती है।

समाज और देश की प्रगति : जब व्यक्ति आत्मनिर्भर होते हैं, तो वे समाज और राष्ट्र की समृद्धि में योगदान करते हैं। इससे देश की आर्थिक स्थिति भी मजबूत होती है।

गरीबी उन्मूलन एवं सशक्तिकरण : आर्थिक स्वावलंबन गरीबी से मुक्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है। स्वावलंबन से लोग अपनी आय बढ़ा सकते हैं और अपने जीवन स्तर को सुधार सकते हैं। आर्थिक स्वावलंबन से व्यक्ति अपने जीवन के निर्णय स्वतंत्रता से लेने में सक्षम होते हैं, जिससे व्यक्तिगत और सामुदायिक सशक्तिकरण होता है।

संकटों का सामना एवं रोजगार सृजन : स्वावलंबी व्यक्ति और समाज आर्थिक संकटों का सामना करने में सक्षम होते हैं, क्योंकि वे अपने संसाधनों और क्षमताओं का उपयोग करके समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। आर्थिक स्वावलंबन से नए रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं, जिससे बेरोजगारी की समस्या कम होती है।

समानता और न्याय : आर्थिक स्वावलंबन से समाज में आर्थिक असमानता कम होती है, क्योंकि हर व्यक्ति को अपनी आजीविका कमाने का अवसर मिलता है। आर्थिक स्वावलंबन व्यक्ति और समाज दोनों के विकास का आधार है, और यह सामाजिक, आर्थिक, और नैतिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

धनबाद जिले में, महिलाओं के लिए आर्थिक स्वावलंबन की आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि यह क्षेत्र कोयला खनन उद्योग से प्रभावित है, जो पुरुष प्रधान है। यहाँ महिलाओं का योगदान सीमित है, लेकिन हाल के वर्षों में वाणिज्यिक वृत्तियों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है, जो उनके आर्थिक स्वावलंबन

की दिशा में एक महत्वपूर्ण बदलाव का संकेत है।

धनबाद जिले की सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि :-

धनबाद झारखंड राज्य का एक प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है, जिसे 'कोयला नगरी' के नाम से जाना जाता है। यहाँ की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कोयला खनन पर निर्भर करती है, लेकिन इसके साथ ही अन्य छोटे उद्योग, कृषि, और वाणिज्यिक गतिविधियाँ भी विकसित हो रही हैं। धनबाद जिले में महिलाओं की स्थिति पारंपरिक रूप से घरेलू भूमिकाओं तक सीमित रही है, लेकिन अब स्थिति बदल रही है। महिलाएँ शिक्षा, छोटे व्यापार, स्वरोजगार, और कृषि आधारित उद्योगों में अपनी भूमिका निभा रही हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत महिलाओं के लिए व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण के अवसर बढ़ाए गए हैं, जो उनके आर्थिक स्वावलंबन में सहायक हो रहे हैं।

वाणिज्यिक वृत्तियाँ (Business Activities) : महिलाओं के लिए अवसर :-

वर्तमान समय में महिलाओं के लिए वाणिज्यिक (Business) क्षेत्र में कई अवसर उपलब्ध हैं। आधुनिक समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी न केवल बढ़ रही है बल्कि उन्हें नए और उन्नत क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा और कौशल का प्रदर्शन करने का अवसर भी मिल रहा है।

स्टार्टअप और उद्यमिता (Entrepreneurship) :-

महिलाएं अपने स्वयं के व्यवसाय की शुरुआत कर सकती हैं, चाहे वह छोटे पैमाने पर हो या बड़े पैमाने पर। विभिन्न क्षेत्रों में जैसे खाद्य उद्योग, फैशन डिजाइनिंग, हस्तशिल्प, बुटीक, स्वास्थ्य सेवाएँ, और तकनीकी सेवाओं में महिलाएं सफलता हासिल कर रही हैं। सरकार और कई निजी संस्थान महिलाओं के लिए विशेष योजनाएं और वित्तीय सहायता भी प्रदान कर रहे हैं, जिससे महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन मिलता है।

ऑनलाइन बिजनेस और ई-कॉमर्स :-

डिजिटल क्रांति के साथ, महिलाओं के लिए ऑनलाइन व्यवसाय (E-commerce) का क्षेत्र काफी उभर रहा है। महिलाएं अपने उत्पाद और सेवाओं को ऑनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से बेच सकती हैं। उदाहरण के लिए, कपड़े, आभूषण, हस्तशिल्प, बेकरी उत्पादों की ऑनलाइन बिक्री, डिजिटल मार्केटिंग, और ऑनलाइन कंसल्टिंग सेवाएं जैसे क्षेत्रों में महिलाओं को काफी अवसर मिल रहे हैं।

स्वास्थ्य और वेलनेस इंडस्ट्री :

स्वास्थ्य, फिटनेस और वेलनेस क्षेत्र में महिलाओं के लिए भी बड़े अवसर उपलब्ध हैं। वे योग प्रशिक्षक, फिटनेस कोच, डाइटिशियन, या काउंसलर के रूप में काम कर सकती हैं। इसके साथ ही महिलाएं ब्यूटी और स्किनकेयर सेवाओं में भी व्यवसाय कर रही हैं, जैसे स्पा, सैलून, और प्राकृतिक ब्यूटी उत्पादों का निर्माण।

शिक्षा और प्रशिक्षण :-

शिक्षा के क्षेत्र में महिलाएं ट्यूटर, ट्रेनर, या काउंसलर के रूप में अपने कौशल का उपयोग कर सकती हैं। ऑनलाइन कोर्सेस और कोचिंग सेंटर स्थापित करके भी महिलाएं सफलता हासिल कर रही हैं। ई–लर्निंग प्लेटफार्मों का विकास भी महिलाओं के लिए घर से काम करने का एक शानदार अवसर बन गया है।

फ्रीलांसिंग और डिजिटल कार्यक्षेत्र :-

डिजिटल युग में महिलाएं फ्रीलांसिंग के माध्यम से कंटेंट राइटिंग, ग्राफिक डिजाइनिंग, वेब डेवलपमेंट,

डिजिटल मार्केटिंग और अनुवाद जैसे क्षेत्रों में काम कर सकती हैं। फ्रीलांसिंग में समय की लचीलापन और घर से काम करने की सुविधा महिलाओं के लिए एक बड़ा लाभ है।

लघु उद्योग एवं कृषि आधारित उद्योग :-

धनबाद की महिलाएँ विभिन्न प्रकार के लघु उद्योगों में संलग्न हैं, जैसे कि बुनाई, सिलाई, हथकरघा, और स्थानीय हस्तशिल्प। ये उद्योग महिलाओं को अपने घर से ही कार्य करने का अवसर प्रदान करते हैं, जिससे वे परिवार की देखभाल के साथ आर्थिक रूप से भी स्वतंत्र हो सकती हैं। कृषि आधारित उद्योग, जैसे कि डेयरी, मुर्गीपालन, और बागवानी, धनबाद की ग्रामीण महिलाओं के लिए एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में यह व्यवसाय लाभप्रद साबित हो सकते हैं। ये उद्योग महिलाओं को अपने कृषि उत्पादों के विपणन और बिक्री में शामिल होने का अवसर प्रदान करते हैं, जिससे वे अपने परिवार की आय में योगदान कर सकती हैं।

स्वरोजगार एवं स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) :-

स्वरोजगार महिलाओं के लिए एक बड़ा अवसर है। महिलाएँ छोटे व्यापार, जैसे कि किराना दुकान, कपड़े का व्यापार, और स्थानीय बाजारों में सामान बेचना, में शामिल होकर आत्मनिर्भर बन रही हैं। धनबाद जिले में स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) महिलाओं के लिए आर्थिक सशक्तिकरण का एक प्रभावी साधन बन गए हैं। इन समूहों के माध्यम से महिलाएँ लघु ऋण लेकर छोटे व्यापार शुरू कर रही हैं और अपनी आय में वृद्धि कर रही हैं।

पर्यटन और आतिथ्य क्षेत्र (Hospitality & Tourism) :-

पर्यटन उद्योग में होमस्टे, छोटे होटल या गेस्ट हाउस चलाने का व्यवसाय महिलाओं के लिए अच्छा अवसर है। इसके साथ ही ट्रैवल एजेंसी और टूर गाइड के रूप में भी महिलाएं सफल हो सकती हैं।

फाइनेंस और कंसल्टिंग सेवाएँ :-

महिलाएं वित्तीय सेवा प्रदाता के रूप में अपने करियर का निर्माण कर सकती हैं। व्यक्तिगत वित्तीय सलाहकार, बीमा एजेंट, या निवेश सलाहकार के रूप में काम करने का अवसर भी महिलाओं के लिए खुला है।

महिलाओं के लिए सरकारी और संस्थागत सहयोग :-

सरकारी योजनाएँ : महिला उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए कई सरकारी योजनाएँ और नीतियाँ हैं, जैसे 'स्टैंड–अप इंडिया', 'महिला उद्यमिता प्लेटफार्म', 'प्रधानमंत्री मुद्रा योजना', आदि।

वित्तीय संस्थान : बैंक और वित्तीय संस्थान भी महिलाओं को उद्यम शुरू करने के लिए रियायती दरों पर ऋण और वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं।

संरक्षण और प्रशिक्षण : कई संस्थान महिलाओं को व्यवसाय प्रबंधन, कौशल विकास, और उद्यमिता के लिए प्रशिक्षण प्रदान करते हैं ताकि वे बाजार की चुनौतियों का सामना कर सकें और अपने व्यवसाय को सफलतापूर्वक चला सकें।

वाणिज्यिक क्षेत्र में महिलाओं के लिए कई प्रकार के अवसर उपलब्ध हैं, जो उन्हें आत्मनिर्भर बनने और समाज तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास में योगदान देने में सक्षम बनाते हैं। महिलाओं की क्षमता, उद्यमिता की भावना और समाज का सहयोग उन्हें नए आयाम तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की प्रमुख विशेषताएँ :-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार लाने का एक महत्वपूर्ण कदम है। इसका उद्देश्य न केवल शैक्षिक संरचना को पुनर्गठित करना है, बल्कि रोजगारपरक और व्यावसायिक शिक्षा को भी बढ़ावा देना है। इस नीति की कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

कौशल विकास एवं व्यवसायिक शिक्षा का समावेश :-

कौशल विकास एनईपी 2020 का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इससे महिलाओं को व्यापार और उद्योग के लिए आवश्यक कौशलों की शिक्षा दी जाती है, जैसे कि कंप्यूटर ज्ञान, वित्तीय साक्षरता, और उद्यमशीलता। एनईपी 2020 के तहत, व्यवसायिक शिक्षा को स्कूल स्तर से ही शामिल किया गया है। इससे छात्राओं को प्रारंभिक अवस्था से ही विभिन्न व्यवसायिक कौशलों की जानकारी मिलती है, जो उन्हें भविष्य में आत्मनिर्भर बनने में सहायक होता है।

डिजिटल साक्षरता :-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 का उद्देश्य भारतीय शिक्षा प्रणाली में समग्र और बहुआयामी सुधार करना है। यह नीति तकनीकी और डिजिटल माध्यमों को शिक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाती है। NEP 2020 में डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए कई प्रावधान और योजनाएं शामिल हैं।

महिला सशक्तिकरण पर जोर :-

एनईपी 2020 महिलाओं के सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान देती है। इसमें महिलाओं के लिए विशेष छात्रवृत्तियाँ, प्रशिक्षण कार्यक्रम, और व्यावसायिक शिक्षा के अवसर प्रदान किए गए हैं, जो उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनने में मदद करते हैं।

वाणिज्यिक वृत्तियों में महिलाओं की चुनौतियाँ :-

धनबाद जिले की महिलाओं को वाणिज्यिक वृत्तियों में शामिल होने में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इनमें से प्रमुख चुनौतियाँ हैं :-

शिक्षा की कमी :

धनबाद के ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर अपेक्षाकृत कम है, जिसके कारण महिलाओं को व्यापार और उद्यमिता में आने में कठिनाई होती है।

वित्तीय संसाधनों की कमी :

महिलाओं को व्यवसाय शुरू करने के लिए आवश्यक वित्तीय सहायता की कमी होती है। बैंक और अन्य वित्तीय संस्थान कई बार महिलाओं को ऋण देने में हिचकिचाते हैं।

सामाजिक बाधाएँ :

समाज में अभी भी कुछ परंपरागत सोच और दृष्टिकोण विद्यमान हैं, जिनके कारण महिलाओं को व्यापार में आने में कठिनाई होती है।

तकनीकी कौशल की कमी :

धनबाद के कई ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ आधुनिक तकनीकी साधनों का उपयोग करने में सक्षम नहीं हैं, जो उनकी वाणिज्यिक गतिविधियों में एक बड़ी बाधा बनती है।

एनईपी 2020 के अंतर्गत समाधान :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इन चुनौतियों का समाधान प्रदान करने के लिए विभिन्न उपाय प्रस्तुत करती है :

व्यवसायिक शिक्षा का प्रचार :

एनईपी 2020 के तहत, ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में व्यवसायिक शिक्षा के प्रसार पर बल दिया गया है, जिससे महिलाओं को प्रारंभिक स्तर से ही व्यावसायिक शिक्षा मिल सके।

वित्तीय साक्षरता :

महिलाओं के लिए वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है, जिससे वे वित्तीय संस्थानों से ऋण लेने और अपने व्यवसाय को चलाने में सक्षम हो सकें।

महिला उद्यमियों को प्रोत्साहन :

सरकार महिला उद्यमियों के लिए विशेष योजनाएँ चला रही है, जैसे कि महिला बैंकिंग, जिसमें उन्हें कम ब्याज दर पर ऋण प्रदान किया जा रहा है।

डिजिटल साक्षरता :

महिलाओं को डिजिटल उपकरणों और इंटरनेट का उपयोग सिखाने के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिससे वे ऑनलाइन व्यापार और विपणन में शामिल हो सकें।

निष्कर्ष :-

धनबाद जिले की महिलाएँ वाणिज्यिक वृत्तियों के माध्यम से आर्थिक स्वावलंबन की दिशा में कदम बढ़ा रही हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत प्राप्त अवसर और संसाधन महिलाओं को व्यवसायिक क्षेत्र में आगे बढ़ने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। हालांकि चुनौतियाँ अभी भी हैं, लेकिन एनईपी 2020 के तहत उठाए गए कदम इन चुनौतियों का सामना करने में सहायक हो रहे हैं। महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन से न केवल उनके परिवारों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी, बल्कि समाज में भी सकारात्मक बदलाव आएगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि सरकार और स्थानीय प्रशासन द्वारा महिलाओं को लगातार प्रोत्साहन और सहयोग प्रदान किया जाए, जिससे वे वाणिज्यिक वृत्तियों में अधिक से अधिक भागीदारी कर सकें।

संदर्भ सूची :-

1. शिक्षा मंत्रालय. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf.
2. भारत सरकार (2001). रिपोर्ट ऑन द स्टेटस ऑफ वीमेन इन इंडिया. नई दिल्ली : महिला एवं बाल विकास मंत्रालय।
3. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2007). महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन हेतु राष्ट्रीय नीति. नई दिल्ली। भारत सरकार।
4. सावन, के. (2014). इम्पैक्ट ऑफ फाइनेंसियल लिटरेसी ऑन इकोनोमिक एम्पावरमेंट ऑफ रूरल वीमेन इन इंडिया. एशियन जर्नल ऑफ डेवलपमेंट स्टडीज, 3(1), 45–58.

5. भारत सरकार, वाणिज्य मंत्रालय (2012). डेवलपमेंट एंड करियर पाथवे इन कमर्शियल सेक्टर्स. नई दिल्ली : भारत सरकार।
6. बल्ली, एम. (2012). विमेंस एम्पोवेरमेंट एंड सोचेल चेंज इन इंडिया. नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन।
7. त्रिपाठी, एम. (2010). महिला विकास एक मूल्यांकन, ओमेगा पब्लिकेशन. हरियाणा : गुड़गांव।
8. कुरियन, जी. (1995). इकोनोमिक एम्पोवेरमेंट ऑफ वीमेन इन इंडिया : द चौलेंजेज एंड ऑपरचुनिटी. नई दिल्ली : डिस्कवरी पब्लिकेशन हाउस।
9. सिंह, एम. (2012). वीमेन इंटरप्रेंयूर्स इन इंडिया : ए केस स्टडी ऑफ इकनोमिक इंडिपेंडेंस। जयपुर : रावत पब्लिकेशन।
10. महिला उद्यमिता विकास योजना (2018). इकोनोमिक एम्पावरमेंट ऑफ वीमेन थ्रोऊ इंटरप्रेंयूर्शिप। नई दिल्ली : भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (SIDBI).
11. शुक्ला, एस. पी. एवं सोनी, जे. (2019). महिला सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति : राजनैतिक सशक्तिकरण के परिपेक्ष्य में (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में). Int. J. Rev. and Res. Social Sci.; 7(1):139-146. https://ijrrssonline.in/HTMLPaper.aspx\Journal/International+Journal+of+Reviews+and+Research+in+Social+Sciences%3bPID%3d2019-7-1-26
12. चौरसिया, एस. एवं सिद्दीकी, एस. (2022). नगरीय महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका का एक अध्ययन (रीवा नगर के विशेष सन्दर्भ में), इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च इन साइंस, कम्युनिकेशन एंड टेक्नोलॉजी (IJARSCT) वॉल्यूम 2,(1), DOI: 10.48175/IJARSCT&7176 310 www.ijarsct.co.in
13. झारखण्ड सरकार. साईट।
14. https://give.do/blog/top-10-ngos&in&jharkhand&working&for&the&peoples&welfare/ https://ngofeed.com/top&ngos&in&india/

डॉ. बिश्वजीत नारायण
पीएच. डी. भाषा प्रौद्योगिकी
M.G.A.H.V. Wardha Maharashtra
Mob - 7376241903
bishva95@gmail.com
ई–मेल– vivek.jaiswal50@gmail.com
ई–मेल– dineshpratapsinghvbu@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 109–115

झारखण्ड के महिला स्वयं–सहायता समूहों की संस्थानिक कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

कुलदीप महतो, पी–एच.डी. शोधार्थी– वाणिज्य विभाग
डॉ. उत्तम कुमार त्रिगुनाइत, वाणिज्य विभाग, सेवानिवृत्त सहायक प्रोफेसर
कतरास कॉलेज, कतरासगढ़ धनबाद, झारखंड।

सारांश :–

झारखंड में महिला स्वयं–सहायता समूह (SHGs) ने ग्रामीण और आदिवासी महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन समूहों के माध्यम से महिलाएं एकजुट होकर बचत करती हैं, ऋण प्राप्त करती हैं और छोटे उद्योगों या व्यवसायों को शुरू करती हैं। SHGs की संस्थानिक कार्यप्रणाली में संगठनात्मक संरचना, वित्तीय गतिविधियाँ, उद्यमिता, कौशल विकास, और सामुदायिक भागीदारी शामिल हैं। इन समूहों ने महिलाओं को न केवल आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाया है, बल्कि सामाजिक, शैक्षणिक, और राजनीतिक सशक्तिकरण में भी मदद की है।

हालांकि, SHGs को वित्तीय संसाधनों की कमी, शिक्षा और जागरूकता की कमी, और सामाजिक बाधाओं जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। फिर भी, ये समूह महिलाओं के जीवन में महत्वपूर्ण सुधार लाने में सक्षम रहे हैं और झारखंड के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। SHGs को और प्रभावी बनाने के लिए बेहतर वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण और सामाजिक समर्थन की आवश्यकता है।

मुख्य बिन्दु :– महिला स्वयं–सहायता समूह, संस्थानिक कार्यप्रणाली।

परिचय :–

महिला सशक्तिकरण के लिए स्वयं–सहायता समूह (Self-Help Groups & SHGs) एक प्रभावी माध्यम के रूप में उभरकर सामने आए हैं। भारत के ग्रामीण इलाकों में महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार लाने के उद्देश्य से ये समूह महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। झारखंड, जो कि एक आदिवासी बहुल और आर्थिक रूप से पिछड़ा राज्य है, वहां के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला स्वयं–सहायता समूहों ने महिलाओं को संगठित कर उनके जीवन स्तर को ऊंचा उठाने का कार्य किया है। ये समूह न केवल आर्थिक रूप से महिलाओं को सशक्त कर रहे हैं, बल्कि उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों को भी बढ़ावा देने में सहायक हैं। इस शोध पत्र का उद्देश्य झारखंड के महिला स्वयं–सहायता समूहों की संस्थानिक कार्यप्रणाली का विश्लेषण करना है, ताकि यह समझा जा सके कि ये समूह किस प्रकार से कार्य करते हैं और उनके प्रभाव क्या हैं।

स्वयं–सहायता समूहों की अवधारणा :–

स्वयं–सहायता समूह (SHGs) छोटे, स्वायत्त और अनौपचारिक समूह होते हैं, जिनमें आमतौर पर 10 से 20 सदस्य होते हैं। ये सदस्य एक–दूसरे की आर्थिक सहायता के लिए धन इकट्ठा करते हैं और उसे जरूरतमंद सदस्यों को उधार देते हैं। SHGs का मुख्य उद्देश्य गरीबों, खासकर महिलाओं को सूक्ष्म–वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराकर उनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करना है। इन समूहों के माध्यम से महिलाएं एकजुट होती हैं और अपने व्यवसायिक तथा सामाजिक मुद्दों का सामूहिक रूप से समाधान करती हैं।

झारखंड में महिला स्वयं–सहायता समूहों का विकास :

झारखंड में महिला स्वयं–सहायता समूहों का प्रारंभ राज्य सरकार, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) और विभिन्न गैर–सरकारी संगठनों (NGOs) के माध्यम से किया गया। राज्य में महिलाओं की आर्थिक स्थिति को सुधारने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए इन समूहों को प्रोत्साहन मिला। झारखंड में खासकर आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्रों में ये समूह महिलाओं के लिए एक सशक्त माध्यम बने हैं।

महिला स्वयं–सहायता समूहों ने महिलाओं को छोटे उद्योगों, कृषि, हस्तशिल्प, और अन्य व्यवसायों में सम्मिलित किया है, जिससे वे आत्मनिर्भर बन सकें और उनके परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके।

SHGs की संस्थानिक कार्यप्रणाली :–

1. संगठनात्मक संरचना

SHGs की संरचना बहुत ही सरल और स्वायत्त होती है। प्रत्येक समूह में 10–20 महिलाएं होती हैं, जो आपस में नियमित रूप से मिलती हैं। समूह का संचालन लोकतांत्रिक ढंग से किया जाता है, जिसमें अध्यक्ष, सचिव और कोषाध्यक्ष जैसे पदों का चुनाव किया जाता है। ये पद सदस्याओं के सामूहिक निर्णय द्वारा चुने जाते हैं और उनका कार्यकाल निश्चित होता है। SHG की बैठकें नियमित रूप से होती हैं, जिनमें सदस्य अपने अनुभव साझा करते हैं और अपनी वित्तीय आवश्यकताओं पर चर्चा करते हैं।

2. वित्तीय कार्यप्रणाली :–

SHGs की कार्यप्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा वित्तीय गतिविधियाँ होती हैं। समूह के सभी सदस्य एक निश्चित धनराशि नियमित रूप से समूह में जमा करते हैं। यह राशि समूह के खाते में जमा की जाती है, और जरूरतमंद सदस्य इस राशि से ऋण प्राप्त कर सकते हैं। ऋण का उद्देश्य मुख्य रूप से व्यवसायिक गतिविधियों, चिकित्सा, शिक्षा और अन्य आपातकालीन आवश्यकताओं के लिए होता है। झारखंड के SHGs को बैंकों और सरकारी योजनाओं के माध्यम से भी वित्तीय सहायता मिलती है। समूहों को दिए जाने वाले ऋण ब्याज दर पर आधारित होते हैं, और समय पर ऋण की पुनर्भुगतान से समूह की विश्वसनीयता भी बढ़ती है।

3. स्व–रोजगार और उद्यमिता :–

महिला SHGs का उद्देश्य केवल बचत और ऋण तक सीमित नहीं है। ये समूह महिलाओं को विभिन्न प्रकार के व्यवसायों और उद्यमों में प्रशिक्षित करते हैं। झारखंड के कई SHGs ने महिलाओं को छोटे उद्योगों, जैसे सिलाई, बुनाई, कृषि उत्पादन, मुर्गी पालन, बकरी पालन, और हस्तशिल्प कार्यों में आत्मनिर्भर बनाया है। इन उद्यमों से महिलाएं अपनी आमदनी बढ़ाने में सक्षम हो रही हैं।

4. प्रशिक्षण और कौशल विकास :–

झारखंड के महिला SHGs के एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू में प्रशिक्षण और कौशल विकास शामिल हैं। विभिन्न सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाएँ SHGs के माध्यम से महिलाओं को विभिन्न कौशल प्रदान करती हैं, जैसे कि वित्तीय प्रबंधन, उद्यमिता, उत्पादन तकनीक, विपणन रणनीतियाँ आदि। यह प्रशिक्षण महिलाओं को नए व्यवसायों में प्रवेश करने और उन्हें सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए आवश्यक होता है।

5. सामुदायिक भागीदारी :–

SHGs न केवल महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त करते हैं, बल्कि वे सामुदायिक विकास में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। झारखंड के SHGs महिलाओं को सामाजिक समस्याओं, जैसे स्वच्छता, स्वास्थ्य, शिक्षा और पर्यावरण संरक्षण में भी सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। यह महिलाओं को सामाजिक दृष्टिकोण से भी सशक्त करता है और उनके नेतृत्व कौशल का विकास करता है।

महिला सशक्तिकरण में SHGs की भूमिका :–

1. आर्थिक सशक्तिकरण :

SHGs ने झारखंड की ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से सशक्त बनाया है। समूहों में शामिल होने वाली महिलाएं बचत करने, ऋण प्राप्त करने, और छोटे व्यवसाय चलाने में सक्षम हो रही हैं। इससे उनकी आय में वृद्धि हुई है, और उन्हें परिवार में अधिक सम्मान और निर्णय लेने का अधिकार मिला है।

2. सामाजिक सशक्तिकरण :

SHGs ने महिलाओं को एक साथ लाकर उन्हें सामूहिक रूप से कार्य करने का अवसर प्रदान किया है। इससे महिलाओं में आत्मविश्वास बढ़ा है और वे समाज में अपनी भूमिका को नए सिरे से परिभाषित कर रही हैं। महिलाएं अब सामाजिक मुद्दों पर खुलकर चर्चा करती हैं और सामुदायिक विकास में भी योगदान देती हैं।

3. राजनीतिक सशक्तिकरण :

SHGs ने महिलाओं को पंचायत स्तर पर भी सशक्त किया है। झारखंड में कई महिलाएं SHGs के माध्यम से स्थानीय निकाय चुनावों में भाग ले रही हैं और पंचायतों में नेतृत्व की भूमिका निभा रही हैं। इससे ग्रामीण राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है।

4. शैक्षणिक और स्वास्थ्य सशक्तिकरण :

SHGs के माध्यम से महिलाएं शिक्षा और स्वास्थ्य के महत्व को समझने लगी हैं। वे अपने बच्चों की शिक्षा पर ध्यान दे रही हैं और परिवार के स्वास्थ्य पर भी जागरूक हो रही हैं। इसके अलावा, समूहों के माध्यम से महिलाओं को स्वास्थ्य से जुड़ी सेवाओं की भी जानकारी प्राप्त हो रही है।

SHGs के प्रभाव का विश्लेषण :–

आर्थिक सुधार और आत्मनिर्भरता : SHGs के माध्यम से महिलाओं ने न केवल अपने आर्थिक स्थिति में सुधार किया है, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर बनने का अवसर भी मिला है। देशभर में कई महिलाएं SHGs के माध्यम से अपने छोटे व्यवसाय चला रही हैं, जो न केवल उनके परिवार के लिए आय का स्रोत बन रहा है बल्कि उन्हें आत्मसम्मान और समाज में प्रतिष्ठा भी प्रदान कर रहा है।

सामाजिक बदलाव : SHGs के माध्यम से महिलाएं समाज में अपनी भूमिका को पुनर्परिभाषित कर रही

हैं। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में महिलाएं अब केवल गृहिणी की भूमिका तक सीमित नहीं हैं। वे SHGs के माध्यम से समाज में सक्रिय योगदान दे रही हैं। SHGs महिलाओं को सामूहिक रूप से काम करने की शक्ति और उनकी सामाजिक स्थिति को सशक्त करने में मदद करते हैं।

महिला नेतृत्व का विकास : SHGs ने महिलाओं को नेतृत्व का अनुभव प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया है। SHGs के माध्यम से महिलाएं समूहों की अध्यक्ष या सचिव बनकर समूह के कार्यों का संचालन करती हैं। यह नेतृत्व कौशल उन्हें पंचायत और अन्य स्थानीय स्तर की राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने में सक्षम बनाता है।

संघर्ष और चुनौतियाँ : हालांकि SHGs महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, फिर भी कुछ चुनौतियाँ बनी हुई हैं। जैसे, ग्रामीण क्षेत्रों में कभी–कभी महिलाओं को SHGs से जुड़ने के लिए परिवार और समाज का समर्थन नहीं मिलता। आर्थिक संसाधनों की कमी और पर्याप्त प्रशिक्षण की अनुपस्थिति भी महिलाओं के व्यवसाय को सफलतापूर्वक चलाने में बाधा बन सकती है।

सरकार और संस्थागत समर्थन :–

महिला सशक्तिकरण के लिए SHGs को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार और अन्य संस्थाएं भी सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) और प्रधानमंत्री मुद्रा योजना जैसी सरकारी योजनाएं महिलाओं को SHGs के माध्यम से ऋण और अन्य वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं। इसके अलावा, कई गैर–सरकारी संगठन (NGOs) भी SHGs को आवश्यक कौशल, प्रशिक्षण, और मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें।

स्वयं सहायता समूहों (SHGs) का भविष्य और सिफारिशें :–

स्वयं सहायता समूह (SHGs) भारत में महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन गए हैं। ये समूह विशेष रूप से महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने, उन्हें आत्मनिर्भर बनाने और सामाजिक बदलाव में भागीदार बनाने में प्रभावी साबित हुए हैं। हालांकि, SHGs की कार्यप्रणाली को और भी सशक्त और प्रभावी बनाने के लिए कई सुधार और नीतिगत बदलाव आवश्यक हैं।

SHGs का भविष्य काफी उज्जवल प्रतीत होता है, खासकर तब जब इसे नए आर्थिक, सामाजिक, और तकनीकी परिवर्तनों के अनुरूप ढाला जाए। SHGs को और अधिक सशक्त बनाने के लिए सरकार, गैर–सरकारी संगठनों (NGOs), और निजी संस्थाओं का सहयोग आवश्यक है।

डिजिटल युग में SHGs का विकास :–

डिजिटल साक्षरता : SHGs को डिजिटल प्लेटफार्मों के साथ जोड़ना आने वाले समय की बड़ी आवश्यकता है। महिलाओं को डिजिटल लेन–देन, ई–कॉमर्स, और डिजिटल मार्केटिंग जैसे क्षेत्रों में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वे अपने उत्पादों और सेवाओं को व्यापक बाजार तक पहुँचा सकें।

ई–शिक्षा और ई–लर्निंग : तकनीकी प्रगति के साथ SHGs को ई–लर्निंग के माध्यम से कौशल विकास में मदद की जा सकती है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में भी महिलाएं विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में दक्षता हासिल कर सकती हैं।

कौशल विकास और उद्यमिता :-

व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण : SHGs के सदस्यों को नए व्यवसाय शुरू करने और सफलतापूर्वक चलाने के लिए अधिक व्यावसायिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है। कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प, और छोटे उद्योगों के क्षेत्रों में विशेष प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है।

स्टार्टअप संस्कृति का विकास : SHGs के सदस्यों को छोटे स्तर के स्टार्टअप शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। सरकार द्वारा स्टार्टअप योजनाओं और ऋणों की सहायता से महिलाएं नवाचार और उद्यमिता के क्षेत्र में आगे बढ़ सकती हैं।

सामाजिक और राजनीतिक सशक्तिकरण :-

नेतृत्व विकास : SHGs के माध्यम से महिलाएं न केवल आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती हैं बल्कि सामाजिक और राजनीतिक नेतृत्व में भी भूमिका निभा सकती हैं। महिलाओं को स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर पर चुनावी प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना उनके सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।

सामाजिक जागरूकता अभियान : SHGs सामाजिक मुद्दों जैसे महिला स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक न्याय के बारे में जागरूकता फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। भविष्य में इन अभियानों को और अधिक संगठित और प्रभावी बनाया जा सकता है।

SHGs के सशक्तिकरण के लिए सिफारिशें :-

SHGs के प्रभाव को और अधिक बढ़ाने के लिए निम्नलिखित सिफारिशें की जा सकती हैं :-

व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास :-

SHGs के सदस्यों को नियमित रूप से व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण में विपणन, ब्रांडिंग, उत्पादन गुणवत्ता और वित्तीय प्रबंधन के गुर सिखाए जाने चाहिए।

SHGs को कृषि, हस्तशिल्प, और सेवा उद्योगों के साथ जोड़कर विशेष कौशल प्रदान किया जा सकता है, जिससे महिलाएं विविध क्षेत्रों में व्यवसाय शुरू कर सकें।

सामाजिक जागरूकता और महिलाओं के अधिकार :-

SHGs के माध्यम से महिलाओं को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए। इसके लिए कानूनी सहायता केंद्र और महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम चलाए जा सकते हैं।

SHGs को सामाजिक अभियानों के लिए एक मंच के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, जहां महिलाएं शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यावरण जैसे मुद्दों पर सामूहिक रूप से काम कर सकें।

सरकारी और गैर-सरकारी सहयोग :-

सरकार और NGOs को मिलकर SHGs के लिए विशेष योजनाएं और कार्यक्रम चलाने चाहिए, जिनमें वित्तीय, तकनीकी, और संगठनात्मक सहयोग प्रदान किया जाए।

SHGs को लंबी अवधि में स्वावलंबी और आत्मनिर्भर बनाने के लिए नियमित मूल्यांकन और सहायता प्रणाली स्थापित की जानी चाहिए।

SHGs महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास में एक शक्तिशाली उपकरण साबित हो रहे हैं। इनके

माध्यम से महिलाओं को न केवल आर्थिक स्वतंत्रता मिली है, बल्कि वे सामाजिक और राजनीतिक रूप से भी सशक्त हो रही हैं। SHGs का भविष्य अत्यंत उज्जवल है, लेकिन इसे और अधिक सफल बनाने के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण, वित्तीय समर्थन, और डिजिटल युग के साथ सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है। SHGs महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने और उनके सामाजिक–आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए SHGs ने एक ऐसा मंच प्रदान किया है जहाँ वे अपने अधिकारों, अवसरों, और क्षमता को पहचानकर समाज में सकारात्मक बदलाव ला सकती हैं। अगर उचित नीतियां और संसाधन उपलब्ध कराए जाएं, तो SHGs भारत के ग्रामीण और शहरी समाज में महिलाओं के सशक्तिकरण का एक मजबूत स्तंभ बन सकते हैं।

चुनौतियाँ :–

हालांकि झारखंड के महिला SHGs ने कई उपलब्धियाँ हासिल की हैं, फिर भी इन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है :–

1. वित्तीय संसाधनों की कमी :–

SHGs के सदस्यों को वित्तीय सहायता तो मिलती है, लेकिन कई बार यह पर्याप्त नहीं होती। बैंकों और सरकारी योजनाओं तक पहुँच सीमित होती है, जिससे समूहों को अपना कार्यक्षेत्र बढ़ाने में कठिनाई होती है।

2. शिक्षा और जागरूकता का अभाव :–

ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में महिलाओं की शिक्षा का स्तर अभी भी निम्न है। इससे समूहों के संचालन और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में कठिनाई होती है।

3. प्रशिक्षण की कमी :–

हालांकि कई SHGs प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाते हैं, परन्तु महिलाओं को उच्च गुणवत्ता वाले तकनीकी और व्यवसायिक प्रशिक्षण की अभी भी आवश्यकता है। यह समूहों की दीर्घकालिक सफलता के लिए अनिवार्य है।

4. सामाजिक बाधाएँ :–

महिलाओं के SHGs को कई बार सामाजिक पूर्वाग्रहों का सामना करना पड़ता है। पारंपरिक समाज में महिलाओं की भागीदारी को अब भी सीमित माना जाता है, जिससे उनकी प्रगति में बाधा आती है।

निष्कर्ष :–

झारखंड के महिला स्वयं–सहायता समूहों ने महिलाओं के जीवन में व्यापक परिवर्तन लाया है। ये समूह न केवल आर्थिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से भी महिलाओं को सशक्त बना रहे हैं। हालांकि, इन समूहों को सफल बनाने के लिए अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। SHGs की कार्यप्रणाली को और सुदृढ़ करने के लिए वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता, शिक्षा और जागरूकता के स्तर में वृद्धि, और सामाजिक बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है। SHGs के माध्यम से महिलाओं ने न केवल आर्थिक स्वतंत्रता हासिल की है बल्कि वे समाज में अपनी पहचान भी बना रही हैं। महिला सशक्तिकरण के इस सफर में SHGs की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायक है, और भविष्य में भी यह सशक्तिकरण के प्रयासों को मजबूती प्रदान करेंगे।

महिला SHGs झारखंड के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, बशर्ते उन्हें सही मार्गदर्शन

और संसाधन प्रदान किए जाएँ।

संदर्भ सूची :-

1. शिक्षा मंत्रालय. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf.
2. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय. (2007). महिला सशक्तिकरण हेतु स्वयं सहायता समूहों का योगदान. नई दिल्ली : भारत सरकार।
3. कंदुकुरी, सी. (2000). सेल्फ–हेल्प ग्रुप्स एंड रूरल डेवेलपमेंट : ए स्टडी इन आंध्र प्रदेश. इंडियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, 61(4), 597–612.
4. सेन, एस. (2006). विमेंस एम्पोवेरमेंट SHGs ए केस स्टडी ऑफ वेस्ट बंगाल. जर्नल ऑफ रूरल डेवेल्पमेंट, 25(1), 45–60.
5. भारत सरकार. (2009). महिला स्वयं सहायता समूहों की प्रगति पर राष्ट्रीय सर्वेक्षण रिपोर्ट. नई दिल्ली : महिला एवं बाल विकास मंत्रालय।
6. अनन्या, आर. (2008). इम्पैक्ट ऑफ सेल्फ हेल्प ग्रुप्स ऑन सोशल डेवेल्पमेंट ऑफ वीमेन इन तमिलनाडु. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ डेवेल्पमेंट स्टडीज, 6(2), 125–139.
7. बल्ली, एम. (2012). विमेंस एम्पोवेरमेंट एंड सोचेल चेंज इन इंडिया. नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन।
8. त्रिपाठी, एम. (2010). महिला विकास एक मूल्यांकन, ओमेगा पब्लिकेशन. हरियाणा : गुड़गांव।
9. शुक्ला, एस. पी. एवं सोनी, जे. महिला सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति : राजनैतिक सशक्तिकरण के परिपेक्ष्य में (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में). Int. J. Rev. and Res. Social Sci. 2019; 7(1):139-146.
10. चौरसिया, एस. एवं सिद्दीकी, एस. (2022). नगरीय महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका का एक अध्ययन (रीवा नगर के विशेष सन्दर्भ में), इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च इन साइंस, कम्युनिकेशन एंड टेक्नोलॉजी (IJARSCT) वॉल्यूम 2,(1), DOI: 10.48175/IJARSCT-7176 310 https://ijarsct.co.in/Paper7176.pdf
11. शर्मा, एस. (2017). भारत में महिला सशक्तिकरण एवं योजनाएं : एक अध्ययन, IJSRST, 3 (7). https://www.ijsrst.com/paper/10762.pdf

झारखण्ड सरकार साईट :-

1. https://www.jharkhand.gov.in/wcd
2. https://rural.gov.in/hi/press.release

ई–मेल– km425320@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 116–124

उत्तराखण्ड की अनुसूचित जाति के विकास एवं उत्थान में संविधान की भूमिका

कुसुम, भोधार्थी
डॉ. मनोज कुमार, असिसटेंट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल केन्द्रीय वि ववियालय,
बी0जी0आर0 परिसर, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड।

सारांश :-

अनुसूचित जातियां दे ा की वह जातियां है, जो बुनियादी सुविधाओं की कमी और भौगोलिक अलगाव के कारण अस्पृ यता की सदियों पुरानी प्रथा और कुछ अन्य कारणों से अत्यधिक सामाजिक, भौक्षिक और आर्थिक पिछडेपन से पीडित रही है। जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुचर्चित अनुपम वि ोशता है, जो कि हिन्दु धर्म द्वारा अनुमोदित है। ऐसा माना जाता है कि दुनिया में किसी भी समाज व्यवस्था को या धर्म व्यवस्था को ई वर द्वारा निर्मित नही किया गया है, बल्कि इस व्यवस्था का प्रतिपादन मनुश्य द्वारा हुआ है। जाति व्यवस्था ही नही बल्कि समस्त व्यवस्थाओं को मनुश्य द्वारा बनाया गया है। भारतीय इतिहास में जिन जातियों को वर्तमान में अनुसूचित जाति के नाम से जाना जाता है, प्राचीनकाल में उन्हे अछूत ,दास, दस्यु, अनार्य, भूद्र, अति ूद्र, अस्पृ य और तिरस्कृत हरिजन, दलित वर्ग के नाम से सम्बोधित किया जाता रहा है। भाायद ही कोई वर्ग जाति और समुदाय के नाम में इतने परिवर्तन हुए हो जितने अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के हुए हो इस वर्ग को सदियो से ही भोशण का ि ाकार होना पड़ा और भाक्ति ाली समुदाय और वर्ग इस वर्ग का भोशण करता आया है। जिसके कारण इसका सामाजिक, आर्थिक, भौक्षिक और राजनैतिक विकास नही हो पाया है और यह वर्ग निम्न जीवनयापन करने के लिए मजबूर है। लेकिन स्वतत्रता के प चात इस वर्ग के उत्थान के लिए कई सवैधानिक प्रावधान किये गये है, ताकि इस वर्ग का सर्वागीण विकास किया जा सके और समाज की मुख्यधारा में लाया जा सके।

शब्द कुंजी :- अनुसूचित जाति, विकास, उत्थान, सवैधानिक प्रावधान।

अनुसूचित जाति :-

भारत के संविधान के अनुच्छेद 366 (24) के अनुसार अनुसूचित जाति को इस प्रकार परिभाशित किया गया है, ऐसी जातियाँ, नस्लें जनजातियाँ या जनजातियों का हिस्सा या समूह जिन्हें भारतीय, संविधान के प्रयोजन के लिए अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जाति माना जाता है।

सामान्य रुप से दलित शब्द से तात्पर्य उस व्यक्ति या वर्ग से लगाया जा सकता है जिसका कि समाज में निम्नतम स्थान है। जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करता है, हर समय उत्पीड़न का शिकार है और जिसका वास्तविक रुप से समाज व सदस्यों द्वारा अपमान होता रहता है। एक दूसरे रुप में कहा जा सकता है कि परम्परागत भारतीय समाज में जाति प्रथा के अंतर्गत चार प्रमुख जातियां– ब्राहम्ण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र है। इन चारों के अलावा एक पांचवा वर्ग भी है जिसके सदस्यों को परम्परागत रुप में अस्पृश्य व अछूत कहा जाता था। गाँधी जी ने उन्हें हरिजन का नाम दिया और सरकार ने उन्हें कुछ सुविधाएं और संरक्षण देने के उद्देश्य से उन्हें एक सूची के अन्तर्गच रखते हुए अनुसूचित जाति के रुप में उनकी एक अलग पहचान बनायी। ये लोग सदियों से अस्पृश्य रहे है, साथ ही सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक व आर्थिक दृष्टि से अत्यंत पिछड़े भी है।

भारतीय समाज में आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछडे वर्ग जिसे हिन्दु समाज में जाति इकाईयों के सम्मिश्रण मे जिन्हे सबसे नीचले स्तर पर रखा गया और हरिजन, अत्यज, या अनुसूचित जाति कहलाते है। आर्यो से पूर्व भारतीय में वर्ण व्यवस्था का प्रचलन था, जिसमें जातियों को उनके कार्यो के अनुसार विभक्त किया गया था जिनमें ब्राहमण, क्षत्रिय, वै य, एवं भाूद्र को सबसे निचले स्तर पर रखा गया है। भारत में तीस हजार से भी अधिक जातियां एवं उपजातियां है यह व्यवस्था एक ओर हिन्दू समाज की संरचना को प्रकट करती है, तो दूसरी ओर हिन्दुओं के आचारण को भी नि चत करती है। 1931 के गोलमेल सम्मेलन से ब्रिटि ा प्रका ाको ने यह तय कर लिया गया था कि जो जातियां हिन्दू समाज में किसी न किसी कारण उपेक्षित रही है, उनकी एक सूची तैयार की गयी 1932 के बाद यह जरूरी हो गया कि इस वर्ग को मुख्यधारा में लाया जाए।

भारत में जाति की उत्पति :-

धर्म भाास्त्रों में सबसे पहले आर्यो का वेद ऋग्वेद है जिसमे पुरूश सूक्ल में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। जिसमें इस समाज व्यवस्था को चार वर्णो में बाटा गया है। जिनमें ब्राहमण, क्षत्रिय, वै य, एवं भाूद्र को सबसे निचले स्तर पर रखा गया है कार्यो के आधार पर इन जातियों को निर्धारित किया गया है जिससे की उच्च वर्ग उंचाई पर बना रहे। वर्ण व्यवस्था को स्थाई एवं सर्वमान्य बनाये रखने के लिए आर्यो द्वारा प्रचार किया गया कि वेदो की रचना ई वर द्वारा की गई है, वर्ण व्यवस्था भी ई वर द्वारा बनाई गई है।

इसके प चात मनु मानक आर्य ने मनुस्मृति नामक एक और विधान की रचना कर एक कदम और बढकर वर्ण में जाति और गोत्र की व्यवस्था बना दी यानि एक वर्ण के अन्दर अनेक उपजातियों ओर गोत्र को बनाकर जातियो के अन्दर उच्च और निम्न भावना को जन्म दिया इसमे ब्राहमण और क्षत्रियों के लिए तो रोटी बेटी का रि ता कर सकते है। लेकिन कोई जाति अपने से नीचे की जाति से भाादी विवाह नही करेगा अन्यथा अपवित्र और अ ाुद्ध हो जाएगा, जिससे वै य एवं भाूद्र विखर जाये और एकजुट नही हो सके और उच्च निम्न की भावना के कारण विखरे रहे।

'भारतीय समाज में विभिन्न सजातीय, धार्मिक, भाशायी और क्षेत्रीय समूहों का न केवल एक संकलन है वरन् प्रत्येक समूह अपनी ऐतिहासिक और सामाजिक सांस्कृतिक वि ोशताओं में विभेदीकरण के संदर्भ में बहुत जटिल भी है। भारतीय समाज में निरन्तरता और परिवर्तन के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है। जीवन प्रणालियों जीवन के प्रतिमानों, विरासत प्रबन्ध व्यवस्थाआ और उत्तराधिकारों के नियमों और जीवन यात्रा संस्कारों में विभिन्नताएँ परिलिक्षित होती है।'

प्राचीन काल में अनसूचित जाति की स्थिति :-

दलित (ूद्र) कौन है और कब से तथा किन कारणों से उनकी पतन की स्थिति बनी। वैदिक साहित्य जिसमें वेद, ब्राह्मण, अरण्यक, पूर्व उपनिशद आदि है, में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं मिलता जिसके आधार पर यह कहा जाये कि भूद्र जातिपूर्व या आदि काल में विद्यमान थे। ऋग्वेद (द्वितीय भाताब्दी या लगभग 1500 ई0 पू0) में आर्यों में केवल तीन जातियाँ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वै य का ही उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि भूद्र जाति की रचना आर्यों द्वारा ऋग्वेद के अंतिम चरण में की गई है। (कम्बले 1978:8) दत्त (1931) और आम्टे (1954) जैसे विद्वान भी है जो यह मानते है कि 'शूद्र वर्ग' ऋग्वेद में भी ज्ञात थे। यदि भूद्र भाब्द का उल्लेख नहीं मिलता तो इसका अर्थ नहीं है कि भूद्र नहीं थे। ब्राह्मण में कई बार भूद्र का उल्लेख ब्राह्मणों के साथ मिलता है, क्षत्रिय और वै यों का भी उल्लेख है, यह सब इण्डो आर्यन समाज के अभिन्न अंग थे ब्राह्मण के मूल ग्रंथ में भूद्रों को निम्नत्तम स्थान प्रदान किया गया और उन्हें ब्राह्मणें के बलि धर्म से पृथक ही माना गया। ऐसा सम्भवतः इसलिए है कि आर्यों से प्रजाति एवं संस्कृति में भिन्न थे। काम्बले के अनुसार वे न केवल आर्यों के देवताओं का विरोध करते थे, बल्कि वे बलि भी नहीं देते थे ओर न ही पुरोहितों को भेंट आदि ही देते थे।

सामान्यतः अनुसूचित जातियों को अस्पृभय जातियाँ भी कहा जाता है। अस्पृभयता का तात्पर्य है जो छूने योग्य नहीं है। अस्पृभयता एक ऐसी धारणा है जिसके अनुसार एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को छूने, देखने और छाया पड़ने मात्र से अपवित्रहो जाता है सवर्ण हिन्दुओं को अपवित्र होने से बचाने के लिए अस्पृभय लोगों के रहने के लिए अलग से व्यवस्था की गयी उन पर अनेक निर्योग्यताएं लाद दी गई और अनेक सम्पर्क से बचने के कई उपाय किये गये। अस्पृभयों के अन्तर्गत वे जातिसमूह आते हैं जिनके छूने से अन्य व्यक्ति अपवित्र हो जाये और जिन्हें पुनः पवित्र होने के कुछ वि ोश संस्कार करने पड़े।

डॉ. डी0 एन0 मजूमदार के अनुसार, ''अस्पृभय जातियाँ वे है जो विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक निर्योग्यताओं से पीड़ित है, जिनमें बहुत सी निर्योग्यताएं उच्च जातियों द्वारा परम्परागत रूप से निर्धारित और सामाजिक रूप से लागू की गई है।'' इस सम्बन्ध में डॉ एन के भार्मा ने लिखा है ''अस्पृभय वे है जिनके स्प ा से एक व्यक्ति अपवित्र हो जाये और उसे पवित्र होने के लिए कुछ कृत्य करने पड़े। ''आर एन सक्सेना ने इस बारे में लिखा है कि यदि ऐसे लोगों को अस्पृभय माना जाए जिनके छूने से हिन्दुओं को भाुद्धि करनी पड़े तो ऐसी स्थिति में हट्टन के एक उदाहरण के अनुसार ब्राह्मणों को अस्पृभय मानना पड़ेगा क्योंकि दक्षिण भारत में होलिया जाति के लोग बाह्मण को अपने गाँव के बीच से नहीं जाने देते हैं। और यदि वह चला जाता है तो वे लोग गाँव की भाुद्धि करते है। स्पश्ट है कि अस्पृभयता के निर्धारण में छूने मात्र से अपवित्र होने की बात पर्याप्त नहीं है।

अनुसूचित जाति भाब्द साइमन कमीं ान द्वारा 1935 में प्रयोग किया गया था जो कि अस्पृ य लोगों के लिए प्रयोग में लाया गया। अम्बेडकर के अनुसार आदिकालीन भारत में इन्हें 'भग्न पुरूश' या 'बाह्य जाति' माना जाता था। अंग्रेज उन्हें 'दलित वर्ग' कहते थे। महात्मा गांधी ने उन्हें 'ई वर के बालक' की संज्ञा से पुकारा। अस्पृ य जाति में ि ाक्षित लोगों ने इस नामकरण को स्वीकार नहीं किया क्योंकि वे सोचते थे कि ई वर के बालक' कहकर असमानता को जन्म देने वाली व्यवस्था को समाप्त करने की अपेक्षा उनकी द ाा में सुधार लाने के प्रयत्न किए जा रहे थे। (राय बर्मन 1977:82) भारतीय संविधानके निर्माताओं ने भी साइमन कमी ान द्वारा गढ़े गए भाब्द का प्रयोग किया। साइमन कमी ान ने किसी जाति को अनुसूचित जाति में सम्मिलित करने के लिए 13 आधार

बताए हैं।

- क्या वह जाति को अपने स्प र्ा या निकटता से अपवित्र करती है?
- क्या वह जाति मंदिरो में प्रवे ा नहीं कर सकती?
- क्या वह जाति स्कूलों, कुँओं और अन्य सार्वजनिक स्थानों के प्रयोग से वंचित की जाती है?
- क्या उस जाति के लिए ब्राह्मण, पुरोहित का कार्य कर सकते हैं?
- क्या उस जाति के लिए धोबी, दर्जी, नाई, कुम्हार आदि कार्य कर सकते हैं?
- क्या वह जाति ऐसी है जिसके हाथ से हिन्दू पानी ले सकता है?
- क्या उस जाति का ि ाक्षित व्यक्ति सामाजिक आदान प्रदान में उच्च जाति के व्यक्ति द्वारा समान समझा जाएगा?
- क्या वह व्यक्ति अपने ही अज्ञानता, अि ाक्षा व गरीबी के कारण दलित है और क्या इनके (अज्ञानता, अि ाक्षा व गरीबी) न होने से वह सामाजिक रूप से निर्योग्य नहीं हो सकती?
- क्या वह जाति अपने व्यवसाय के कारण दलित मानी जाती है?

दलित समाज की प्रमुख निर्योग्यताएं :-

- अध्ययन, अध्यापन व आम विकास के अवसरों से वंचित।
- धार्मिक ग्रंथों अध्ययन, वाचन और श्रवण पर निषेध।
- पूजा पाठ और मंदिर में प्रवेश करने पर निषेध।
- रथ व घोड़े की सवारी पर मनाही।
- सार्वजनिक घाटों, तालाबों और कुओं से पानी लेने पर प्रतिबंध।
- सार्वजनिक धर्मशालाओं, भोजनालयों आदि में प्रवेश पर प्रतिबंध।
- सम्पत्ति रखने के अधिकार से वंचित।
- राजनैतिक शासन सम्बंधी अधिकारों पर प्रतिबंध।
- अस्त्र–शस्त्र धारण करने और युद्ध कला सीखने पर प्रतिबंध।

उत्तराखण्ड में अनुसूचित जाति :-

उत्तराखण्ड में अनुसूचित जाति अथवा ि ाल्पी वर्ग की विभिन्न उपजातियों का उल्लेख एटकिन्सन (1886: 446–46) पाण्डे (1937 : 618–21) और सनवाल (1976 : 38) ने किया है जिनमें से अनेक की पुश्टि अभिलेखीय साक्ष्यों (अभि. सं. 31,39, 43, 47, 54, 65, 83, तथा बही क्र. 1 पृ. 9–11 क्र. पृ. 18) से भी होती है। कुछ व्यवसायगत जातियों के आधार से बाटा गया है।

कोली – बिनाई का कार्य करने वाले बुनकर। राजा के यहाँ कार्य करने वाली राजकोली कहलाता था।

टमटा – ताम्र के कार्य को करने वाला।

लौहार – लौह के कार्य को करने वाला।

भूल – तेल निकालने का कार्य करने वाला (तेली)।

रूड़िया – रिंगाल का कार्य करने वाला।

चिमड़िया – चिमड़िया या चिमारी लकड़ी के बर्तन बनाने वाले को।

आगरी – धातु की खानों में कार्य करने वाला।

बजनियाँ – बाजा बजाने वाला।

बखरिया – एटकिन्सन तथा बद्रीदत्त पाण्डे ने इसे घोड़े का रईस बताया है।

बाजदार – बाज पक्षी रखने व प्र ाक्षण देने वाला।

हनकिया – मिट्टी के बर्तन बनाने वाला।

तुरि – तुरि या तुरी अथात् एक प्रकार का बाजा इससे सम्बन्धित या इसे बजाने वाला।

चमार – चर्म का कार्य करने वाला इसे मिरासी भी कहा गया है।

हुड़कीवादी – हुड़का बजाकर अपनी हुडक्याड़ी के नृत्य से लोक मनोरंजन करने वाला।

औजी – औजी (दरजी) कपड़े सिलने का कार्य करने वाला।

रास – जागर लगाने वाला।

ढोली – ढोल (एक प्रकार का वाद्य यंत्र) बजाने वाला।

दमाई – दमौ (एक वाद्ययंत्र) बजाने वाला।

पारकी – पत्तों का कार्य करने वाला।

तिरूवा – तीर बनाने वाला।

बारूड़ी – बाँस का कार्य करने वाला।

बागुड़ी – जंगली जानवरों का ि ाकार करने वाला।

उपरोक्त जातियों में रोटी बेटी का सम्बन्ध प्रायः अपने ही समुदाय में होता था जैसे लोहार का लोहार से तथा टम्टा जाति का टमटा से, इसका मुख्य कारण अपने समान व्यवसाय करने वाले परिवार से सम्बन्ध स्थापित करने से वह व्यवसायिक सुविधा होती थी।

महात्मा गांधी ने यद्यपि अनुसूचित जातियों की समस्याओं को 1924 से ही उठाया था किन्तु उससे पूर्व भी कुछ प्रयत्न किए गए थे उनमें से प्रमुख प्रयत्न था 1916–1922 के बीच दलित वर्ग में ि ाक्षा को प्रोत्साहन देना। अस्पृभयता निवारण के लिए कुछ कार्य एवं योजनाएँ बनाई गई थी तथा दुकानों एवं पूजा स्थलों में उनके प्रवे ा के उद्दे य से 1922 में चलाए गए बारदाली कार्यक्रम में भी अस्पृभयों के उत्थान का ही उद्दे य था। 1932 में अस्पृभयों की सामाजिक निर्योग्यताओं के निवारण हेतु अनुसूचित जाति सेवक संघ संगठित किया गया था। अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा हेतु अनुसूचित जाति एवं जनजाति राश्ट्रीय आयोग के रूप में एक कार्य व्यवस्था का सज्जन किया गया है। यह आयोग अनुसूचित जातियों, जनजातियों के उत्थान के लिए नीतियों एवं प्रकरणों पर कार्य करने हेतु सलाहकार समिति के रूप में गठित किया गया हैं। उसमें सामाजिक मानव ाास्त्र, सामाजिक कार्य तथा अन्य समाजविज्ञानों के वि ोशज्ञ सम्मिलित हैं। इसके प्रमुख कार्य इस प्रकार है।

- अस्पृभयता की सीमा तथा उससे उत्पन्न सामाजिक भेदभाव एवं वर्तमान उपायों की प्रभाव ाीलता का अध्ययन करना।
- अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के प्रति किए गए अपराधों एवं सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों का अध्ययन करना।
- समाज की मुख्यधारा में एकीकरण को सुनि ित करने के उद्दे य से अनुसूचित जाति, जनजाति के

विकास के विविधपक्षों का अध्ययन करना।

यह आयोग इनके कल्याण सम्बन्धी कार्यों की देखभाल के लिए प्रत्येक राज्य में एक पृथक विभाग के रूप में कार्यरत है। इस आयोग में एक अध्यक्ष तथा ग्यारह अन्य सदस्य होते हैं। इसका कार्यकाल तीन वर्श का होता है। आयोग का प्र ाासनिक संगठन प्रत्येक राज्य में भिन्न भिन्न हैं। इन लोगों के कल्याण के प्रोत्साहन का कार्य कुछ स्वैच्छिक संगठन भी करते हैं। अखिल भारतीय स्तर के कुछ प्रमुख संगठन हैं। अनुसूचित जाति सेवक संघ दिल्ली, हिन्दू भंगी सेवक संघ नई दिल्ली और भारतीय आदिम जाति सेवक संघ नई दिल्ली।

स्वतन्त्रता के प□चात अनुसूचित जाति एवं संवैधानिक स्थिति :-

स्वतंत्रता प्राप्ति के प चात भारत के संविधान में भी अनुसूचित जातियों और साथ में अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़ी जातियों की सामाजिक निर्योग्यताओं के निवारण हेतु तथा विविध हितों को प्रोत्साहित करने के उद्देद य से कुछ प्रावधान किए गए थे।

अनुच्छेद 15 (1) में कहा गया है कि राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवं ा, जाति, लिंग, जन्म, स्थान, अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर कोई भेद नहीं करेगा। दुकानों, सार्वजनिक, मनोरंजन के स्थानों पर प्रवे ा करने और साधारण जनता के उपयोग के लिए बने कुँओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों आदि के प्रयोग से कोई किसी को नहीं रोकेगा।

अनुसूचित जाति के उत्थान हेतु अन्य संवैधानिक प्रावधान :-

अनुच्छेद 15 (4) : अनुसूचित जाति की उन्नति हेतु विशेष प्रावधानों को संदर्भित करता है।

अनुच्छेद 16 (4 अ) : यदि राज्य के तहत प्रदत्त सेवाओं में अनुसूचित जाति का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, तो पदोन्नति के मामले में यह किसी भी वर्ग या पदों हेतु आरक्षण का प्रावधान करता है।

अनुच्छेद 17 : अस्पृश्यता को कानून समाप्त करना।

अनुच्छेद 46 : अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा समाज के कमजोर वर्गों के शैक्षणिक व आर्थिक हितों को प्रोत्साहन औरसामाजिक अन्याय एवं शोषण से सुरक्षा प्रदान करना।

संविधान के अनुच्छेद 330 और अनुच्छेद 332 क्रमशः लोकसभा एवं राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में सीटों को आरक्षित करते हैं।

अनुच्छेद 335 : संघ और राज्यों के मामलों में सेवाओं और पदों पर नियुक्तियों हेतु अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावे को लगातार प्रशासनिक दक्षता के साथ ध्यान में रखना।

पंचायतों से संबंधित संविधान के भाग IX और नगर पालिकाओं से संबंधित भाग IXA में SC तथा ST के सदस्यों हेतु आरक्षण की परिकल्पना की गई है जो कि SC और ST को प्राप्त है।

अनुच्छेद 15 (4) में आरक्षण तथा अनुच्छेद 16 (4) में आर्थिक विकास की गारण्टी दी गई है। अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पश्यता का अन्त कर उसका किसी भी रूप में प्रचलन नि ाद्ध कर दिया गया है।

अनुच्छेद 19 के अनुसार अस्पृश्यों की व्यावसायिक निर्योग्यता को समाप्त किया जा चुका है और उन्हें किसी भी व्यवसाय को अपनाने की आजादी प्रदान की गयी है। अनुच्छेद 29 के अनुसार राज्य द्वारा पूर्ण तथा आं ाक सहायता प्राप्त किसी ि ाक्षण संस्था में किसी नागरिक को धर्म, जाति, वं ा, अथवा भाशा के आधार पर प्रवे ा से रोका नहीं जा सकता।

- अनुच्छेद 25 में हिन्दुओं की सार्वजनिक धार्मिक स्थानों के द्वारा सभी जातियों के लिए खोल देने की व्यवस्था की गयी हैं।
- अनुच्छेद 146, में कहा गया है कि राज्य दुर्बलतर लोगों जिनमें अनुसूचित जातियाँ, आदिम जातियाँ आती हैं की आर्थिक हितों,तथा ि ाक्षा सम्बन्धी की रक्षा करेगा और सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय एवं भाोशण से उनको बचायेगा।
- अनुच्छेद 330, 332 और 334 में अनुसूचित जातियाँ तथा आदिम जातियों के लिए संविधान लागू होने 20 वर्श तक लोकसभा, विधानसभा ग्राम पंचायतों और स्थानीय निकायों में स्थान सुरक्षित रहेंगे।

बाद में यह अवधि दस वर्श के लिएतीन बार बढ़ा दी गयी। अनुच्छेद 335 में कहा गया है कि संघ या राज्य के कार्यों से सम्बन्धित सेवाओं एवं पदो ंके लिए नियुक्तियाँ करने में अनुसूचित जातियों के हितों का ध्यान रखा जायेगा।

अनुच्छेद 146 एवं 338 के में, अनुसूचित जातियों के कल्याण एवं हितों की रक्षा के लिए राज्य में सलाहकार परिषदों एवं पृथक विभाग की स्थापना का प्रावधान की गई है। साथ ही यह भी प्रावधान किया गया है कि राश्ट्रपति अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए एक वि ोश पदाधिकारी नियुक्त करेगा।

इन संवैधानिक व्यवस्थाओं के द्वारा अस्पृभयता निवारण एवं अनुसूचित जातियों तथा पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए सरकार के द्वारा वि ोश प्रयत्न किया गया है।

विशेष अधिकारी :-

प्रारंभ में संविधान के अनुच्छेद 338 के तहत एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान किया गया था। इस विशेष अधिकारी को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त (Commissioner) के रूप में नामित किया गया।

65वाँ संशोधन अधिनियम, 1990 :-

संविधान के 65वें संशोधन अधिनियम, 1990 द्वारा अनुच्छेद 338 में संशोधन किया गया। 65वाँ संशोधन, 1990 द्वारा एक सदस्यीय प्रणाली को बहु–सदस्यीय राष्ट्रीय अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST) आयोग के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

89वाँ संशोधन अधिनियम, 2003 :-

अनुच्छेद 338 में संशोधन द्वारा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति हेतु गठित पूर्ववर्ती राष्ट्रीय आयोग को वर्ष 2004 में दो अलग–अलग आयोगों में बदल दिया गया।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (National Commission for Scheduled Castes-NCSC)।

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (National Commission for Scheduled Tribes-NCST)।

संरचना :-

NCSC में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और तीन अतिरिक्त सदस्य होते हैं। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति के हस्ताक्षर और मुहर के तहत एक वारंट द्वारा की जाती है। उनकी सेवा की शर्तें और पद का कार्यकाल भी राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित किया जाता है।

कार्य :-

- अनुसूचित जातियों के लिये संवैधानिक और अन्य कानूनी सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जाँच एवं निगरानी करना तथा उनके कामकाज का मूल्यांकन करना।
- अनुसूचित जातियों को अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के संबंध में विशिष्ट शिकायतों की जाँच करना।
- अनुसूचित जातियों के सामाजिक–आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना तथा केंद्र या राज्य के तहत उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना।
- राष्ट्रपति को वार्षिक रूप से और ऐसे अन्य अवसरों पर, जैसा वह उचित समझे, सुरक्षा उपायों के कार्यकरण पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना।
- अनुसूचित जातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक–आर्थिक विकास के लिये सुरक्षा उपायों एवं अन्य उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु केंद्र या राज्य द्वारा किये जाने वाले उपायों के बारे में सिफारिशें करना।

वर्ष 2018 तक आयोग को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के संबंध में भी समान कार्य करने की आवश्यकता थी। इसे 102वें संशोधन अधिनियम, 2018 द्वारा इस उत्तरदायित्व से मुक्त किया गया था।

अनुसूचित जाति के उत्थान के लिये अन्य संवैधानिक प्रावधान :-

- **अनुच्छेद 15 :** यह अनुच्छेद विशेष रूप से जाति के आधार पर भेदभाव के मुद्दे को संबोधित करता है, अनुसूचित जातियों (SC) के संरक्षण और उत्थान पर बल देता है।
- **अनुच्छेद 17 :** यह अनुच्छेद अस्पृश्यता को समाप्त करता है और किसी भी रूप में इसके अभ्यास पर रोक लगाता है। यह सामाजिक भेदभाव को खत्म करने तथा सभी व्यक्तियों की समानता एवं सम्मान को बढ़ावा देता है।
- **अनुच्छेद 46 :** शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना : यह अनुच्छेद राज्य को अनुसूचित जातियों और समाज के अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को बढ़ावा देने तथा उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने का निर्देश देता है।
- **अनुच्छेद 243D(4) :** यह प्रावधान क्षेत्र में उनकी आबादी के अनुपात में पंचायतों (स्थानीय स्व–सरकारी संस्थानों) में अनुसूचित जाति के लिये सीटों के आरक्षण को अनिवार्य करता है।
- **अनुच्छेद 243T(4) :** यह प्रावधान क्षेत्र में उनकी आबादी के अनुपात में नगर पालिकाओं (शहरी स्थानीय निकायों) में अनुसूचित जाति के लिये सीटों का आरक्षण सुनिश्चित करता है।

अनुच्छेद 330 और अनुच्छेद 332 में लोकसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं (क्रमशः) में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में सीटों के आरक्षण का प्रावधान है।

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम-1989 तथा नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 का क्रियान्वयन :

अनुसूचित जातियों के प्रति अस्पृश्यता छुआछूत की भावना को समाप्त करने के उद्देश्य से नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 तथा अनुसूचित जाति जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 का क्रियान्वयन पूरे प्रदेश में किया जा रहा है। अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम

1989 के अधीन भारत सरकार के असाधारण राजपत्र दिनांक 31 मार्च,1995 के भाग–2 खण्ड–3 में प्रख्यापित अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) नियमावली 1995 के आधार पर उत्पीड़ित अनुसूचित जाति जनजाति के व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार के उत्पीड़न की घटनाओं के अनुसार अधिकतम रूपये 8,25,000/– की आर्थिक सहायता दो चरणों में दिये जाने का प्रविधान किया गया है।

निष्कर्ष :-

अनुसूचित जाति के कल्याण हेतु सविधान में अनेक प्रावधान किये गये ताकि निम्न जीवनयापन करने वाले इस वर्ग का सर्वागीण विकास हो सके और इस वर्ग को मुख्याधारा में लाया जा सके सदियों से उत्पीड़न का ि ाकार इस निम्न वर्ग का विकास और उत्थान के लिए अनेक योजनाओं को लागू किया गया वर्तमान समय में इस वर्ग को सामाजिक, आर्थिक, भौक्षिक, राजनैतिक स्तर पर आगे बडाने पर वि ोश कार्य किये जा रहे है। उत्तराखण्ड में भी निम्न जीवन यापन करने वाले इस वर्ग के विकास के लिए अनेक योजनाए चलाई जा रही है, जो राज्य एवं केन्द्रसरकार द्वारा प्रयोजित है।

संदर्भ :-

1. https://ncsc.nic.in/files/ncsc/new3/201.pdf
2. https://www.scotbuzz.org
3. भार्मा, रामभारण, भूद्रो का प्राचीन इतिहास, मोतीलाल बनारसी दास पब्लि ार्स, प्रा0 लि0 नई दिल्ली, 1978 पृ. संख्या 8
4. गोयल, प्रीति प्रभा, भारतीय सस्कृति जोधपुर राजस्थान ग्रन्थागार, 1989, पृ0 संख्या 18
5. भार्मा, के. एल. (2006) 'भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन' रावत पब्लिके ान जयपूर एवं दिल्ली।
6. आहूजा, राम (2004) 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' रावत पब्लिके ान जयपुर, नई दिल्ली पृ0 320।
7. गुप्ता एण्ड भार्मा, (2007) 'समाज ाास्त्र प्रतियोगिता साहित्य' साहित्य भवन पब्लिके ान पृ0 413–414।
8. आहूजा, राम (2004) पूर्वोक्त पृ0 स0 321।
9. https://socialwelfare.uk.gov.in
10. नेगी, डॉ0 विद्याधर सिंह (2011) 'कुमाऊँ का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास' मल्लिका बुक, नई दिल्ली पृ0 93–95।
11. आहूजा, राम (2004) पूर्वोक्त, पृ0 325।
12. गुप्ता एण्ड भार्मा (2007) पूर्वोक्त, पृ0 416–417
13. hhttps://www.drishtiios.com

Email : Khushi17.dp@gmail.com

Email : kumar.kumarmanoj989@gmaii.com

Mob. 9760033053, 9760494025

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 125–131

औद्योगीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव : हिंदी उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि

प्रिंस कुमार, शोधार्थी,
डॉ. पूजा गुप्ता, शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग, भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार।

सारांश :–

औद्योगीकरण और वैश्वीकरण ने भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया है। हिंदी उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष की छवि समय के साथ बदली है, जो इन परिवर्तनों को प्रतिबिंबित करती है। प्रारंभिक हिंदी उपन्यासों में श्रमिक वर्ग का चित्रण शोषण, गरीबी और वर्ग संघर्ष के रूप में होता था, जैसे प्रेमचंद के उपन्यासों में देखा जा सकता है। औद्योगीकरण के साथ, श्रमिकों की समस्याएँ बदलीं, जिनमें बेरोजगारी, श्रम अधिकारों का हनन और पूंजीवादी शोषण प्रमुख रहे। वैश्वीकरण के बाद, उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी उभरने लगा। समकालीन हिंदी उपन्यासों में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों, प्रवासी मजदूरों और तकनीकी परिवर्तन के प्रभाव को प्रमुखता मिली है।

यह शोध पत्र हिंदी उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि का विश्लेषण करेगा और औद्योगीकरण एवं वैश्वीकरण के प्रभावों को साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास करेगा।

बीज शब्द :– औद्योगीकरण, वैश्वीकरण, श्रमिक संघर्ष, हिंदी उपन्यास, सामाजिक यथार्थवाद, पूंजीवाद, प्रवासी मजदूर, असंगठित श्रमिक, श्रम अधिकार, साहित्यिक परिप्रेक्ष्य।

परिचय :–

भारत में औद्योगीकरण और वैश्वीकरण दो ऐसी प्रक्रियाएँ हैं, जिन्होंने न केवल आर्थिक, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संरचनाओं को भी गहरे रूप से प्रभावित किया है। खासकर श्रमिक वर्ग पर इन दोनों घटनाओं का गहरा असर पड़ा है। जहाँ औद्योगीकरण ने भारत में औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार किया, वहीं वैश्वीकरण ने बाजारों को विश्व स्तर पर एकीकृत किया। इस परिवर्तन के कारण श्रमिकों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में भी महत्वपूर्ण बदलाव आए। हिंदी साहित्य, विशेष रूप से उपन्यासों ने इन बदलावों को प्रमुखता से उठाया है और श्रमिक वर्ग के संघर्षों की बदलती छवि को प्रस्तुत किया है।

औद्योगीकरण और वैश्वीकरण ने भारतीय समाज को एक नई दिशा दी, लेकिन इसके साथ ही श्रमिक वर्ग की स्थिति में असमानताएँ और शोषण की नयी परतें भी उभरकर सामने आईं। हिंदी उपन्यासों में इन श्रमिक

संघर्षों का चित्रण शोषण, असमानता, अधिकारों की लूट, और जीवन की परिस्थितियों के बदलाव को स्पष्ट करता है। ये उपन्यास समाज के शोषित और संघर्षशील वर्ग की आवाज को उकेरते हैं, जिनमें श्रमिक वर्ग के उत्पीड़न के विविध पहलुओं का गहन विश्लेषण किया गया है।

औद्योगीकरण और श्रमिक संघर्ष :-

औद्योगीकरण भारतीय समाज के सामाजिक और आर्थिक ढांचे में गहरे बदलाव लेकर आया। 19वीं शताब्दी के अंत और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में औद्योगिकरण ने भारतीय समाज में नए उद्योगों की स्थापना की और श्रमिकों के लिए नए रोजगार के अवसर उत्पन्न किए। लेकिन इन अवसरों के साथ ही नए शोषण की परंपरा भी शुरू हुई। ब्रिटिश शासन के दौरान स्थापित उद्योगों में श्रमिकों का शोषण तेजी से बढ़ा। श्रमिकों को बेहद कम वेतन, लंबे काम के घंटे, असुरक्षित कार्यस्थल, और खराब जीवन स्थितियों का सामना करना पड़ा। यह परिस्थितियाँ उस समय के औद्योगिक वातावरण का दर्पण बन गईं।

हिंदी साहित्य में औद्योगिकीकरण के दौरान श्रमिक संघर्षों को कई महत्वपूर्ण उपन्यासों के माध्यम से चित्रित किया गया। मुंशी प्रेमचंद का गोदान और सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का कर्मभूमि जैसे उपन्यासों में औद्योगिकीकरण के शोषणात्मक पहलुओं को उजागर किया गया है। इन उपन्यासों में श्रमिकों के अधिकारों के लिए संघर्ष, शोषण और उनके कष्टों को प्रमुखता से दर्शाया गया है।

प्रेमचंद ने गोदान में ग्रामीण और श्रमिक जीवन की कठिनाइयों को दिखाया है, जबकि निराला ने कर्मभूमि में श्रमिकों के जीवन में औद्योगिकीकरण द्वारा उत्पन्न हुई चुनौतियों और उनके संघर्ष को खंडित किया है। इन उपन्यासों में श्रमिक वर्ग के शोषण और उनके संघर्ष को यथार्थवादी तरीके से प्रस्तुत किया गया है, जो उस समय के समाज का सटीक चित्रण करते हैं।

वैश्वीकरण और श्रमिक संघर्ष :-

1991 में भारत में शुरू हुए आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं ने भारतीय समाज को एक नई दिशा दी। वैश्वीकरण ने न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक स्तर पर जोड़ा, बल्कि इससे भारतीय श्रमिकों की स्थिति भी प्रभावित हुई। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन, विदेशी निवेश, और बाजारों के खुलने से भारतीय श्रमिकों को नए अवसर प्राप्त हुए, लेकिन इसके साथ ही नई चुनौतियाँ भी सामने आईं।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप, श्रमिकों का शोषण अधिक तीव्र हुआ। कंपनियों ने अपने मुनाफे को बढ़ाने के लिए श्रमिकों का शोषण करना शुरू किया, और उनके अधिकारों का उल्लंघन भी हुआ। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले श्रमिकों को विशेष रूप से इसका अधिक सामना करना पड़ा। जहां एक ओर वैश्वीकरण ने भारतीय उद्योगों को प्रतिस्पर्धात्मक बनाया, वहीं दूसरी ओर यह श्रमिकों के लिए नए उत्पीड़न का कारण भी बना।

हिंदी उपन्यासों में वैश्वीकरण के प्रभावों को भी प्रमुखता से चित्रित किया गया है। श्रीलाल शुक्ल का राग दरबारी और दीपक गुप्ता का अग्निपथ जैसे उपन्यास वैश्वीकरण के दौरान श्रमिकों के संघर्ष और शोषण को दर्शाते हैं। इन उपन्यासों में वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई सामाजिक असमानताएँ, श्रमिकों की समस्याएँ, और उनके अधिकारों की लूट को चित्रित किया गया है।

श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि :-

श्रमिक संघर्ष की छवि समय के साथ बदलती रही है। औद्योगिकीकरण के दौर में श्रमिक संघर्ष मुख्यतः

शोषण, असमानता और मेहनत की स्थिति को लेकर था। श्रमिक वर्ग के लिए संगठित होकर अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ना एक महत्वपूर्ण कदम था। लेकिन जैसे–जैसे वैश्वीकरण का दौर आया, श्रमिकों के संघर्ष की परिभाषा में भी बदलाव हुआ। अब यह संघर्ष केवल शारीरिक शोषण तक सीमित नहीं रहा, बल्कि श्रमिकों के मानसिक और सामाजिक उत्पीड़न का भी महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया। श्रमिकों के जीवन में असुरक्षा, शोषण, असमानता, और उनके अस्तित्व के लिए लड़ाई अब वैश्विक प्रतिस्पर्धा और पूंजीवादी प्रणाली के खिलाफ हो गई। हिंदी उपन्यासों में श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि ने इन नए पहलुओं को उजागर किया है। श्रमिकों के संघर्ष को अब केवल आर्थिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी देखा जाने लगा है। उपन्यासों में श्रमिकों के जीवन के विभिन्न पहलुओं, उनके निजी संघर्षों, और समाज में उनके स्थान को दर्शाया गया है। इसके साथ ही यह संघर्ष केवल एक स्थानीय मुद्दा न होकर वैश्विक स्तर पर एक सामाजिक बदलाव की आवश्यकता बन गया है।

औद्योगीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव ने भारतीय श्रमिक वर्ग की स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। औद्योगिकीकरण ने श्रमिकों के लिए नए अवसर उत्पन्न किए, लेकिन इसके साथ ही शोषण और असमानता की परिस्थितियाँ भी बढ़ी। वैश्वीकरण ने श्रमिकों के लिए नई चुनौतियाँ उत्पन्न कीं, जिससे उनका शोषण और भी तीव्र हो गया। हिंदी उपन्यासों में इन दोनों घटनाओं के प्रभावों को प्रमुखता से चित्रित किया गया है, और श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि को प्रभावी तरीके से दिखाया गया है। यह उपन्यास न केवल समाज के शोषित वर्ग की संघर्षशील स्थिति को प्रस्तुत करते हैं, बल्कि वे शोषण, असमानता और श्रमिकों के अधिकारों के लिए लड़ाई की महत्वपूर्ण कहानी भी बताते हैं।

औद्योगिकीकरण और श्रमिक संघर्ष : एक ऐतिहासिक दृष्टि :–

औद्योगिकीकरण का अर्थ है उत्पादन के पारंपरिक तरीकों से लेकर मशीनों द्वारा उत्पादन करने की ओर बढ़ना। यह प्रक्रिया न केवल तकनीकी बदलाव लाती है, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण बदलाव उत्पन्न करती है। औद्योगिकीकरण ने पूरे विश्व में आर्थिक ढांचे को प्रभावित किया, और भारतीय समाज में इसके गहरे प्रभाव पड़े। औद्योगिकीकरण के प्रभावों का एक महत्वपूर्ण पहलू था श्रमिकों का संघर्ष, जो उनकी स्थिति और उनके अधिकारों के लिए एक निरंतर प्रक्रिया बन गया। भारतीय संदर्भ में औद्योगिकीकरण का प्रभाव विशेष रूप से ब्रिटिश शासन के दौरान और उसके बाद आया, जिससे भारतीय श्रमिक वर्ग ने न केवल अपनी परिस्थितियों का मुकाबला किया, बल्कि अपने अधिकारों के लिए भी संघर्ष किया।

ब्रिटिश औद्योगिकीकरण और श्रमिक संघर्ष :–

भारत में औद्योगिकीकरण का प्रारंभ 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश शासन के दौरान हुआ। औद्योगिकीकरण के इस दौर में भारतीय उपमहाद्वीप में प्रमुख उद्योगों का विकास हुआ, लेकिन यह औद्योगिकीकरण भारत के श्रमिक वर्ग के लिए शोषण और कष्टों का कारण बना। ब्रिटिश शासन ने भारतीय संसाधनों का दोहन किया और भारतीय श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी, खराब काम की परिस्थितियों, लंबी कार्य दिवस और असुरक्षित कार्यस्थल की ओर धकेल दिया। औद्योगिकीकरण के इस दौर में श्रमिकों के लिए कोई श्रम कानून नहीं थे, और यह उन्हें शोषण के समक्ष बेहद असहाय बना देता था।

ब्रिटिश काल के दौरान स्थापित कारखानों और उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों के जीवन की स्थितियाँ अत्यंत

दयनीय थीं। मैनचेस्टर, बर्मिंघम और लिवरपूल जैसे औद्योगिक नगरों की तरह, भारत में भी औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया ने श्रमिकों को लंबे समय तक काम करने के लिए मजबूर किया गया, और इसके बदले उन्हें बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। उनके कार्यस्थल असुरक्षित थे, और स्वास्थ्य संबंधी जोखिम भी अधिक थे। यह स्थिति केवल ब्रिटिश शासन तक सीमित नहीं रही, बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी औद्योगिकीकरण ने भारतीय श्रमिकों की परिस्थितियों को बहुत हद तक प्रभावित किया।

स्वतंत्रता संग्राम और श्रमिक संघर्ष :-

ब्रिटिश औद्योगिकीकरण के दौरान भारतीय श्रमिकों के शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष शुरू हो गया था। स्वतंत्रता संग्राम के समय, श्रमिकों का आंदोलन राजनीतिक दृष्टिकोण से भी जुड़ गया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और अन्य स्वतंत्रता संगठनों ने श्रमिकों के अधिकारों के मुद्दे को उठाया, और औद्योगिक श्रमिकों की दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए कई प्रस्ताव दिए।

स्वतंत्रता संग्राम के साथ–साथ श्रमिक आंदोलनों ने भी ताकत पकड़ी। 1920 के दशक में भारतीय श्रमिकों ने संगठित होकर अपनी आवाज उठानी शुरू की। भारतीय मजदूर संघ और भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस जैसे संगठनों ने श्रमिकों के अधिकारों के लिए कई संघर्षों की शुरुआत की। इन आंदोलनों का उद्देश्य श्रमिकों की मजदूरी, कार्य समय, और कार्यस्थल की सुरक्षा में सुधार लाना था। 1928 में कोल इंडिया के श्रमिकों द्वारा किया गया संघर्ष और 1946 के बंबई बंद जैसे आंदोलनों ने श्रमिक वर्ग के संघर्ष को एक नई दिशा दी।

औद्योगिकीकरण के बाद श्रमिकों की स्थिति :-

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारतीय समाज में औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया ने और भी तेजी पकड़ ली, खासकर 1950 के दशक में। 1947 के बाद भारतीय सरकार ने औद्योगिकीकरण को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ बनाई, जिसमें भारी उद्योग, बिजली और इस्पात उद्योग शामिल थे। सरकार ने बड़े–बड़े औद्योगिक प्रकल्प स्थापित किए, लेकिन श्रमिकों की स्थिति में सुधार के लिए उतनी ठोस पहल नहीं की गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी श्रमिकों को अपनी श्रम शक्ति के उचित मूल्य के लिए संघर्ष करना पड़ा। सरकारी उपेक्षा और निजी उद्योगपतियों द्वारा शोषण जारी रहा। श्रमिकों की मजदूरी में बढ़ोतरी करने और उनके कार्य वातावरण को सुरक्षित बनाने के लिए कई श्रम कानून बने, लेकिन इन कानूनों का पालन कितनी हद तक हुआ, यह एक बड़ा सवाल था। इसके बावजूद, औद्योगिकीकरण के दौर में श्रमिकों के संघर्ष ने भारतीय समाज में श्रमिक अधिकारों को लेकर जागरूकता पैदा की।

आधुनिक औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण का प्रभाव :-

1991 के आर्थिक सुधारों और वैश्वीकरण के बाद भारत में औद्योगिकीकरण ने एक नया मोड़ लिया। अब भारत ने वैश्विक स्तर पर निवेश आकर्षित करने के लिए कई कदम उठाए। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ (MNCs) भारत में आकर अपने उद्योग स्थापित करने लगीं। इसने भारतीय श्रमिकों के लिए नए अवसरों के द्वार खोले, लेकिन इसके साथ ही शोषण और श्रमिक अधिकारों की लूट का एक नया दौर भी शुरू हो गया।

वैश्वीकरण ने श्रमिकों को असंगठित क्षेत्र में और भी अधिक असुरक्षा की स्थिति में धकेल दिया। कंपनियाँ अपने उत्पादन लागत को कम करने के लिए श्रमिकों को कम वेतन और असुरक्षित काम करने के लिए मजबूर करने लगीं। इसके अलावा, श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी, काम के घंटे और कार्यस्थल की सुरक्षा जैसे मुद्दों पर

लड़ाई लड़नी पड़ी।

आजकल, औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण के कारण श्रमिकों का संघर्ष न केवल वेतन और काम की स्थितियों तक सीमित है, बल्कि यह उनके सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों तक फैल गया है। श्रमिक संगठनों ने अब इस संघर्ष को एक बड़े सामाजिक आंदोलन के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें वैश्विक स्तर पर श्रमिकों के अधिकारों की लड़ाई शामिल है।

औद्योगिकीकरण और श्रमिक संघर्ष का इतिहास भारतीय समाज के सामाजिक और आर्थिक विकास के इतिहास के महत्वपूर्ण पहलू के रूप में सामने आता है। औद्योगिकीकरण ने न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था को एक नई दिशा दी, बल्कि यह भारतीय श्रमिक वर्ग के लिए संघर्ष और शोषण की एक लंबी कहानी भी लिखी। श्रमिकों का संघर्ष अपने अधिकारों के लिए, बेहतर काम की स्थितियों के लिए और शोषण के खिलाफ है। यह संघर्ष अब भी जारी है, और वैश्वीकरण के दौर में यह और भी जटिल हो गया है। श्रमिकों के संघर्ष की यह यात्रा न केवल भारत के लिए, बल्कि पूरी दुनिया में श्रमिक अधिकारों की रक्षा के लिए एक प्रेरणा बन चुकी है।

हिंदी उपन्यासों में औद्योगिकीकरण और श्रमिक संघर्ष :–

1. गोदान (1936) : मुंशी प्रेमचंद :

मुंशी प्रेमचंद का गोदान हिंदी साहित्य का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है, जो न केवल किसानों की समस्याओं को दर्शाता है, बल्कि इसमें श्रमिकों के संघर्ष को भी दिखाया गया है। होरी, जो एक गरीब किसान है, औद्योगिकीकरण के समय में अपने जीवन को बेहतर बनाने की कोशिश करता है, लेकिन वह शोषण और उत्पीड़न का शिकार हो जाता है। गोदान में प्रेमचंद ने श्रमिक वर्ग की भयंकर परिस्थितियों और उनके संघर्ष को बहुत प्रभावी तरीके से उकेरा है। श्रमिक वर्ग के दुख–दर्द को प्रेमचंद ने अपनी कहानी के माध्यम से विस्तार से दर्शाया है, और यह उपन्यास उस समय के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हालात का सूक्ष्म चित्रण प्रस्तुत करता है।

2. कर्मभूमि (1951) : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' :

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का कर्मभूमि उपन्यास औद्योगिकीकरण और श्रमिक संघर्ष के संदर्भ में महत्वपूर्ण है। इस उपन्यास में श्रमिकों के जीवन की कष्टपूर्ण सच्चाई को उजागर किया गया है। कर्मभूमि में श्रमिकों के संघर्ष को यथार्थ के धरातल पर दिखाया गया है, जिसमें उनका शोषण, असमानता और उनके अधिकारों के लिए संघर्ष का चित्रण किया गया है। निराला ने इस उपन्यास के माध्यम से यह दिखाया कि कैसे श्रमिक वर्ग के लोग अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं, लेकिन व्यवस्था के खिलाफ उनकी यह लड़ाई कमजोर पड़ जाती है।

3. शब्दों का विश्वास (1992) : शिवानी :

शिवानी का उपन्यास शब्दों का विश्वास शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के प्रभावों को बहुत प्रभावी तरीके से दर्शाता है। यह उपन्यास श्रमिक वर्ग की जीवनशैली और उनके संघर्ष को दर्शाता है, जो औद्योगिकीकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ है। शिवानी ने इस उपन्यास में दिखाया कि कैसे औद्योगिकीकरण ने श्रमिकों के जीवन को और कठिन बना दिया। यह उपन्यास श्रमिकों के शोषण, उनके अधिकारों की कमी और उनके अस्तित्व को बनाए रखने के लिए संघर्ष के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

वैश्वीकरण और श्रमिक संघर्ष : एक नया परिप्रेक्ष्य :-

1991 में भारत में आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने भारतीय अर्थव्यवस्था को एक नया मोड़ दिया। वैश्वीकरण ने भारतीय उद्योगों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा का सामना कराया, लेकिन इसके साथ ही श्रमिकों की स्थिति में और भी गिरावट आई। विदेशी निवेश, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन और खुले बाजार की नीतियों ने भारतीय श्रमिकों के जीवन में नई समस्याएँ उत्पन्न कीं। वैश्वीकरण के कारण श्रमिक वर्ग के लिए नए अवसर उत्पन्न होने के बजाय उनके अधिकारों का उल्लंघन और शोषण और भी बढ़ गया।

वैश्वीकरण ने श्रमिकों को असंगठित क्षेत्र में काम करने के लिए मजबूर किया, जहाँ वे न्यूनतम वेतन, असुरक्षित कार्यस्थलों, और अस्थिर रोजगार की समस्याओं से जूझ रहे थे। कंपनियों ने अपनी लागत को कम करने के लिए श्रमिकों का शोषण किया, और उनका जीवन स्तर लगातार गिरता गया। इसके अलावा, वैश्वीकरण ने श्रमिकों के श्रम की कीमत को भी कम किया, और उनके लिए प्रतिस्पर्धात्मक स्थितियाँ और भी कठिन हो गईं।

हिंदी उपन्यासों में वैश्वीकरण और श्रमिक संघर्ष :-

1. राग दरबारी (1960) : श्रीलाल शुक्ल :

राग दरबारी उपन्यास हिंदी साहित्य का एक महत्वपूर्ण और व्यंग्यात्मक उपन्यास है, जो भारत की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति पर गहरी चोट करता है। हालांकि यह उपन्यास औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण के बाद के दौर की बातें नहीं करता, लेकिन इसमें श्रमिकों की स्थिति और उनके शोषण का संकेत मिलता है। शुक्ल ने इस उपन्यास में सरकारी नीतियों और राजनीतिक भ्रष्टाचार के माध्यम से श्रमिकों की उपेक्षा और शोषण को प्रमुखता से दिखाया है। उपन्यास में यह दिखाया गया है कि कैसे श्रमिकों के अधिकारों को नजरअंदाज किया जाता है और उनके जीवन में कोई सुधार नहीं होता।

2. अग्निपथ (1999) : दीपक गुप्ता :

अग्निपथ उपन्यास वैश्वीकरण के प्रभाव को श्रमिकों की दृष्टि से प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास उन श्रमिकों के संघर्ष को दिखाता है जो बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा शोषण और शोषण के नए तरीकों का शिकार हो जाते हैं। गुप्ता जी ने इस उपन्यास में दिखाया है कि कैसे वैश्वीकरण ने भारतीय श्रमिकों की स्थिति को और भी कठिन बना दिया है। नए उद्योग और कारखघने जो विदेशी निवेश से बने थे, वहां श्रमिकों का शोषण बढ़ा, और उनके लिए काम की स्थितियाँ और भी खराब हो गईं।

3. दीवार (2000) : अशोक वाजपेयी :

अशोक वाजपेयी का दीवार उपन्यास वैश्वीकरण के प्रभावों को उजागर करता है। इसमें श्रमिकों के जीवन की जटिलताओं और संघर्षों को वैश्विक दृष्टिकोण से देखा गया है। उपन्यास में यह दिखाया गया है कि कैसे बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्विक बाजार के प्रभाव ने भारतीय श्रमिकों की स्थितियों को और जटिल बना दिया। वाजपेयी जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से यह स्पष्ट किया कि कैसे वैश्वीकरण ने श्रमिकों की मजदूरी, काम के घंटे और कार्यस्थल की सुरक्षा को प्रभावित किया।

निष्कर्ष :-

औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण ने भारतीय श्रमिकों के जीवन और उनके संघर्षों को एक नए परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। जहाँ एक ओर औद्योगिकीकरण ने श्रमिकों के लिए नए अवसर उत्पन्न किए, वहीं इसके साथ

ही शोषण और असमानता की स्थितियाँ भी बढ़ी। वैश्वीकरण ने इन समस्याओं को और जटिल कर दिया और श्रमिकों को अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए संघर्ष करना पड़ा। हिंदी उपन्यासों में इन दोनों प्रक्रियाओं के प्रभावों का बारीकी से विश्लेषण किया गया है, और श्रमिक संघर्ष की बदलती छवि को दिखाया गया है।

सन्दर्भ सूची :-

1. प्रेमचंद, मुंशी. गोदान. दिल्ली : भारतीय साहित्य संस्थान, 1936
2. त्रिपाठी, सूर्यकांत. कर्मभूमि. इलाहाबाद : साहित्य परिषद, 1951
3. शिवानी. शब्दों का विश्वास. दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1992
4. शुक्ल, श्रीलाल. राग दरबारी. दिल्ली : राधा कृष्ण प्रकाशन, 1960
5. गुप्ता, दीपक. अग्निपथ. दिल्ली : राजपाल एंड सन्स, 1999
6. वाजपेयी, अशोक. दीवार. दिल्ली : हिन्द युग्म, 2000

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 132–134

उदय प्रकाश के कथा साहित्य में पारिवारिक संघर्ष

आलडो डोमनिक मेन्डस, पी. एच.डी. शोधार्थी
प्रो. डॉ. संजय ए मादार, शोध निर्देशक
हिन्दी प्रचार सभा, एरणाकुलम, केरल, पीन कोड – 682016

लेखक परिचय :–

उदय प्रकाश हिन्दी साहित्य के जाने माने समकालीन लेखक एवं कवि है। उनके नितांत विशिष्ट प्रयोगों ने अल्पांकन में ही हिन्दी जगत का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट लिया। उदय प्रकाश की जीवन यात्रा अत्यंत संघर्षपूर्ण रहे है। उदय प्रकाश का जन्म 1 जनवरी 1952 को मध्य प्रदेश के राहडोल जिले के सीतापूर नामक गाँव के एक क्षत्रिय वंश में हुआ था। उदय प्रकाश के पिता श्री प्रेमशंकर और श्रीमति गंगा देवी थे। उनके बडे भाई अरुण प्रकाश और दो बहनें शशि प्रभा एवं स्वंय प्रभा।

शिक्षा :–

उदय प्रकाश की प्रारंभिक शिक्षा सीतापूर में हुई। बी.एस.सी की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त सागर विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय से स्नातकोत्तर की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1975 ईं में जवहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में पी.एच.डी प्रारंभ की। फ्रेच और स्पानिश भाषा में एम.ए की। इन्डोनेशियन भाषा में डिप्लोमा किया। पत्नि श्रीमति कुमकुम प्रकाश, दो लडके थे सिद्धार्थ और शान्तनु। आस्थाई नौकरी के सहारे अपना परिवार का भरण पोषण करते रहे। 1978 से 1980 तक जवहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफसर थे। साथ ही पूर्वग्रह के सहायक प्रोफसर थे। 2010 में साहित्य अकादमी पुरस्कार मोहनदास कहानी पर प्रदान किया था।

पारिवारिक संघर्ष :–

"मनुष्य विविध परिस्थितियों का दास होता है वस्तुतः विषम परिस्थितियाँ ही मनुष्य के चरित्र महान बनाती है"।[1] उदय प्रकाश की कहानियों में पारिवारिक चित्रण है। परिवार समाज का छोटा भाग है। अनेक परिवाल मिले तो उसे समाज के नमुना होता है। परिवारों का संस्कृति समाज के संस्कृति बन जाता है। भारत विवध संस्कृतियों का मोल है।

परिवार में माता, पिता, बच्चे, दादी–दादा, नाना–नानी जैसे अनेक तरह के संबंध होते हैं। परिवार एक सामाजिक संस्था है जिसके आधार पर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, भौगोलिक परिस्थितियाँ है।

2. "रुचि वैभिलय को भी कतिपय लेखकों ने संयुक्त परिवार विघटन का प्रमुख आधार माना है। प्रत्येक प्राणी अपनी व्यक्तिगत चेतना का उदय होने पर एक कुटुम्ब में रहने के कारण अपने को प्रतिकूल परिस्थितियों में देखता है।

रुचि वैभिलय से परिवार झगड़ा होता है। इसके अतिरिक्त नारी स्वतंत्रता की चेतना तथा आर्थिक स्वालम्बन ने नारी में विद्रोह की भावना उत्नन्न की है। जिससे एकांकी परिवार चाहने लगी है"।[2]

आधुनिक समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ रहा है। जीवन में सभी मापदंण्ड बदल चुके हैं। अत्याधिक धन, अधिकार, सम्मान आर्जित करने की लालज में अधिकांश लोग अच्छे मूल्य और आदर्श को छोड दिया है।

"परिवार एक सामाजिक संस्था है जिसके आधार विशेष सामाजिक आर्थिक तथा भौगोलिक परिस्थितियाँ है"।[3] हिन्दी में परिवार को अर्थ घर है। संस्कृत में कुटुम्ब कहते तो अंग्रेजी में फामिसी कहते हैं। परिवार शब्द का उद्‌भव लेटिन भाषा से है फैमिलया शब्द है।

परिवार कई प्रकार के है। प्रमुखता में संयुक्त परिवार और साधारण परिवार में बाँटा है। परिवार में साधारण पति घर दूखवाला है। माता रसोईघर, बच्चों को, नाना–नानी, दादी–दादा का देखभाल करते रहते हैं। आधुनिक परिवार में पत्नि पुरुषों को जैसे बाहर काम और घर की अंतर की काम करना पड़ती है।

उदय प्रकाश की कहानियाँ मोहनदास, पीली छतरीवाली लडकी और तिरिछ में कई पारिवारिक संदर्भ है। कथा का स्वरुप समाज, जाति, राजनीति और व्यक्तिगत संघर्षों के गहरे संदर्भों से जुडा हुआ है। मोहनदास नामक कहानी में परिवार संघर्ष से भरा है। उसके परिवार में रोटी–पानी कके लिए उसकी बाट जोठने वाले भी एक नहीं पाँच है। पाँच पेट और पाँच मूँह। मोहनदास का बाप काबादास जिसे पिछले आठ साल से टीबी है।

मोहनदास कहानी में परिवार के गरीबी और रोगग्रस्त परिवार का दर्दभरी हालत व्यक्त की है। परिवार में पढाई करने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। मोहनदास कहानी में छह साल शारदा का हालत व्यक्त करते कहानी में कथन है कि छह साल की शारद गाँव की सरकारी प्राथमिक पाठशाला में दूसरी कक्षा की छात्र है और स्कूल के बाद वह ढाई किलोमिटर दूर, दो तालाबों के पार बसे गाँव बिछिया टोला चल देती है जैस से वह शत नौ–दस बजे तक घर लौटती है।

शिक्षा समाज को उन्नति ले आता है। आज का छात्र कल का नागरिक है। इसलिए कुछ भी परिस्थिति में पढाई करना छात्रों का लक्ष्य होना चाहिए। माता–पिता उसके लिए सहन, सहायक करना बच्चे के प्रति उसका दायित्व है।

परिवार में माता–पिता के साथ रहना अच्छा लगता है। नन्हें बच्चे होने पर माता–पिता उसे देखभाल करते हैं। जब बच्चे बडे होकर पढाई करके नौकरी प्राप्त होता है। जब नौकरी प्राप्त होने के बाद या उस समय माता पिता उसके लिए सहन, सहायक करना बच्चों के प्रति उसका दायित्व है।

परिवार में माता–पिता के रहना अच्छा लगता है। नन्हें बच्चे होने पर माता–पिता उसे देखभाल करते हैं। जब बच्चे बड़े होकर पढाई करके नौकरी प्राप्त होता है। जब नौकरी प्राप्त होने बाद या उस समय माता–पिता का शिक्षण संरक्षण करना हमारा दायित्व है। अरेबा–परेबों नामक कहानी संग्रह के एक कहानी है नेलकटर। इसमें अपना माँ के प्रति प्यार और रोगग्रस्त माँ के लिए सहायता और साथ देना लेखक उदय प्रकाश बचपन से ही सीखा है। बचपन से हुई घटना बडे होने से याद आता है।

"बंबई के टाटा मेमोरियल अस्पताल से उन्हें ले आया गया था। सिर्फ अनारा का रस पीनी थी। वे बोलने के लिए अपने गले से डाक्टरों द्वारा बनाए गए छेद में उगली रख लेती थी, वहाँ एक ट्यूब लगी थी। उसी ट्यूब से वे साँस लेती थी"।[4]

यहाँ लेखक अपने माता को प्रेम और सहानुभूति व्यक्त किया है। माँ ने मेरे बालों को छुआ। वे कुछ बोलना चाहती थी। लेकिन मैंने रोक दिया। वे बोलती तो पूछती कि मैं सिर से क्यों नहीं नहाता? बालों में साबुन क्यों नहीं लगाता? झली धूल क्यों है? और कंधी क्यों नहीं कर रखी है यहाँ माँ बेटा का प्यार दिखाई देता है। लेखक बचपन में मिली प्यार और नेलकटर से सुन्दर और चिकनी नाखून बनाना कोशिश और पुराने यादों इस नेलकटर कहानी में पाठकों को आकर्षक रुप में दिखाया है। माँ के मृत्यु के उपरान्त उस नेलकटर यादें उसे और देखी बनाते हैं।

"अपराध नामक कहानी में उदय प्रकाश अपने बड़े भाई के साथ गुजरे दिनों की कहानी व्यक्त की है। बडे भाई और लेखक के बीच छह साल कभी है। बडे भाई अपाहिज थे। उनके नाक पैर पौलियो हो गया था"।[5]

रोग ग्रस्त परिवार का चित्र उपरोध द्वारा अपनी आत्मकथा जैसे पाठकों को विवरण दिया है। मैंगोलियन कहानी में शोभा का बेटा सूर्य की मैंगासिल रोग से अधिक कठिनाइयों से पीडित थे। यहाँ परिवार की कठिनाइयों के साथ नारी शोषण अतिभीषण रुप से व्यक्त है।

पीली छतरीवाली लडकी नामक कहानी में कॉलज की छात्र अंजली और राहुल के बीच प्यार छात्र होने से प्यार से रहते हैं।

निष्कर्ष :-

उदय प्रकाश के कथा साहित्य में विविध पारिवारिक संघर्ष देख सकते हैं। परिवार में बच्चे माता–पिता, भाई, दादी सब उदय प्रकाश कहानियाँ का पात्र है। कहानी के घटनाएँ विचित्र और फान्टसी भी है। आम जीवन का चित्रण व्यक्त की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नव उपनिवेशवाद और उदय प्रकाश का साहित्य – डॉ धर्मेन्द्र प्रताप सिंह – पृ. सं. 56
2. उदय प्रकाश की कहानियों में समकालीन समाज और समस्याएँ – पी.जी. शिवकुमार – पृ. सं. 20
3. उदय प्रकाश की कहानियों में समकालीन समाज और समस्याएँ – पी.जी. शिवकुमार – पृ. सं. 21
4. मोहनदास – उदय प्रकाश – पृ. सं. 11
5. अरेबा – परेबो – उदय प्रकाश – पृ. सं. 6

9605133828,

domanic2008@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 135–139

संख्या और अद्वैत वेदान्त में वर्णित मोक्ष

डॉ. वर्षा रानी
असि. प्रोफेसर संस्कृत–विभाग, डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय आगरा।

दर्शन शास्त्र एवं आध्यात्मिक चिंतन भारतीय मनीषियों के ज्ञान का कभी ना रिक्त होने वाला भंडार है। आस्तिक दर्शनों में सांख्य दर्शन एवं अद्वैत वेदान्त का महत्वपूर्ण स्थान है। कपिल मुनि के द्वारा लिखित संख्य सूत्र पर आधारित ईश्वर कृष्णा द्वारा संख्यकारिका सांख्य दर्शन का अद्यावधि उपलब्ध प्रमाणिक ग्रन्थ है। जिस पर आचार्य गौड पाद ने अपना भाष्य लिखा है तो वहीं दूसरा ओर अद्वैतवेदान्त की परम्परा अपनिषद् काल से मानी जाती है। आचार्य शंकर ने अद्वैतवेदान्त को प्रतिपादित किया तथा आचार्य सदानन्द रचित वेदान्तसार अद्वैत परम्परा का प्रकरण ग्रन्थ है। सभी भारतीय दर्शन (चावाक को छोड़कर) यह स्वीकार करते हैं कि यह संसार दुःखमय है। समस्त प्राणी अनेकानेक कष्टों तथा पीडाओं से संतप्त है। लेकिन मनुष्य सदा के लिये इनसे मुक्त हो सकता है। इसी विचार से सभी दर्शनों में मोक्ष की अवधारणा का प्रतिपादन होता है, और फिर सभी दर्शन अपने–अपने तरह से आचार मीमांसा की ओर प्रवृत्त दिखते हैं। यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल है कि कभी–कभी भारतीय दर्शन को 'मोक्ष शास्त्र' कहा जाता है। जैसा कि डॉ० राधाकृष्णन ने कहा कि– 'सभी दार्शनिक सम्प्रदाय अपने ढंग का विशिष्ट मोक्ष शास्त्र है जो जगत अथवा देश काल के बन्धनों से मुक्त होने का मार्ग प्रशस्त करते हैं।'[1]

मोक्ष का नाम सांख्य दर्शन में कैवल्य है अर्थात् परम् स्वातन्त्र्य। जो दुःखो की आत्यन्तिक निवृति मात्र है। (आन्यतिको दुःखत्रयाभावः कैवल्यम्) यह अवस्था केवल निषेधात्मक नहीं है, बल्कि पुरुष का वह नित्य जीवन है, स्वाभाविक स्वरूप है, जो प्रकृति के बन्धनों से मुक्त होकर प्राप्त होता है। जिसमें दुःखों का सदा के लिये निवारण हो जाता है। मोक्ष नाम दुःख से छुटकारे का है, सब प्रकार के जीवन में छुटकारे का नहीं। इसकी व्याख्या करते हुये कहा गया है कि यह गुणों का पूर्वावस्था को प्राप्त हो जाना है, क्योंकि उस समय आत्मा का कोई प्रयोजन नहीं रहता अथवा बुद्धि की शक्ति अपने आप में स्थित होती है– 'पुरुषार्थ शून्यानां गुणानां प्रतिप्रसन्नः कैवल्य स्वरूप प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।'[2]

इस अवस्था में पुरूष यह जान लेता है कि मैं अचेतन विषय जड़ प्रकृति, अन्तःकरण आदि नहीं हूँ (नास्मि), मेरा कुछ नहीं है (न में) और मैं अहंकारी नहीं हूँ (नाहम्)। जब यह ज्ञान तत्वाभ्यास से सुदृढ़ हो जाता है, तब यह केवल या विशुद्ध ज्ञान है और यही कैवल्य की अवस्था है।[3] मोक्ष प्राप्त होने पर भेदज्ञान, कारक ज्ञान स्वयं विलुप्त हो जाता है। क्योंकि यह एक ऐसी औषधि के समान है जो रोग के साथ–साथ अपने को भी बाहर निकाल देती है, इस अवस्था में पुरुष दृष्टा रहता हैं, यद्यपि उन्हें देखने के लिये कुछ भी शेष नहीं रहता। वे ऐसे दर्पण के समान रह जाता हैं, जिनके अन्दर कुछ भी प्रतिबिम्बित होने को नहीं है। वह प्रकृति तथा उसके

दूषणों से पृथक विशुद्ध प्रज्ञा के रूप में विद्यमान रहता हैं। मोक्ष की प्राप्ति पर 'पुरुष अविचलित और आत्मसंयमी रूप में एक दर्शक की भाँति उस प्रकृति के विषय में चिन्तन करता है, जिसने अपना कार्य बन्द कर दिया है।'[4] सांख्य के मुक्ति सम्बन्धी आदर्श को बौद्धों के शून्यतः परक आदर्श अथवा आत्मा के लोप[5] को अथवा अद्वैत सिद्धान्त के ब्रह्म में विलीन हाने[6] अथवा योग दर्शन की अलौकिक सिद्धियों के साथ[7] नहीं मिला देना है।

उल्लेखनीय है कि कैवल्य दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति मात्र है। इसमें सुख या आनन्द का तत्व नहीं होता, क्योंकि पुरुष सर्वगुणातीत है।[8] यह सुख–दुःख रहित अवस्था होने के साथ एक ज्ञान शून्य अवस्था भी है। क्यों कि इस अवस्था मे ज्ञान के साधनों, बुद्धि आदि से उसका संयोग नहीं होता, इन बातों में सांख्य का कैवल्य न्याय–वैशैषिक के अपवर्ग की याद दिलाता है। किन्तु वह कैवल्य में चैतन्य का तत्व स्वीकार करने के कारण न्याय–वैशेषिक से उत्कृष्ट कहा जा सकता है। कैवल्य में आनन्द का तत्व अस्वीकार करने के कारण सांख्य का कैवल्य अद्वैत वेदान्त के मोक्ष से भिन्न है।

सांख्य दर्शन में कैवल्य के दो रूप मिलते हैं– जीवन्मुक्ति और विदेह मुक्ति। जीवन काल में ही दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति–जीवन मुक्ति है। सांख्य दर्शन के अनुसार विवेक ज्ञान होते ही पुरुष प्रकृति से मुक्त हो जाता है। तथापि प्रारब्ध कर्मों के भोग पर्यन्त उसका शरीर बना रहता है, किन्तु शरीर के व्यापार उसे प्रभावित नहीं करते। इस अवस्था में पुरुष का बुद्धि से भी सम्बन्ध बना रहता है, लेकिन बुद्धि के सारे दोष समाप्त हो जाते हैं। वह संसार में रहते हुए भी संसारी नहीं होता। वह सांसारिक जीवन में भाग लेते हुये भी उससे विरक्त होता है। जैसे–कुम्भकार का चाक, उसके हाथ उठा लेने पर भी पूर्व वेग के संस्कार के कारण थोड़ी देर घूमता रहता है और वेग समाप्त हो जाने पर बन्द हो जाता है। वैसे ही पुरुष का शरीर प्रारब्ध कर्मों के कारण चलता रहता है। यह विदेह मुक्ति की अवस्था है। जीवन्मुक्त का जीवन आदर्श जीवन है। जो जनसामान्य को मोक्ष के स्वरूप और उसकी प्राप्ति के उपायों के विषय में उपदेश करते हैं।[9] प्रारब्ध कर्मों का भोग समाप्त हो जाने के बाद जीवन्मुक्त का शरीर भी समाप्त हो जाता है। वह प्रकृति और उसके विकारों के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हो जाता है, इसे विदेह कैवल्य कहते हैं।[10] यह लक्ष्य इस जीवन में नहीं प्राप्त होता। इस अवस्था में पुरुष का स्थूल एवं सूक्ष्म सभी शरीरों से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है और पूर्ण कैवल्य प्राप्त हो जाता है।

अद्वैत वेदान्त के अनुसार मोक्ष :-

यह संसार दुःखमय है और इसमें रहने वाले प्राणी अनेक कष्टों तथा पीड़ाओं से सन्तप्त हैं। इन कष्टों और पीड़ाओं से छुटकारा पाकर मनुष्य सदा के लिये इनसे मुक्त हो सकता है। यह विचार सभी दर्शनों मे देखने को मिलता है सभी दर्शनों का अन्तिम उद्देश्य उस अनन्त आनन्द की खोज करना रहा है। वेदान्त दर्शन के मोक्ष–विचार में इसी का सूक्ष्म विवेचन किया गया है. उसमें बताया गया है कि ब्रह्म अद्वितीय है, अर्थात् वह सजातीय–विजातीय भेद से रहित है। यह दृश्यमान सम्पूर्ण प्रपन्च माया का विलास है। अतः मिथ्या है। इस माया–विलास में लिप्त रहना ही जीव का बन्धन कहा गया है। इस माया के कारण असत्य सांसारिक पदार्थ सत्य की तरह प्रतिभासित हो रहे हैं। जब उस अद्वितीय ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है। तब माया का आवरण भिन्न होकर जीव का जीवभाव दूर हो जाता है। इसी को बन्धन नाश कहा गया है। जीवनाव दूर होने के बाद ही वह ब्रह्मभाव में लीन हो जाता है। उसी अवस्था को मोक्ष कहते हैं।

मोक्ष आत्मरूप है। अतः परोक्ष ज्ञान से इसकी प्राप्ति असम्भव है। अपरोक्षानुभव से ही ब्रह्मात्मैकत्वबोध

सम्भव है। ब्रह्म और आत्मा की एकता का ज्ञान अपरोक्षानुभूति से ही हो सकता है।[11] अपरोक्षानुभूति के द्वारा आत्मा या ब्रह्म पर आरोपित कर्तृत्व, भोक्तृत्व, ज्ञातृत्व आदि धर्मों की व्यावृत्ति मोक्ष है। वस्तुतः आत्मा में बन्धन एवं मोक्ष का भाव उसी प्रकार कल्पित है, जिस प्रकार रज्जु में सर्प की आन्ति होना एवं भ्रान्ति का निवारण होना। बन्धन एवं मोक्ष बुद्धि के धर्म है।[12] जो अज्ञान के कारण आत्मा पर आरोपित किया जाता है। जिस प्रकार मेघ के आवरण के द्वारा हमारी दृष्टि सूर्य को ढका हुआ देखती है. उसी प्रकार हम बुद्धि के धर्मों का असंग, अद्वय, एक अविनाशी सच्चिदानन्द आत्मा पर आरोपित करते हैं। बुद्धि के आरोप से या अज्ञान के कारण आत्मा (ब्रह्म) में कोई विकार या संसारीपन नहीं आता। ज्ञानोपरान्त कूटरथ, नित्य सच्चिदानन्द आत्मरूप ही शेष रहता है। इस प्रकार बन्धन एवं मोक्ष का मिथ्यात्व सिद्ध हो जाता है। आचार्य शंकर के अनुसार दुःख का कारण केवल मिथ्या ज्ञान की भ्रांति हैं[13] और भ्रांति से मुक्ति पा जाने पर दुःख से भी मुक्ति मिल जाती है। इस प्रकार मोक्ष संसार का विलय नहीं वरन् केवल एक मिथ्या दृष्टिकोण का मिट जाना है। आचार्य शंकर 'दशमस्त्वमसि' की उपमा द्वारा इसी तत्व को रेखांकित करते हैं।

आचार्य शंकर के अनुसार मोक्ष मृतकों के लिये आरक्षित नहीं है। इसे इसी जीवन में प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि शरीरत्व मिथ्या ज्ञान निमित्त है। इसके निराकरण के बाद सशरीरत्व नहीं रहता। इसलिये जीवन–काल में भी अशरीरत्व सिद्ध है। यह स्थिति जीवन्मुक्त नाम से अभिहित है।[14] जीवन्मुक्त व्यक्ति संसार में रहते हुये भी उससे निर्लिप्त रहता है और सारे क्रियाकलापों को करते हुए भी उनसे दूर रहता है, वह न तो स्वार्थ से प्रेरित होकर कोई कर्म करता, नहीं कर्तव्य भावना से। उसके जीवन में आवेग एवं इच्छा का कोई स्थान नहीं होता। फलतः उसके कर्म अनायास होते रहते हैं। इस अवस्था में वैयक्तिक चेतना लुप्त होती है, किन्तु समस्त चैतन्य नहीं। आत्मा का विशुद्ध सारतत्व विद्यमान रहता है।[15] इसी प्रकार उनका मत है कि मोक्ष में केवल प्रतिबन्ध उत्पन्न करने वाले सहायक नष्ट हो जाते हैं, किन्तु स्वयं आत्मा नष्ट नहीं होती।[16]

अद्वैत वेदान्त के अनुसार मोक्ष प्राप्ति का साधन :–

भारतीय दर्शन ने मोक्ष के तीन मार्ग चिन्हित किये गये है–कर्म, भक्ति और ज्ञान। आचार्य शंकर ज्ञानमार्गी विचारधारा का प्रतिपादन करते हैं।[17] उनके अनुसार मोक्ष को कर्मफल मानने पर उसके अनित्यत्व की बात आयेगी, क्योंकि कर्म का फल उत्पाद्य, विकार्य, प्राप्य एवं संस्कार्य होता है, जबकि मोक्ष न तो उत्पाद्य है न प्राप्य है, न विकार्य है एवं न संस्कार्य।[18] चूँकि आत्मज्ञान मानव कर्म से सर्वथा स्वतन्त्र है। अतः यह जानने या उपासना की क्रिया से उत्पन्न नहीं हो सकता। दूसरी बात यह है कि भक्ति का आधार द्वैत बुद्धि है जो कि अविद्या जन्य है। अतः अविद्या जन्य भक्ति मोक्ष का साधन कैसे हो सकती है, जैसा कि शंकराचार्य कहते हैं।

'ब्रह्म विद्याया एवं फलाया कम्मैक देशवर्जितः।
कृत्स्न कर्मकाण्ड तादर्थ्येन विनियुज्यते'।।

यद्यपि ये मार्ग अनुपयोगी नहीं है अपितु पर्याप्त नहीं, क्योंकि कर्म से चित्त शुद्धि होती है और भक्ति से एकाग्रता। इस प्रकार कर्म और भक्ति ब्रह्म ज्ञान के दो द्वार हेतु है जो ज्ञान मार्ग की बाधाओं को दूर करता है।[19] ज्ञान की प्राप्ति से या अविद्या के लोप से आत्मा स्वतः प्रकाशित होती है. जैसे प्रभावी मलिनताओं के छूट जाने पर स्वर्ण में चमक आ जाती है या दिन के छिप जाने पर मेघ रहित रात में तारे टिमटिमाने लगते हैं।[20] उल्लेखनीय है कि ज्ञान से मोक्ष प्राप्ति की बात करना भी 'उपचार मात्र' है, क्योंकि यह मोक्ष को उत्पन्न नहीं

करता केवल अविद्या निकृत करता है। अब प्रश्न है कि मोक्ष परक ज्ञान कैसे मिलता है– शांकर–वेदान्त में स्वरूप की प्राप्ति हेतु 'साधन चतुष्टय' की उपयोगिता बताया गया है। साधन का अर्थ है जो अज्ञान को दूर करने के लिये उपयोगी हो, चतुष्टय का अर्थ चार है। वे चार साधन निम्नलिखित हैं :–

1. **नित्यानित्य-वस्तु-विवेक :-** अर्थात् साधक को पहले नित्य एवं अनित्य, शाश्वत एवं नश्वर पदार्थों की समीक्षा करनी चाहिये।
2. **इहामुत्रार्थ-भोग-विराग :-** जिसके अनुसार साधक को लौकिक एवं पारलौकिक सभी भोगों की कामना का परित्याग कर देना चाहिये।
3. **शमदमादि-साधन-संपत् :-** साधक को शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति और तितिक्षा, इन छः साधनों से युक्त होना चाहिये। 'शम' का अर्थ मन का संयम है। 'दम' का अर्थ इन्द्रियों पर नियन्त्रण। शास्त्रादि शिक्षाओं पर निष्ठा रखना 'श्रद्धा' है। चित् को ज्ञान के लिये लगाना 'समाधान' है। विक्षेपकारी या अविद्योत्पादक कार्यों से विरत होने के साधन को 'उपरति' कहते हैं। शीतोष्ण आदि सहन करने के अभ्यास को 'तितिक्षा' कहते हैं।
4. **मुमुक्षुत्वं :-** साधक को मोक्ष प्राप्ति के लिये दृढ संकल्प युक्त होना चाहिये।

इन चार साधनों से युक्त जीव को साधक कहा जाता है तथा वही वेदान्त का अधिकारी भी है।[21] इन साधनों के द्वारा साधक को वासनाओं पर विजय प्राप्त कर लेने के बाद वेदान्त में तीन बातें आवश्यक बतायी गयी है।

क. श्रवण :- गुरू उपदेश को श्रद्धा एवं विश्वास के साथ ग्रहण करना श्रवण है।

ख. मनन :- गुरू उपदेश को यथावत् ग्रहण कर लेना पर्याप्त नहीं बल्कि उस पर युक्ति पूर्वक विचार करना चाहिये। इसे वेदान्त में मनन कहा गया है।

ग. निदिध्यासन :- मनन के बाद प्राप्त सत्यों का निरन्तर ध्यान करते रहना निदिध्यासन है। साधन चतुष्टय–श्रवण, मनन, निदिध्यासन आदि क्रियाओं के उपरान्त साधक को आत्मा की श्रेयता अनुभव होती हैं।[22] आत्मा प्राप्तव्य है, सह जीवन का लक्ष्य है। तदनन्तर 'तत्वमसि'[23] पर चित् को एकाग्र करके उसे (साधक को) 'अहं ब्रह्मास्मि'[24] की अनुभूति होती है। जीव का मिथ्याज्ञान दूर हो जाता है। भेद दृष्टि व्यावृत हो जाती है। पुनः प्रारब्ध आदि के निवृत्ति के बाद साधक के शरीरादि से सम्बन्ध अवक्षेप होने पर 'अहं ब्रह्मास्मि' से अहंभाव समाप्त होकर 'सर्वखल्विदं ब्रह्मम्'[25] की अनुभूति होती है। यह अनुभूति सच्चिदानन्द स्वरूप की अनुभूति है, इसे मोक्ष कहते हैं। अब प्रश्न उठता है कि इस प्रक्रिया को बार–बार करना चाहिये या एक बार? वेदान्त की दृष्टि है जिस प्रकार धान को तब तक पीटा जाता है जब तक तंडुल न निकल आये। उसी प्रकार इस क्रिया को भी आत्म ज्ञान की प्राप्ति तक करनी चाहिये।

यदि आत्मा नित्य मुक्त है तो साधना की क्या जरूरत है?

शंकर ने कहा है 'मोक्षाख्यम् शरीरत्वं नित्यम्' (मोक्ष अर्थात् आत्मा की अशरीरी अवस्था नित्य है।) यहाँ समस्या उठती है कि यदि आत्मा नित्य मुक्त है तो मोक्ष के लिये साधना की क्या जरूरत। यदि साधनों से मोक्ष मिलता है तो फिर आत्मा को सर्वदा, वर्तमान, स्वभावत्ववाद, नित्योपलब्धिस्वरूपत्वात्, स्वमहिम इत्यादि कहना व्यर्थ है। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर वेदान्त में दो तरह की आत्माओं का वर्णन मिलता है। विज्ञानात्मा भोक्ता और कर्ता है। परम आत्मा कूटस्थ नित्यमुक्त है। अविद्या के कारण जीव अपने नित्य आत्मा को भूलकर अपने विज्ञानात्मक रूप को ही सब कुछ मानकर द्वैतभावी हो जाता है। निर्धारित साधनों से जीव इस द्वैत भाव को

पहचान जाता है। अद्वैत अनुभूति का यह कारवा 'तत्वमसि' से चलकर 'अहंब्रह्मास्मि' से होता हुआ 'सर्वखल्विदं ब्रह्म' पर समाप्त होता है। यह अनुभूति सच्चिदानन्द स्वरूप है, यही मोक्ष है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. उपासनार्थम्स्। छा० उप० शां०मा० 8/1/1. ब्र०सू० शां० भा० 1/1/20–24, 3/2/12, 33, 1/2/11, 14।
2. योग सूत्र–4/34।
3. सां० का०–64।
4. सां० का०–65।
5. सांख्य प्रवचन सूत्र–5/77–79।
6 सांख्य प्रवचन सूत्र–5/81।
7. सांख्य प्रवचन सूत्र–5/82।
8. सांख्य प्रवचन सूत्र–5/74।
9. सांख्य प्रवचन सूत्र–3/79।
10. छान्दोग्य उप०–8/12/11।
11. बिना परोक्षानुभव ब्रह्मशब्देन मुच्यते।
12. बन्धन च मोक्ष च मूषैव मूढ़ा बुद्धैर्गुण वस्तुनि कल्पयन्ति।
13. मिथ्याभिमान भ्रम निमित्त एवं दुःखनुभवः। प्र०सू०शां०भा०–2/3/46।
14. तस्माच मिथ्याज्ञान निमित्वात् सशरीरत्यस्य। सिद्ध जीवतोपि विदुषा शरीरत्यम्– ब्र०सू० शां० भा०–1/1/4 ।
15. शां० भा० ग्र० सू०–1/4/22. वृह० उप०–4/3/301
16. शां० भा० ब्र० सू०–2/1/14।
17. ऋते ज्ञानन्न मुक्ति।
18. शां० भा० ब्र० सू०–1/1/4।
19. वृह० उप०–3/4/21।
20. शां० भा० ब्र० सू०–1/3/19।
21. शां० भा० ब्र० सू०–1/1/1।
22. आत्मा वा रे। दृष्टव्य–वृह०उप०–4/5/8।
23. छां० उप०– 2/5/19।
24. वृह० उप०– 1/4/10।
25. छां० उप०– 3/14/1।

Mail : vasu14rani@gmail.com, Mob 9671904323

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 140–146

भीष्म साहनी का रचना कर्म

डॉ. रवि देव
जी 01 प्रथम तल, प्रीत विहार, दिल्ली–११००६२

भीष्म साहनी मुख्यता प्रगतिशील परंपरा के महान लेखक हैं। उनके समग्र साहित्य में तत्कालीन परिवेश की समग्रता अंकित दिखाई देती है। भारत के नगरों और महानगरों में रहने वाला मध्यमवर्ग उनका कथा केंद्र है।

भारतीय पूंजीवादियों की आकांक्षाओं में पलने वाली उपभोक्ता संस्कृति तथा उसके विरुद्ध भारतीय जनता के श्रम से उत्पन्न होने वाली लोकतांत्रिक जनवाद की संस्कृति का संघर्ष भीष्म साहनी की रचनाओं में अंतर स्रोत की तरह प्रवाह महान है। भीष्म साहनी सामाजिक जीवन के यथार्थ को प्रभावपूर्ण ढंग से उद्घाटित करते हैं। उनका साहित्य सहानुभूति और वास्तविक है। उनके शांत और शालीन व्यक्तित्व के जैसी ही उनकी रचनाएं हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं के बारे में कहा है कि साहित्य के क्षेत्र में मेरे अनुभव वैसे ही सपाट और सीधे–साधे रहे। इस प्रकार भीष्म साहनी का साहित्य जीवन का साहित्य है। उनके संस्कारों का साहित्य है। जो सत्य है, स्वानुभूति परख है, तन–मन से निकलकर तन–मन तक पहुंचकर तादात में स्थापित करने वाला है। उनकी दृष्टि मानवतावादी दृष्टि है। भाव, भाषा, आचार–विचार, अभिव्यक्ति की प्रभाव आदि पर उनका व्यक्तित्व छाया है। इस दृष्टि से भीष्म साहनी एक सफल और महान साहित्यकार दिखाई देते हैं।

झरोखे :– भीष्म साहनी ने एक छोटे से बालक की आंखों से एक परिवार में घटने वाली छोटी–छोटी घटनाओं को देखने और उनका उल्लेख करने का अविस्मरणीय प्रयोग किया है। दरअसल बच्चों के समक्ष घटने वाली प्रत्येक घटना चाहे वह जितनी सैनिक और साधारण हो संस्कारों के रूप में उनका महत्व असाधारण होता है। इस सच्चाई को झरोखे उपन्यास में बहुत अच्छी तरह प्रस्तुत किया गया है।

कड़ियां :– हमारे समाज में तेजी से बदलते हुए सामाजिक नैतिक मूल्यों ने आज विवाह जैसी संस्थाओं के लिए एक खतरा पैदा कर दिया है। पटरी से उखड़े वैवाहिक जीवन को पुनः स्थापित करने के लिए जो भी उपाय किए जाते हैं या जो भी सलाह देता है उससे समस्या उतनी ही उलझती जाती है, क्योंकि उनके समाधान में या तो परंपरागत नैतिकता का दुराग्रह होता है या उन्हें पूरी तरह से नए मूल्यों को आत्मसात करने की क्षमता का अभाव होता है लेकिन नए मूल्यों से उत्पन्न समस्या का समाधान इन दोनों ही स्थितियों से संभव नहीं है। इसी समस्या को कड़ियां उपन्यास में कथावस्तु का विषय बनाया है। भीष्म के कड़ियां उपन्यास का नायक महेंद्र विवाह के पश्चात भी पर स्त्री से यौन संबंध रखता है। जिसके कारण पीटीआई–पत्नी में निरंतर संघर्ष होता है।

तमस :– भीष्म साहनी का तमस उपन्यास बहुचर्चित उपन्यासों की श्रंखला में अग्रगण्य हैं। इस उपन्यास में देश विभाजन की समस्याओं को केंद्र में रखा गया है। इस उपन्यास में धर्म, राजनीति और सामाजिक चेतना के यथार्थ चित्र है।

मैयादास की माडी :– मैयादास की माडी एक ऐसे कालखंड की कहानी कहता है। जब ब्रिटिश साम्राज्य अपने पाँव फैला रही थी।

कहानी भी बहते काल प्रवाह और बदलते परिवेश की दृष्टि से एक समूचे युग को समेटे हुए हैं और उनकी रचनात्मकता को एक नई ऊंचाई सकती है। आधुनिक उपन्यास भीष्म साहनी जी की परिपक्वता का परिचय देता है। इसके चरित्र कल्पना की उपज हैं और वास्तविकता का आभास देते हैं।

कुंतो :– कुंतो नामक एक स्त्री को केंद्र में रखकर लिखा गया। भीष्म जी का यह सीधा साधा सामाजिक उपन्यास है। यह ऐसे कालखंड की कहानी कहता है जब लगने लगता है कि हम इतिहास के किसी निर्णायक मोड़ पर खड़े हैं। जब करवटें लेती जिंदगी एक दिशा विदेश की विशेष की ओर बढ़ती जान पड़ने लगती है। आपसी रिश्ते सामाजिक सरोकार घटना प्रवाह के उतार–चढाव आदि उसी काल खंड के जीवन का चित्र प्रस्तुत करते हैं। इस उपन्यास के प्रारम्भ में पारिवारिक माहौल का वर्णन किया गया है।

नीलू नीलिमा नीलोफर :– भीष्म साहनी का ऐसा उपन्यास है जो तीन नायिकाओं को केंद्र में रखकर लिखा गया है। परंतु घर में नीलू रहती है। नीलिमा और निलोफर इन दो सहेलियों के जीवन पर इस कथा का ताना–बाना बुना गया है। इस उपन्यास में विभाजन के 50 वर्ष बाद अर्से से साथ–साथ रह रहे, हिंदू–मुस्लिम संप्रदाय के लोगों में विकसित मानवीय संबंधों की वस्तुस्थिति की पहचान करना चाहते हैं। मुस्लिम युवती नीलोफर हिंदू युवक सुधीर से प्रेम करती है और हिंदू युवती नीलिमा की मित्रता अल्ताफ नामक मुसलमान युवक से होती है। एक अपने प्यार को पाकर और दूसरी न पाकर दुखी है। विवाह संस्था को सुरक्षित रखने की कामना यहां स्पष्ट दिखाई देती है।

भाग्यरेखा :– भीष्म जी का पहला कहानी संग्रह है। इसमें कुल 14 कहानियां है। इन कहानियों में कृषक वर्ग से जुडी, उच्च वर्ग से संबंधी विषय हैं, जिसमें अत्यंत स्वाभाविकता है। इसमें अनोखी हड्डी सबसे श्रेष्ठ कहानी है। 'पहला पाठ' इस दूसरे कहानी संग्रह में कुल 15 कहानियां हैं। इन कहानियों में धार्मिक, आर्थिक, सामजिक समस्याएं हैं। इसमें रानी महतो राजा रानी के समान कथा है। प्रस्तुत कहानी संग्रह की प्रथम कहानी चीफ की दावत भीष्म जी की सबसे प्रसिद्ध कहानी है। जिसमें मां की ममता और बेटे की स्वार्थपरता का यथार्थ चित्रण है। भाई बंद कहानी मानवता का एक अलग रूप दिखाती है।

भटकती राख :– इस कहानी संकलन में 20 कहानियां हैं। ये कहानियां अलग अलग समस्याओं और पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं। किसी दंतकथा जैसी लगने वाली पहली कहानी भटकती राख ऐसे राजा का वर्णन करती है। जिसकी राख में सुख चैन चमकाने लगती है। माता विमाता कहानी के अंदर मां के विविध रूपों का चित्रण है। वीवर कहानी पाश्चात्य प्रभाव के अंधानुकरण के रूप में चित्रित हुई है। सिफारिशी चिट्ठी में एक मध्यमवर्गीय इंसान की डरपोक पूर्ति को चित्रित किया गया है। साये कहानी में पारिवारिक लड़ाई झगड़ों से बच्चों पर कैसा विपरीत प्रभाव पड़ता है, उसकी कहानी है।

पटरियां :– इस कहानी संग्रह में 14 कहानियां हैं। जिनमें समाजगत कोई ना कोई समस्या चित्रित हुई

है। इस कहानी संग्रह की सबसे चर्चित कहानी है। अमृतसर आ गया है प्रथम कहानी पटरियां में एक कमीशन एजेंट की दुखी जिंदगी का चित्रण है। अमृतसर आ गया है में 'गली का कुत्ता भी शेर बनता है' इस प्रवृत्ति का चित्रण है। ललक कहानी आर्थिक विषमता का चित्रण करती है। तस्वीर कहानी में ससुर का अन्याय सहने वाली पुत्रवधू के विरोधी रूप का निरूपण है। जख्म बुजुर्गों की उपेक्षा पर लिखी कहानी है। जिसमें एक दुखी बुड्ढे आदमी की व्यवस्था है। अभी तो मैं जवान हूं में वेश्या जीवन की समस्या है।

वांगचू :– भीष्म साहनी किस कहानी संग्रह में व्यापक सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गयी कहानियाँ हैं। इन कहानियों में उद्देश्य के साथ अंतरंगता, रसमयता भी है। इस संग्रह की प्रथम कहानी 'ओ हरामजादे' में विदेश में रहने वाले एक भारतीय की की भारत के प्रति भावनाओं का चित्रण है। 'पिकनिक' में एक सामान्य नारी की आर्थिक दुर्दशा का चित्रण है। 'मालिक का बंदा' एक स्वार्थी हवलदार की कहानी है। 'खंडहर' कहानी अतीत के मुंह का चित्रण करती है। 'वांगचू' कहानी चीन से आए हुए एक ऐसे यात्री का वर्णन करती है, जो एक खोजी है, किंतु भारतीय पुलिस और चीनी पुलिस की निगाह में गुप्तचर होने की शंका से दोनों को परेशान करता है।

'अहम् ब्रह्मास्मि' कहानी में एक ऐसी युवा लड़की की कहानी है, जिसमें एक धोबी बाप अपनी युवा लड़की की शादी नहीं करता और बाद में एक बुड्ढे से पैसे लेकर उसे दे देता है। 'त्रास' कहानी अमीरों की एहसान जताने की प्रवृत्ति का पर्दाफाश करने वाली कहानी है। 'खूटे' कहानी में एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण है, जिसकी उम्र अब रिटायर होने की है। मैं अपनी नौकरी से भी तंग आ चुका है किंतु जब मैं देखता है कि उसे दो साल और बढ़कर मिल सकते हैं। नौकरी के कोटे से बने रहने के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जाता है।

शोभा यात्रा :– इस कहानी संग्रह में 10 कहानियां है। जिसमें सामाजिक यथार्थ का चित्रण जुनूनमुखी, उदार दृष्टि एवं सादगीपूर्ण भाषा शैली आदि नजर आते हैं। प्रथम कहानी निमित्त में भाग्य पर भरोसा करने वाले एक बूढ़े की कहानी है। खिलौने कहानी नौकरी पेशा लोगों की समस्या और शहरी जीवन की व्यस्तता का चित्रण करती हुई कहानी है। भटगांव में तीनों प्रौढ़ावस्था की बहने इकट्ठा होकर अपनी युवावस्था के प्रेमियों की चर्चा करते हैं। फैसला कहानी में ईमानदारी का फल क्या यह दर्शाते हुए लेखक भ्रष्टाचार का नंगा रूप हमारे सामने रखते हैं। शोभायात्रा सत्ता के अहिंसा परमो धर्म की वास्तविकता को यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

निशाचर :– निशाचर भीष्म साहनी का अलग कहानी संग्रह है। जिसमें कुल 14 कहानियां हैं। इंसानी रिश्तों के भीतर छिपी भावुकता, संवेदनशीलता, मनुष्य की सपने देखने की वृति, साम्प्रदायिकता जैसे अलग–अलग विषयों को ये कहानियां साहनी जे के कल्पना कौशल को प्रस्तुत करती हैं। इस संग्रह की पहली कहानी 'चाचा मंगलसेन' बुजुर्गों की उपेक्षा की समस्या को लेकर लिखी गयी है। 'कंठहार' ऐसी मान की कहानी है जो अपनी जन्मजात अपाहिज बेटी से तंग आ चुकी है। 'सलमा आया' कहानी मानवता का एक नमूना पेश करती है। 'निशाचर' कहानी रात के वक्त कागज बटोरने वाली औरतों की कहानी है। 'दिवास्वप्न' में लेखक और उसके सपने की कहानी है। पोखर कहानी में रेल के सफर में आने वाली परेशानियों का चित्रण है। 'सरदारनी' में एक साहसी औरत का चित्र है, जो दंगों के बीच अकेली एक मुसलमान को उसके मोहल्ले तक छोड़ने जाती है। 'अतीत के स्वर' कहानी में जल प्रपात के टूटने का वर्णन है। 'दहलीज' कहानी एक ऐसे आदमी की कहानी है, जो मौत से डरता है इसलिए मैं शादी नहीं करता।

पाली :- अपने समय और समाज से अटूट संबंध रखने वाले भीष्म साहनी के कथा साहित्य में अतीत बार–बार आता है। जो हमें 'पाली नामक कहानी में देखने को मिलता है। इस संग्रह में कुल 11 कहानियां हैं। 'पाली' इस संग्रह की सबसे पहली कहानी है। जिसमें देश विभाजन के समय खोये हुए भारतीय बच्चे को मुसलमान बनाए जाने और फिर वापस मिलने के बाद पुनः हिन्दू बनाये जाने की कथा है।

अंतिम कहानी 'चोरी' एक कंडक्टर की अपने कॉलेज के प्रोफेसर के प्रति होने वाली श्रद्धा के कारण किताब वापस करने की कहानी है।

प्रतिनिधि कहानियां :- भीष्म साहनी के इस कहानी संग्रह में कुल 13 कहानियां हैं। 'गंगो का जाया', 'चीफ की दावत', खून का रिश्ता', 'माता विमाता', 'यादें', 'कुछ और साल', 'अमृतसर आ गया है', 'ओ हरामजादे', 'साग मीट', वांगचू', 'लीला नंदलाल की', 'चाचा मंगलसेन'। ये सारी कहानियां इससे पहले अन्य कहानियां संग्रह में संकलित हो चुकी है, इसलिए यहां इन पर पुनर्विचार करना व्यर्थ है।

मेरी प्रिय कहानियां :- भीष्म साहनी साहनी द्वारा संपादित इस कहानी संग्रह में कुल 10 कहानियां संकलित है। जो स्वयं भीष्म साहनी की अपनी प्रिय कहानियां है और इससे पूर्व अन्य कहानी संग्रह में प्रकाशित हो चुकी हैं। कहानी संग्रह के 'दो शब्द' के अंतर्गत यह कहानियां उन्हें क्यों प्रिय हैं? उनके बारे में बताया है। इस कहानी संग्रह में जो कहानियां संकलित है। पहले अन्य कहानी संग्रह में संकलित होने के कारण उनका भी यहां पुनः वर्णन नहीं किया जा रहा है।

चर्चित कहानियां :- भीष्म साहनी द्वारा संपादित कहानी संग्रह है। इस संग्रह में कुल 16 कहानियां हैं। प्रारंभ में लेखक ने मेरी बात के अंतर्गत इन कहानियों के बारे में लिखा है। यह कहानियां है– 'तस्वीर', 'मेड इन इटली', 'धरोहर', 'खिलौने', 'मरने से पहले', 'पिकनिक', 'मकबरा शाह शेरअली', 'इंद्रजाल', 'मालिक का बंदा' 'निमित्त', 'खून का रिश्ता', 'मौकापरस्त', 'शोभायात्रा', 'संभव के बाबू', 'प्रादुर्भाव'। ये कहानियां इससे पूर्व अन्य कहानी संग्रह में संकलित हो चुकी है।

डायन :- भीष्म साहनी का 'डायन' कहानी संग्रह है। जिसमें 11 कहानियां संग्रहित हैं। इन कहानियों में भी यथार्थ चेतना व्यापक अनुभव सही वैचारिक का इतिहास बोध आदि विशेषताएं दिखाई देती हैं। इन कहानियों का प्रमुख विषय सामाजिक समस्याओं का चित्रण करना रहा है। डायन शीर्षक कहानी इस कहानी संग्रह की प्रथम कहानी है। जिसमें अंधश्रद्धा का चित्रण है। दूसरी कहानी भी देश विभाजन की कसक याद दिलाती है। कथा समय कहानी साहित्य का एवं पत्रकारों की समस्याओं का पर्दाफाश करती है। मकबरा शाह शेरअली कहानी जीवंत अतीत को आज से जोड़ने वाली कहानी है। इस प्रकार भीष्म साहनी का रचनाकार अपने व्यक्तित्व के विकास के अनुरूप रचना को अधिक परिपक्व प्रामाणिक और यथार्थ ग्राही बनाकर चलता है। भीष्म साहनी का पहला कहानी संग्रह भाग्य रेखा से लेकर उनके नवीनतम कहानी संग्रह डायन के रचना संसार तक उनके कथा यात्रा के विविध आयामों को तथा निरंतर परिपक्व होते स्वरूप को देखा जा सकता है। निश्चित रूप से भीष्म साहनी एक सफल सार्थक का उद्देश्य कहानी लेखक के रूप में कथा जगत में स्थापित है। जिनकी अपनी अलग पहचान है।

हानुश 1977 कबीरा खड़ा बाजार में 1981 माधुरी 1984 मुहावरे 1993 रंग दे बसंती चोला 1996 फुजियामा 1997 आलमगीर 1999

हानूश :– भीष्म जी का पहला नाटक है। 'हानूश' के साथ कुछ घटनाएं हैं। जोकि साहनी जी के साथ जुड़ी है। 1950 के आसपास चेकोस्लोवाकिया के प्राग की कहानी है। इसमें एक ऐतिहासिक मीनारी घड़ी है, जिसके संबंध में कई दंत कथाएं प्रचलित हैं। उस किम्वदन्ती को भीष्म जी नाटक के ताने–बाने में बुनकर हानूश नाटक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। तीन अंकों वाले इस नाटक में 12 साल तक घड़ी बनाने की कोशिश करने वाले हानुश को जब सफलता मिलती है तो इस घड़ी का राजा के द्वारा उद्घाटन किया जाता है, किंतु उस घड़ी बनाने वाले हानूश की दोनो आंखें फोड़ दी जाती हैं, ताकि वह दोबारा घड़ी ना बना सके किंतु एक बार बिगड़ी घड़ी को अंधा हानुश ठीक करता है। इस पर एक छोटी सी दंतकथा को आधार बनाकर भीष्म जी ने एक रंगमंचीय क्षमता वाला सफल नाटक लिखा है।

कबीरा खड़ा बाजार में :– भीष्म साहनी का यह दूसरा नाटक है, जो एक स्तर पर कबीर के तत्कालीन समाज में उनके निर्भय, सत्यभाषी और अन्याय के खिलाफ लड़ने वाले प्रखर व्यक्तित्व की पुनर्रचना करती है। साथ ही दूसरी और वह हमारे समकालीन समाज उसमें संप्रदाय विरोधी, फासिजा विरोधी और बाह्याचार विरोधी शक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका की ओर इशारा कर देती है। कथावस्तु कबीर का समूचा जीवन है 3 अंकों और साथ दृश्य में विभाजित कथावस्तु वाला नाटक भक्तिकालीन महान निर्गुण भक्त कवि कबीरदास के जीवन पर प्रकाश डालता है। कबीर का शरारती बचपन मस्तमौला पर किसी पर भी बिना डरे कविता करना, निर्भीक प्रति आदि सभी बातों को लेखक ने एक एक प्रश्न के द्वारा प्रकट किया है। ऐतिहासिकता का आभास देकर इस नाटक में आधुनिक युग बोध को उद्घाटित किया गया है।

माधवी :– भीष्म साहनी की नाट्य सृजन प्रक्रिया में तीसरे स्थान पर माधवी नाटक आता है। जिसकी कथावस्तु महाभारत की अंतरकथा पर आधारित है। इस पौराणिक कथा के आधार वाले इस नाटक की कथावस्तु तीन अंकों में विभाजित है। इसकी कथावस्तु का आधार कल्पना युक्त पौराणिक कथा है। इस नाटक पर अपना मत प्रकट करते हुए तरसेम सागर का कथन है कि "भीष्म साहनी जी ने माधवी नाटक द्वारा पुरुष के हाथों नारी के शोषण की मार्मिक अभिव्यक्ति की है।

मुआवजे :– भीष्म साहनी का यह मुआवजे नाटक भारतीय समाज की सामाजिकता पर बंद करने वाला नाटक है। जिसमें कुल मिलाकर बारह दृश्य हैं। साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठने से पहले ही दंगे भड़काने का काम पुलिस कमिश्नर जैसे अधिकारी लोग करते हैं। नेता जनता के नाम पर भड़काते हैं और दंगे होने से पूर्व पूर्व तैयारियाँ कर लेते हैं। अम्बुलेंस, केम्प, मुवावजे की रकम आदि पहले से ही तैयार रखते हैं। मंत्री महोदय अपने भाषण तैयार करवा लेते हैं। जनता का शासन चंद नेताओं के हाथों में चला जाता है।

रंग दे बसंती चोला :– भीष्म साहनी जी का पांचवा नाटक है। जिसमें 3 अंक हैं। इस नाटक की कथावस्तु अन्य नाटकों से बिलकुल अलग है। जलियांवाला बाग हत्याकांड जैसी ऐतिहासिक घटना को आधार बनाकर इस नाटक का सृजन किया गया है। इस नाटक में तत्कालीन स्थिति जलसों पर पाबंदी वैशाखी पर्व का वर्णन मिलता है। नाटक के अंतिम भाग में जनरल डायर की आत्मा उसे कोसती है।

फूजीयामा :– फूजीयामा रूसी लेखक चिंगेज आइतमातोव और कल्ताई मोह्मेजानोव की रूसी नाट्य रचना का अंग्रेजी कल्पना के आधार पर साहनी जी का हिंदी अनुवाद है। मानवीय यथार्थ को चित्रित करने वाले इस नाटक में नौ पात्र हैं।

आलमगीर :- भीष्म साहनी ने अपने अंतिम सातवें नाटक में बादशाह औरंगजेब के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं का उद्‌घाटन किया। इस नाटक की कथावस्तु दस दृष्टि में विभक्त है। लेखक ने इस नाटक में औरंगजेब के जीवन की सभी घटनाओं को प्रस्तुत किया है, जो आज तक पाठकों के सम्मुख इतिहास में देखने को नहीं मिलती। तत्कालीन भाषा का शब्दावली का प्रयोग करके लेखक ने अपनी भाषा में उर्दू फारसी का विशेष उपयोग किया, जिससे नाटक की ऐतिहासिकता बनी रहे। कथा के आरंभ से अंत तक शक के घेरे में फंसा अलमगीर औरंगजेब अपने स्वार्थ के चक्कर एवं षड्यंत्र में फंसा है कि वह अपने सारे रिश्ते–नातेदारों, मित्रों से बिल्कुल अकेला हो गया है, फिर भी अंत तक अपनी जिद्दी स्वभाव को नहीं छोड़ पाता और यही उसकी व्यवस्था सारे नाटक में छाई हुई है।

जीवनीकार के रूप में भीष्म साहनी :-

भीष्म साहनी एक अच्छे जीवनीकार लेखक भी हैं। उन्होंने अंग्रेजी भाषा में एक जीवनी 'बलराज माय ब्रदर' लिखी है। इस जीवनी पुस्तक का बाद में फिर हिंदी भाषा में उन्होंने 'मेरे भाई बलराज' शीर्षक से अनुवाद भी किया है। इस जीवनी में लेखक और अपने बड़े भाई बलराज के साथ जो घटनाएं घटित हुई थी उनका कुछ महत्वपूर्ण निरूपण किया है। इन घटनाओं से खुद भीष्म जी भी बहुत प्रभावित हुए हैं। शायद इन सभी बातों का लेखक ने अपने घरों के उपन्यास में जैसा कहा वैसा चित्रण किया है।

निष्कर्ष :-

जिस परिवार में उनका लालन पालन हुआ जहां उन्होंने अनेक सहिष्णु गुणों को धारण किया। उनके सेवाभावी स्वभाव के कारण वे मध्यमवर्ग के दुख–दर्द से तादात्म्य स्थापित कर, उन्हें निपटाने की कोशिश अपने साहित्य के द्वारा करते हैं। उन्होंने समाज में व्याप्त झूठी धर्मांधता स्वार्थपरता भेदभाव संकीर्ण मनोवृत्तियों का निषेध किया है। मेहनत और लगन के साथ उन्होंने अपने यथार्थवादी साहित्य का निर्माण किया है। उनके पास समझने वाली दृष्टि के साथ ऐतिहासिक दृष्टि भी है। 'तमस' उपन्यास जो सांप्रदायिकता और भारत विभाजन के कारणों को भी स्पष्ट देता है। ऐसे नाजुक विषय पर लेखन करने के लिए साहित्यकार के पास आचार विचारों की तर्कसंगत अभिवृत्ति एवं धैर्य की आवश्यकता है। यही वृत्ति साहनी जी के पास है। वह अपने कथानक को सहजता के साथ कलात्मकता का रूप देते हैं। उनके पास सूक्ष्म निरीक्षण सकती है। एक साधारण सी घटना को वह हमेशा अपनी कुशलता का कराते हैं। उनकी महानता उसमें है कि वे हमेशा दूसरों से कुछ न कुछ सीखने की उम्मीद रखते हैं और उनके सामने स्वयं को छोटा महसूस करते हैं। इसमें ही उनकी महानता स्पष्ट होती है। उनके जो आदर्श हैं हमें जरूर प्रभावित करते हैं। समाज में व्याप्त अन्य जातीयता रूढी परंपरा छुआछूत आदि को उन्होंने तोड़ने की कोशिश की है। उत्पीड़न गरीब असहाय बेसहारा समाज को लेखक ने अपनी सहानुभूति पूर्ण नजरों से देखा है। उनके पास जो मानवीय करुणा है, वह हमें बहुत प्रभावित करती है।

आज समाज में राष्ट्रीय एकता, विभिन्नता में एकता की आवश्यकता है। प्रेम भाव आवश्यक है किंतु इन बातों से ऐसा लगता है कि समाज इनसे अछूता है, क्योंकि धर्म के नाम पर आज समाज में राष्ट्र में ऐसी प्रवृतियां हो रही हैं, जिनसे राष्ट्र का यह समाज का विकास नहीं हो पाता। यही बात भीष्म साहनी ने अपने साहित्य के द्वारा समाज के सामने प्रस्तुत की है। तमस इसका दस्तावेज है। आज भी इन्हीं समस्याओं से ग्रस्त हमारा समाज है, जो अपने अतीत को भूलकर नई दृष्टि को नकारता है। सर्वधर्म, समभाव से वंचित है। साहनी जी की समानता

की दृष्टि जीवन को सुखकारक बनाती है। बच्चों से लेकर बड़ों तक दूसरों को आत्मीयता देना हमारा मानव धर्म है। यही कामना उनके साहित्य में है। उनके साहित्य में पारिवारिता, सामाजिकता, ऐतिहासिकता, आधुनिकता मनोवैज्ञानिकता, भौतिकता, दार्शनिकता अधिक के दर्शन होते हैं। जो उनके व्यक्तित्व के पहलू हैं। जिन संस्कारों में वे पले हुए हैं, बड़े हुए हैं और प्रेरित भी हुए हैं, वे सभी उनके कृतित्व से झलकता है। उनके व्यक्तित्व में ईमानदारी है। वे बहुत सुंदर ढंग से अपनी बात करते हैं।

'तमस' में हरनाम सिंह के पात्र के रूप में खुद ही अभिनय करते हैं। उनकी अंतर्दृष्टि मानव मन का उद्‌घाटन करती है। उनके मन की गहराई आत्मपरकता की खोज करती है। भावुकता, मान मर्यादा, मानसिकता, उन्माद, उत्पीड़न का शोध करती है। वे मानव जीवन और मानव मन की परतें उद्‌घाटित करने वाले संवेदनशील साहित्यकार हैं। युगबोध, आधुनिक बोध, प्राचीन बोध, मध्ययुग बोध, व्यक्ति बोध, धर्म बोध, राष्ट्र बोध, मनोबोध आदि को वे यथार्थता के साथ स्पष्ट करते हैं। जिसमें मनोरंजकता है, व्यंग्यात्मकता है, गाम्भीर्य है, धैर्य भी है। अर्वाचीन एवं प्राचीन युग का मानव अपने देश और धर्म की नीति से प्रभावित है। अपनी संस्कृति के आधार पर उसकी प्रवृतियां पनपती हैं। क्षत्रिय, ब्राह्मण, राजा, आर्य, गरीब, श्रीमंत, हिंदू , मुसलमान, सिख, इसाई, आदि परंपरा वाले पात्रों का चरित्र साहनी जी ने कलात्मक एवं मानवीय ढंग से और यथार्थपूर्ण शैली में किया है। जिसमें उनका स्वानुभव स्पष्ट होता है।

इस प्रकार भीष्म साहनी अपने युगीन समग्र परिवेश को चित्रित करने वाले महान साहित्यकार हैं। उनके व्यक्तित्व में महान मानवता के दर्शन होते हैं। वे समग्रता से यथार्थता की वास्तविक कहानी बताने वाले हस्ताक्षर हैं। यशपाल, प्रेमचंद जैसे साहित्यकारों से प्रभावित उनका अनुभव क्षेत्र बड़ा और समृद्ध है। साहित्य की विविध विधाओं में साहित्य सर्जन करके उन्होंने अपने आप को प्रगतिशील पीढ़ी का प्रतिनिधि बना दिया है। वस्तुतरू वे एक बहुआयामी साहित्यकार के रूप में हमारे सामने उभरकर आते हैं।

संदर्भ :-

1. रंगदर्शन, नेमीचंद जैन, पृष्ठ संख्या 34
2. भीष्म साहनी, अपनी बात, पृष्ठ संख्या 26
3. सारिका, अगस्त 1990, पृष्ठ संख्या 43
4. सारिका, अगस्त 1990, पृष्ठ संख्या 43

८३६८७७४१५०

Ravi92dev@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 147-153

Evaluating the Effectiveness of Social Welfare Programs in Alleviating Poverty

Dr. Prashant Kumar
Asst. Professor (Political Science), Tilak Dhari P.G. College, Jaunpur, Uttar Pradesh

Abstract :

This paper critically examines how India's flagship social welfare programs—such as the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA), Public Distribution System (PDS), Pradhan Mantri Awaas Yojana (PMAY), and National Social Assistance Programme (NSAP)—perform in reducing poverty and improving livelihoods. Drawing on secondary reports (World Bank, NITI Aayog, Ministry of Rural Development), published interviews with district officials and beneficiary focus groups, and recent empirical studies, it assesses program reach, targeting accuracy, benefit adequacy, and implementation challenges. Applying a mixed?methods meta?analysis and neo?Weberian theoretical lens, the research finds that while wage guarantees and subsidized food security have delivered measurable income support, gaps in coverage, leakages, and administrative delays limit overall impact. The paper concludes with recommendations to strengthen beneficiary identification, streamline grievance redressal, enhance decentralized planning, and integrate livelihood?enhancing skill training to maximize poverty reduction.

Keywords : Social Welfare Programs; Poverty Alleviation; MGNREGA; Public Distribution System; Programme Evaluation; India; Targeting Efficiency; Benefit Delivery

Introduction :

India's struggle against poverty has been an enduring narrative since independence, oscillating between rapid economic growth spurts and stubborn pockets of deprivation. By 2019, the World Bank estimated that 10.7 percent of India's population still lived below the international extreme poverty line of $1.90 per day, translating into over 140 million people grappling with daily subsistence (World Bank, 2021). In response, the Government of India has architected an extensive suite of social welfare schemes—ranging from guaranteed wage employment under MGNREGA to subsidized food security through the Public Distribution System (PDS), from rural housing under PMAY to

social pensions via the National Social Assistance Programme (NSAP). Although each of these flagship interventions embodies well-intentioned policy design, the true measure of their success lies in systematic evaluation: Do they demonstrably lift households out of poverty traps, and if so, to what extent? Or do implementation bottlenecks—leakages, delays, capacity gaps—undermine their impact? This paper seeks to answer these questions by synthesizing a broad array of secondary government reports, independent impact evaluations, and published interviews with district-level implementers and beneficiary focus groups. It examines program reach, targeting accuracy, benefit adequacy, and institutional factors shaping outcomes, ultimately offering actionable recommendations to strengthen India's social protection architecture.

Review of Literature :

The academic and policy literature on India's social welfare programs has grown substantially over the past decade. With respect to MGNREGA, Dutta and Banerjee (2018) employed panel-data techniques to show that participation raises daily rural incomes by 15–20 percent in drought-prone districts, while the Comptroller and Auditor General's 2019 performance audit highlighted systemic payment delays averaging 45 days and evidence of attendance inflation in nearly one-third of gram panchayats. On the PDS front, Khera (2017) documented a remarkable reduction in leakages—from around 50 percent pre-digitization to under 18 percent post-Aadhaar–enabled reforms in Andhra Pradesh and Tamil Nadu—yet Kumar et al. (2020) underscore that roughly 20 percent of eligible households remain excluded even after the National Food Security Act (2013). Housing initiatives under PMAY have delivered over 12 million homes since 2015, but Mehta and Sharma (2021) caution that subsidy-only support without complementary livelihood linkages leads to underutilized or substandard dwellings. Social pensions through NSAP reach approximately 62 million elderly and vulnerable households, yet pension amounts of ?200–?500 per month lag far below subsistence needs (Rao, 2019). A meta-analysis by NITI Aayog (2020) draws attention to targeting errors—both inclusion and exclusion—which average 18 percent across programs. Collectively, these studies reveal that while flagship schemes have achieved wide coverage, heterogeneity in performance across states and persistent implementation gaps warrant deeper inquiry into administrative, institutional, and policy drivers of effectiveness.

Theoretical Framework :

This evaluation is grounded in a neo-Weberian conception of public bureaucracy, which views social welfare delivery as a function of formal rules, hierarchical structures, and professional norms (Pollitt & Bouckaert, 2011). From this perspective, program outcomes hinge not only on design but on the capacity and integrity of implementing agencies. Complementing this is social protection

theory, especially concepts of poverty traps and transformative social protection (Devereux & Sabates-Wheeler, 2004), which emphasize that mere transfers—whether in cash or kind—must be linked to enabling measures (e.g., skill development, financial inclusion) to catalyze sustainable escapes from poverty. Finally, the principle of integration underpins our analysis: isolated schemes risk fragmentation, whereas harmonized beneficiary databases and coordinated planning can create synergistic impacts greater than the sum of individual interventions.

Research Methodology :

A mixed-methods meta-analysis was conducted, drawing on quantitative indicators—employment days generated under MGNREGA, subsidy delivery ratios in PDS, house completion rates in PMAY, pension coverage ratios in NSAP—sourced from government annual reports (MoRD 2015–22; MoFPI 2013–21) and independent studies (World Bank 2018; NCAER 2019). Qualitative insights were gleaned from published interviews in leading newspapers (*The Hindu*, *Indian Express*) with twenty district-level officers and beneficiary focus groups, alongside thematic coding of academic articles in *Economic & Political Weekly* and *Journal of Social Policy*. Triangulation across these data sources ensured robustness in identifying recurring implementation challenges and best practices. Limitations include reliance on secondary data—which may vary in quality across states—and the potential bias of official narratives in published interviews.

- **Analysis and Discussion :**

Five critical dimensions emerged as determinants of program effectiveness : **coverage and targeting**, **benefit adequacy**, **administrative capacity**, **program integration**, and **governance and accountability**.

5.1 Coverage and Targeting Efficiency :

MGNREGA's statutory guarantee of 100 days of work per rural household has driven remarkable outreach: national coverage climbed from 48 percent of rural households in 2007 to 85 percent in 2021. However, inter-state disparities persist: Rajasthan and Kerala routinely exceed 95 percent, whereas Uttar Pradesh and Bihar hover at 70–75 percent. CAG audits report approximately 12 percent leakage due to ghost beneficiaries and inflated attendance registers; states that mandated Aadhaar-authenticated muster rolls (e.g., Jharkhand, Gujarat) have cut these leakages nearly in half (CAG, 2019). In the PDS domain, post-NFSA digitization in Andhra Pradesh and Tamil Nadu reduced diversion from 50 percent to under 10 percent. Yet, Kumar et al. (2020) document that around one-fifth of eligible households—particularly in remote tribal and urban slum areas—remain unregistered, reflecting gaps in outreach and documentation. PMAY has constructed roughly 80 percent of its target homes by 2021, but third-party audits reveal that a quarter of beneficiaries did not install

mandated water and sanitation connections. NSAP pensions reach roughly 85 percent of eligible elderly and disabled households, but stagnant pension amounts erode real value over time, diminishing program attractiveness and perceived adequacy.

5.2 Benefit Adequacy and Livelihood Impact :

While flagship schemes excel at subsistence cushioning, they often fall short of catalyzing sustainable income generation. MGNREGA wages average Rs. 215 per day—above statutory minima in most states—boosting household consumption by an estimated 18 percent (Dutta & Banerjee, 2018). However, one-third of registered workers receive fewer than 20 days of work annually due to funding shortfalls and delayed wage payments. PDS subsidies cover 50–75 percent of grain costs, saving beneficiary families an average of Rs. 1,200 per month, but dietary diversity remains low, as cash constraints force families to prioritize staples over protein-rich foods. PMAY's one-time housing subsidy of Rs. 1.2–1.5 lakh secures shelter but does not improve livelihoods; without attached livelihood training or credit components, many households struggle to bear maintenance costs. NSAP pensions of Rs. 200–Rs. 500 per month provide a safety net but often fall short of meeting even minimal health care expenses, particularly for the elderly with chronic ailments (Rao, 2019).

5.3 Administrative and Institutional Capacity :

State and local governance capacity emerges as the single strongest predictor of program performance. States with robust Gram Rozgar Sevaks and Gram Sabhas (Kerala, Maharashtra) exhibit timely MGNREGA wage payments and high workday utilization, whereas states with weak panchayat systems (Jharkhand, Chhattisgarh) face rampant fund misuse and substandard asset creation. PDS efficiency correlates with state food commission proactive grievance mechanisms: Tripura's digital grievance portal resolves 90 percent of complaints within seven days, while West Bengal's manual system averages 45 days. PMAY implementation depends heavily on convergence between rural development, housing, and utilities departments; in Uttar Pradesh, interdepartmental turf wars delayed housing sanctions by six months on average. NSAP rollout suffers from a lack of periodic beneficiary re-verification, leading to inclusion errors that strain limited pension resources.

5.4 Program Integration and Synergies :

Households frequently qualify for multiple programs, yet siloed delivery mechanisms inhibit synergistic impacts. In Andhra Pradesh, the adoption of a Unified Social Registry in 2017 enabled real-time beneficiary data sharing across MGNREGA, PDS, PMAY, and NSAP, reducing duplication by 30 percent and improving outreach to the most vulnerable. By contrast, states without such registries (e.g., Bihar, Odisha) continue to operate separate databases, resulting in both exclusion and double-dips that skew resource allocation. Integrated service centers—such as e-Seva Kendras in Telangana—

exemplify effective one-stop windows for scheme enrollment and grievance redressal, but these have yet to scale nationwide.

5.5 Governance, Accountability, and Citizen Engagement :

Social audits under MGNREGA have evolved into a potent accountability tool, with trained civil society facilitators conducting quarterly reviews of worksite registers. States like Rajasthan mandate that 60 percent of panchayats hold timely social audits, driving transparency and community oversight. PDS digitization initiatives and mystery shopper exercises have exposed shop-level diversion, prompting district magistrates to suspend errant retailers pending investigation. In PMAY, beneficiary satisfaction surveys—conducted by third-party agencies—inform corrective actions on quality shortfalls. Yet, NSAP schemes lack a comparable audit mechanism, leaving pension misallocations unchecked. Published interviews with district officers highlight that local civic bodies often lack the training and independence to conduct robust social accountability processes, underscoring the need for statutory citizen oversight bodies.

- **Findings :** Synthesizing quantitative and qualitative evidence yields five key findings :

(1) **Extensive Reach but Uneven Depth :** While flagship programs cover a large share of eligible populations, benefit depth—measured by days of work, subsidy amounts, or pension levels—varies markedly across states and schemes.

(2) **Persistent Leakages and Delays :** Ghost beneficiaries, attendance inflation, diversion of in-kind transfers, and wage payment lags systematically erode program impact.

(3) **Institutional Capacity as the Critical Enabler :** States and local bodies with stronger bureaucratic structures, professional cadres, and digital systems outperform peers by wide margins.

(4) **Fragmented Delivery Undermines Synergies :** Separate beneficiary databases and siloed delivery channels prevent households from leveraging the full suite of welfare entitlements.

(5) **Accountability Mechanisms Yield Results Where Present :** Social audits, digital grievance portals, and third-party quality checks demonstrably improve transparency and service delivery—but are unevenly implemented.

Recommendations :

To bolster poverty alleviation impact, we propose the following reforms :

- **Unified Social Registry :** Mandate the creation of a centralized, Aadhaar-linked beneficiary database in every state, capturing real-time updates across all major welfare schemes. This will eliminate duplicate entries, reduce exclusion errors, and enable targeted outreach to the most vulnerable.
- **Performance-Linked Funding :** Tie 10–15 percent of central allocations under MGNREGA,

PDS, PMAY, and NSAP to key performance indicators—such as payment timeliness, social audit completion rates, and grievance resolution metrics—to incentivize frontline accountability.

- **Capacity Building Grants for Local Bodies :** Provide dedicated grants for Gram Panchayats and Urban Local Bodies to hire and train professional staff (engineers, accountants, social workers), ensuring that panchayat– and city-level institutions possess the requisite expertise to implement complex schemes.
- **Integrated Livelihoods Component :** Augment MGNREGA with on-the-job skill training and link PMAY beneficiaries to skill vouchers under schemes like Deen Dayal Upadhyaya Grameen Kaushalya Yojana, fostering sustainable income opportunities beyond subsistence work.
- **Dynamic Benefit Indexation :** Index PDS grain prices and NSAP pension amounts to inflation, preserving real benefit levels over time and reducing the need for frequent ad hoc upratings.
- **Statutory Social Accountability Bodies :** Establish ward-level Citizen Welfare Committees under each Gram Panchayat and Municipality, vested with statutory authority to review worksite registers, PDS stocks, and housing quality, and to levy sanctions for non-compliance.
- **One-Stop Service Centers :** Scale up integrated e-Seva portals across all districts, enabling beneficiaries to apply for multiple welfare entitlements, track payments, and lodge grievances through a single interface.
- **Third-Party Audit and Mystery Shopping :** Institutionalize periodic third-party audits and unannounced mystery shopper visits to wage disbursement centers and ration shops, publishing results publicly to deter malpractice.
- **Conclusion :**

India's social welfare architecture has matured into a sprawling ecosystem of cash and in-kind transfers aimed at mitigating poverty and vulnerability. While flagship programs like MGNREGA, PDS, PMAY, and NSAP have indisputably delivered critical support to millions, their transformative potential remains constrained by uneven implementation quality, administrative bottlenecks, and siloed delivery systems. Strengthening institutional capacity at the state and local levels, integrating program databases, and embedding robust accountability mechanisms can significantly amplify impact—enabling not only subsistence relief but sustainable pathways out of poverty. By adopting the recommended reforms, India can transcend the limitations of fragmented welfare delivery and realize a cohesive, outcomes-oriented social protection framework fit for the challenges of the twenty-first century.

References :

1. Comptroller and Auditor General of India. (2019). *Report on Performance Audit of*

GNREGA. Government of India.

2. Devereux, S., & Sabates-Wheeler, R. (2004). Transformative social protection. *IDS Working Paper 232*. Institute of Development Studies.
3. Dutta, P., & Banerjee, S. (2018). The impact of MGNREGA on rural wages: Evidence from panel data. *Journal of Development Studies, 54*(7), 1268–1284. https://doi.org/10.1080/00220388.2017.1421437
4. Khera, R. (2017). Reviving the Public Distribution System: Evidence and issues. *Journal of Social Policy, 46*(3), 637–659. https://doi.org/10.1017/S0047279416000285
5. Kumar, V., Rao, N., & Singh, A. (2020). Leakages in the National Food Security Act: A field study. *Economic & Political Weekly, 55*(10), 52–60.
6. Mehta, P., & Sharma, R. (2021). Housing the poor: Evaluating PMAY outcomes in jharkhand. *Habitat International, 117*, 102429. https://doi.org/10.1016/j.habitatint.2021.102429
7. Ministry of Food Processing Industries. (2013–2021). *Annual Report on NFSA Implementation*. Government of India.
8. Ministry of Rural Development. (2015–2022). *MGNREGA Annual Reports*. Government of India.
9. NITI Aayog. (2020). *Meta-Analysis of Social Welfare Programmes in India*. Government of India.
10. Pollitt, C., & Bouckaert, G. (2011). *Public Management Reform: A Comparative Analysis* (3rd ed.). Oxford University Press.
11. Rao, K. (2019). Pension adequacy under the NSAP: A critical review. *Indian Journal of Social Work, 80*(2), 231–250.
12. World Bank. (2018). *Impact Evaluation of MGNREGA: Income Support and Employment Outcomes*. World Bank.
13. World Bank. (2021). *Poverty and Shared Prosperity 2020: Reversals of Fortune*. World Bank Publications.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 154–157

शहरीकरण से समाज के स्वास्थ्य पर प्रभाव

डॉ. बिन्दी कुमारी
समाज ाास्त्र विभाग, मगध वि ववविद्यालय, बोधगया।

शोध सार :–

भाहरीकरण एक प्रक्रिया है जिसमें जनसंख्या का बड़ा भाग गाँवों से पलायन कर अपहने बेहतर भविश्य रोजगार, ि ाक्षा, स्वास्थ्य आदि के लिए भाहर की और जाते हैं। यही प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है जिससे जनसंख्या का घनत्व भाहरों में तेजी जीव से बढ़ती जाती है। शहरीकरण के कारण वहाँ पानी, बिजली ि ाक्षा, स्वास्थ्य और सड़क आदि की समूचित व्यवस्था रहती हैं।

विशिष्ट शब्द – शहरीकरण, जनसंख्या, अनवरत, प्रक्रिया, समुचित ि ाक्षा, स्वास्थ्य आदि।

विस्तार :–

मानव जीवन के इतिहास में ि ाक्षा, स्वास्थ्य और आवास का बहुत बड़ा महत्व रहा है, मानवीय जीवन प्रारंभ में घुमंतु प्रवृति का होता था। कृशि के विकास ने व्यक्ति के जीवन का वह स्थाई बनाया क्योंकि प्रारंभ में व्यक्ति घुमंतु प्राणी होने के कारण अन्य उपार्जन के प्रति चेतन ाील नहीं था जैसे हीर अन्न उपार्जन का अभास हुआ वह एक स्थान पर आवास बनाकर रूकना प्रारंभ किया। अन्य की ओर जागरूकता एवं उसके झुकाव ने उसे अस्थाई से स्थाई बना दिया। भाहरीकरण के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार औद्योगिक कल कारखाना ही माना जाता है। औद्योगिकरण ने व्यक्ति को गांव से भाहर की ओर पलायन करने पर मजबुर कर दिया।[1] प्रारंभ में कृशि उत्पादन बहुत ही कम हुआ करता था जबकि उद्योगों में कार्य करने वाले श्रमिकों सुविधाओं के साथ आर्थिक रूप से अधिक स ाक्त बनाये जाने से लोग उद्योग के प्रति अधिक झुकाव रखते थे। औद्योगिकरण ने गांवों की बढ़ती आबादी को अपने ओर आकर्शित कर जहाँ गांव की जनसंख्या घनत्व को कम किया वहीं भाहरों में धिरे–धिरे घनत्व बढ़ते गया।

नये–नये भाहरों का उदय और भाहरों की बढ़ती जनसंख्या ने भाहरों में नई–नई समस्याओं को जन्म दिया। भाहरों में श्रमिकों की बढ़ती आबादी ने कई नई समस्याओं को जन्म दिया जैसे–बेरोजगारों में वृद्धि, आवास की समस्या तथा स्वास्थ्य संबंधी समस्या इत्यादि।

भाहरों और गांवों में मुख्य अंतर पाया गया कि ग्रामीण लोगों की आजीविका जहां कृशि, प ाुपालन एवं घरेलू उद्योग–धंधों पर आश्रित होती है वहीं भाहरों में लोग विभिन्न व्यवसायों व्यापार, उद्योग, नौकरी में लगे होते हैं।[2]

ाहरीकरण का पुरूशों और महिलाओं पर समान प्रभाव पड़ा। दोनों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अधिकारों और कार्यों पर बल दिया गया। भाहरीकरण के कारण कल–कारखानों की स्थापना, चिमनियों से निकलनेवाले धुएँ, बेतरतीब

भीड़, लोगों और सवारियों की आवाजाही, गंदगी और धूल से पर्यावरण काफी दूशित हो गया। अतः पर्यावरण की सुरक्षा के लिए समय–समय पर प्रयास किए गए।[3] 1840 के द ाक में इंग्लैंड के प्रमुख औद्योगिक नगरों में धुआँ नियंत्रण कानून लागू किया गया। भारत में 1863 में कलकता में धुआँ–निरोधक कानून बनाया गया।

भाहरों का सामाजिक जीवन आधुनिकता के साथ अभिन्न रूप से जोड़ा जा सकता है। वास्तव में नगरीय जीवन एवं आधुनिकता एक–दूसरे की अंतभिव्यक्ति है। भाहरों को आधुनिक व्यक्ति का प्रभाव क्षेत्र माना जाता है।[4] भाहर व्यक्ति को संतश्ट करने के लिए अंतहीन संभावनाएँ प्रदान करता है। आधुनिकरण ने नगरीय जीवन को काफी हद तक प्रभावित किया है।[5]

आर्थिक तथा प्रशासनिक संदर्भ में ग्रामीण तथा नगरीय व्यवस्था के दो प्रमुख आधार हैं :-

- जनसंख्या का घनत्व – ाहरों में जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है।
- कृशि आधारित आर्थिक क्रियाओं का अनुपात – कृशि आधारित आर्थिक क्रियाओं का अनुपात गांवों में अधिक होता है।

भाहरीकरण से भाहरों में अनेक बदलाव हुए जिसमें भाहरी क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में संसाधन प्रदान करने में बहुत अधिक कु ाल हैं। भाहरी क्षेत्रों में आवास, स्वच्छ पानी और बिजली जैसी महत्वपूर्ण और बुनियादी सुविधाएं आसानी से उपलब्ध होते हैं।[6] जिससे लोगों को काफी सुविधाएं होती है।

आवागमन के साधन में भाहरी क्षेत्रों में लोगों को विभिन्न महत्वपूर्ण सेवाओं तक पहुंचना काफी आसान लगता है। सबसे उल्लेखनीय, ये सेवाएं उच्च–गुणवत्ता वाली ि ाक्षा, वि ोशज्ञ स्वास्थ्य देखभाल, सुविधाजनक परिवहन, मनोरंजन आदि हैं।[7] इसके अलावा, कुछ या सभी सेवाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में अनुपलब्ध हैं।

रोजगार के क्षेत्र में भाहरी क्षेत्र बेहतर रोजगार के अवसर प्रदान करते हैं। ये रोजगार के अवसर औद्योगीकरण और व्यवसायीकरण के परिणामस्वरूप हैं।

अध्ययन के क्षेत्र में भाहरी क्षेत्र ज्ञान के निर्माता और प्रसारकर्ता के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसकी वजह है, अत्यधिक जुड़ी भाहरी दुनिया सबसे उल्लेखनीय, भाहरी क्षेत्रों में लोगों की भौगोलिक निकटता विचारों के प्रसार में मदद करती है।

तकनीकी रूपी में भाहरी क्षेत्र तकनीकी विकास के लाभों का आनंद पहले लेते हैं। भाहरी क्षेत्रों में कई प्रकार की प्रौद्योगिकियाँ लागू होती हैं। इसके अलावा, भाहरी लोग नवीनतम तकनीक के संपर्क में जल्दी आते हैं। इसके विकास पहले होता है, जिसका लाभ भी भाहरी लोग ही उठाते है।[8] भाहरीकरण की तज प्रक्रिया के कारण तेजी से बढ़ता भाहरीकरण स्वस्थ्य और अस्वास्थ्यकर परिणाम आज सामने आ रहे हैं लोगों के अन्दर स्वास्थ्य से ज्यादा धन को देने की प्रवृत्ति आ गई है।

- तेजी से फैलते औद्योगीकरण से कई औद्योगिक भाहरों का स्थापना और विकास हुआ है। विनिर्माण इकाइयों के साथ, उन भाहरों क्षेत्रों मे ंसहायक और सेवा क्षेत्र बढ़ने लगे।
- दूसरे, नए और अतिरिक्त रोजगार के अवसर भाहरी क्षेत्रों में अपनी नई विस्तार विनिर्माण और सेवा क्षेत्र इकाइयों में बनाए जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण– ाहरी प्रवास और ''औद्योगिकीकरण– ाहरीकरण प्रक्रिया'' स्थापित की जाती है।
- तीसरा, भाहरों का विकास बाहरी अर्थव्यवस्थाओं को जन्म दे सकता है ताकि विभिन्न सेवाओं और गतिविधियों

के लिए अर्थव्यवस्थाओं का लाभ उठा सके। परन्तु इसके दूसरे पहलु में वो अंत में, भाहरीकरण के परिणामों में परिवर्तन होता है और भाहरी लोगों की मानसिकता में व्यवहार और उचित प्रेरणा में आधुनिकरण होता है जो अप्रत्यक्ष रूप से दे ा को तेजी से आर्थिक विकास प्राप्त करने में मदद करता है।

अस्वस्थ्य पहलू :-

- हालांकि अर्थव्यस्था का विकास भाहरीकरण से बहुत जुड़ा हुआ है, लेकिन इससे कुछ गंभीर समस्याएं पैदा हुई हैं। सबसे पहले, बढ़ते भाहरीकरण भाहरी क्षेत्रों में बढ़ती भीड़ के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है। बहुत अधिक भीड़ के कारण ट्रैफिक जाम, आबादी की बहुत अधिक जमावट जैसी समस्याएं हुई हैं, जिसका प्रबंधन धीरे–धीरे बहुत मु कल और महंगा होता जा रहा है।
- दूसरे, बहुत अधिक जनसंख्या भाहरीकरण का एक और अस्वास्थ्य कर पहलु है जो भाहरी आवास, ि ाक्षा, चिकित्सा सुविधाओं, मलिन बस्तियों के विकास, बेरोजगारी, हिंसा, भीड़भाड़ आदि से संबंधित भाहरी अराजकता पैदा करता है। इन सभी के परिणामस्वरूप मानव जीवन की गुणवता में गिरावट होती हैं।

अंत में, भाहरीकरण के परिणामस्वरूप, बड़े पैमाने पर प्रवासन ग्रामीण से भाहरी क्षेत्रों में होता है। ग्रामीण क्षेत्रों से सक्रिय जनसंख्या के इतने बड़े पैमाने पर प्रवासन से ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादकता में कमी आएगी, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थिति खराब होगी। इस प्रकार, भाहरीकरण, एक नि चत बिंदु से परे, अस्वास्थ्यकर परिणाम होगा।

शहरी नीति के उपाय :-

तीव्र भाहरीकरण के अस्वास्थ्यकर परिणामों को ध्यान में रखते हुए, एक भाहरी नीति तैयार करना काफी महत्वपूर्ण है जो न्यूनतम अवांछनीय प्रभावों के साथ भाहरी विकास प्रदान कर सकता है। जिन उपायों का बड़े पैमाने पर पालन किया जा सकता है, उनमें भाामिल हैं :–

- गैर–कृशि गतिविधियों के विकास के लिए दे ा की विकास योजनाओं के साथ भाहरीकरण प्रक्रिया को एकीकृत करना, जैसे कि बाहरी अर्थव्यवस्थाओं की प्राप्ति के लिए विनिर्माण सेवाएं और बुनियादी ढाँचा।
- इन बड़े आकार के भाहरों के नुकसान को कम करने के लिए चयनात्मक भाहरी विकास की व्यवस्था करना।
- ग्रामीण जिलों को विकसित करने के लिए, अत्यधिक ग्रामीण जिलों के भाहरों को विकसित करके, बड़े भाहरों में और उसके आसपास उपग्रह टाउन ि ाप विकसित करना।
- नगरीय सुविधाओं को पर्याप्त मात्रा में विकसित करके बड़े भाहरी केंद्रों पर दबाव ताकि भाहरी जीवन को भाांतिपूर्ण बनाया जा सके।

भाहरीकरण बुरा नहीं है, किन्तु जैसे हर चीज की अति खराब होती है, वही स्थिति इसके साथ भी है। हमारा दे ा कृशि–प्रधान दे ा है, लेकिन भाहरीकरण के फलस्वरूप कोई भी युवा गांवों में रहकर खेती नहीं करना चाहता, और न ही गांवों में रहना चाहता है। भाहरों की चकाचौंध में वो खो सा गया है। उसे वास्तविकता का जरा सा भाहरों में बढ़ते घनत्व से आज अनेक समस्याएं विकसित रूप धारण कर ली हैं, बढ़ते घनत्व से आज प्रायः गंदी बस्तियों का निमार्ण तेजी से हो रहा जहाँ अनेक समस्याएं खड़ी हैं, गंदी बस्तियों में सड़क नाली, अवास

ि ाक्षा आदि का अभाव रहता हैं वहाँ के बच्चे वैसे वातारण में अनैतिक कार्य की ओर आसानी से उन्मुख हो जाते हैं। आज आव यकता है भाहरीकरण की तेज होती प्रक्रिया में बेहतर प्रबन्धन किया जाये जहाँ गंदी बस्तियों में भी समुचित व्यवस्था के साथ वहा के बच्चों की ि ाक्षा के लिए प्रबन्धन किया जाये। यह देखा जाता है कि भाहरी परिवे ा में लोग बच्चों के साथ समय नहीं बिताया करते जिससे बच्चों का समाजिकरण नहीं हो पाता। आज कार्य, व्यवहार और संस्कार को ध्यान में रखकर वास्तविक विकास की कल्पना को साकार किया जा सकता है।

संदर्भ सूची :-

1. आहुजा राम : अपराधशास्त्र, द्वितीय संस्करण, मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ 2001, पृ0 33
2. क्लीनार्ड, एम. बी. : सोशियोलॉजी आफ डेविऐन्ट बिहेवियर, न्यूयार्क, होल्ट, रीनहार्ट एण्ड विनसटन, 2004, पृ0 52
3. डेसपान्डे, एम0 यू0 : इन्टरप्रीन्यूरसिप ऑफ स्मांल स्केल इन्डस्ट्रीज, न्यू दिल्ली, दिप एण्ड दिप पब्लिकेशन्स, 2002, पृ0 41
4. हैकरवाल, बी0 एस0 : इकोनोमिक एण्ड सोशल आसपेकट्स ऑफ क्राइम, इन इंडिया, एल्लेन एण्ड अनवीन, लन्दन 1934, पृ0 98
5. सदरलैंड इ0 एच एवं क्रेसी : प्रिन्सीपुल्स ऑफ क्रिमिनोलॉजी (छठा संस्करण), दि टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, बाम्बे, 2005, पृ0 111
6. प्रो0 राम आहुजा व मुकेश आहूजा : विवेचनात्मक अपराधशास्त्र, रावत पब्लिकेशंस, जयपुर 2003, पृ0 26
7. डॉ0 निरंकार प्रसार श्रीवास्तव : "अपराध और राजनीति के बदलते समीकरण", 2008, पृ0 19
8. पुलिस सुधार–दरकार एवं व्यवहार : रास बिहार, हिन्दुस्तान 12.2.2007

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 158–163

ग्रामीण विकास में सरकारी योजनाओं से सामाजिक एवं आर्थिक विकास में महिलाएं : एक विश्लेषण

सुहासनी कुमारी
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

शोध सार – प्रस्तुत अध्ययन ''ग्रामीण विकास में सरकारी योजनाओं से सामाजिक एवं आर्थिक विकास में महिलाओं की सहभागिता'' का अध्ययन है।

यह शोध लेख का अध्ययन ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करता है, जिसमें उनके घरेलू आय, कृषि और सूक्ष्म उद्यमों में योगदान के साथ–साथ वित्तीय स्वतंत्रता प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं पर ध्यान केंद्रित किया गया है। आर्थिक गतिविधियों में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद, ग्रामीण महिलाएं वेतन असमानता, शिक्षा और कौशल विकास तक सीमित पहुंच, तथा वित्तीय संसाधनों की कमी जैसी समस्याओं का सामना करती हैं। इन चुनौतियों को सांस्कृतिक मान्यताओं और बुनियादी ढांचे की अपर्याप्तता और अधिक कठिन बना देती हैं, जिससे उनके आर्थिक सशक्तिकरण में रुकावट आती है। यह शोध मिश्रित पद्धति का उपयोग करता है, जिसमें सर्वेक्षण और साक्षात्कार के माध्यम से एकत्र किए गए प्राथमिक आंकड़ों को सरकारी रिपोर्टों, शैक्षणिक अध्ययनों और गैर–सरकारी संगठनों से प्राप्त माध्यमिक आंकड़ों के साथ जोड़ा गया है।

विशिष्ट शब्द : आर्थिक तथा समामाजिक विकास, महिला श्रम, संरचनात्मक परिवर्तन, लैंगिक भेदभाव इत्यादि।

बिहार के ग्रामीण विकास में सरकार के विभिन्न अपने देश की महिलाओं के जीवन में व्यापक बदलाव लाने में सफल रही है। लैंगिक भेदभाव को दूर करने से लेकर शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, उद्यमिता और सुरक्षा को बढ़ावा देने तक, इन पहलों ने महिलाओं के जीवन में जबरदस्त सुधार लाए हैं तथा देश की समग्र प्रगति में योगदान दिया है। आज बात सिर्फ महिलाओं के विकास की नहीं बल्कि महिलाओं के नेतृत्व में विकास की है। हमारे देश की विकास यात्रा, देश की महिलाओं के सशक्तिकरण के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। इस महत्वपूर्ण संबंध की पहचान करते हुए, सरकार ने पिछले कई वर्षों में नारी शक्ति को अपने एजेंडे में सर्वोपरि रखा है। सरकार मानती है कि महिला सशक्तिकरण एक बार में हल किया जाने वाला समाधान नहीं है। इसके लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो जीवनभर उनकी जरूरतों को पूरा करने में सक्षम हो। इस संबंध में, महिलाओं का विभिन्न चरणों में समर्थन करने के लिए कई कल्याण कार्यक्रम तैयार किए गए हैं, ताकि उन्हें सामाजिक–आर्थिक बाधाओं को दूर करने और संपूर्ण सशक्तिकरण प्राप्त करने में सक्षम बनाया जा सके।

बिहार के ग्रामीण ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले ग्रामीण, जो देश के सुदूर हिस्सों में कुशल और अकुशल दोनों

तरह के श्रम क्षेत्रों में काम करते हैं, विभिन्न माध्यमों के जरिए अपने अधिकारों और मांगों का दावा करने में कामयाब रही हैं।[1] उन्होंने पर्यावरण संबंधी चिंताओं, सामाजिक–आर्थिक उन्नति और डिजिटल माध्यमों का प्रभावी रूप से इस्तेमाल कर अपने समुदाय के भीतर अपने लिए विश्वसनीयता, स्वतंत्रता और प्रतिस्पर्धा की तलाश की है। इस तरह के मंच महिलाओं को परोक्ष रूप से हिम्मत देते हैं और अपने अधिकारों के लिए लड़ने में सक्षम बनाते हैं, जिससे अंततः वो राजनीतिक कौशल भी प्राप्त कर पाती हैं। भारत में पंचायती राज की शुरुआत करने वाले 72वें संवैधानिक संशोधन की मदद से महिलाओं को स्थानीय विधानसभाओं और सरपंच के पद के लिए एक तिहाई आरक्षण मिला।

विभिन्न सरकारी योजना ने सत्ता और सामाजिक ताकत का विस्तार कर महिलाओं को निर्णय लेने की शक्ति दी और देश के सुदूर इलाकों में लोकतंत्र की सीमाओं का विस्तार किया।[2] इसमें क्षेत्र की पूंजी और वहां के मानव और बौद्धिक संसाधनों पर समान नियंत्रण प्रदान किया जाना शामिल था, जिसने महिलाओं को अपना जीवन स्तर सुधारने और एक बेहतर जीवन जीने की अनुमति दी। हालांकि, राजनीति में स्थान पाने के लिए, महिलाओं को अन्य सामाजिक–आर्थिक क्षेत्रों और विभिन्न ज्ञान आधारित क्षेत्रों में भी अपनी क्षमता साबित करनी होती है।

आर्थिक क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का उद्भव :–

ग्रामीण महिलाओं के उत्थान के उद्देश्य के लिए लागू की गई शुरुआती आर्थिक नीतियां काफी हद तक असफल रहीं। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम की उप–योजना ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास 1982–83 में 50 ग्रामीण जिलों में शुरू किया गया था। इसके चलते महिलाएं अपनी झिझक और कमजोरियों को दूर कर पाईं और संपत्ति व सामान की ख़रीद–फरोख्त के अलावा, महंगे साहूकारों के बजाय बैंक से ऋण लेने में सक्षम हुईं। नेशनल काउंसिल फॉर एप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च सेंटर फॉर मैक्रो कंज्यूमर रिसर्च द्वारा 2011 में जारी एक अध्ययन के अनुसार, बैंकों की 12.6 प्रतिशत की ब्याज दर के मुकाबले साहूकारों के ऋण पर ब्याज उच्चतम स्तर पर 44 प्रतिशत कर हो सकता है। ऐसे में महिलाओं के लिए इन ऊंची दरों पर ऋण लेना और कामकाज शुरु करना बेहद कठिन था।

महिला सशक्तीकरण के इस मॉडल को केवल भारत के छोटे क्षेत्रों जैसे आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु में ही कुछ सफलताएँ मिलीं क्योंकि अधिकांश क्षेत्रों में ग्रामीण क्रेडिट नेटवर्क को लेकर समझ विकसित नहीं हो पाई और इसलिए वो प्रभावी नहीं रहे।[3] इन योजनाओं के बाद, स्व–सहायता समूहों यानी सेल्फ हेल्प ग्रुप (एसएचजी) जैसी सूक्ष्म–ऋण योजनाएं शुरू की गईं, जो क्षेत्र के स्थानीय बैंकों के साथ भागीदारी में चलते थे। ये एसएचजी 'सहकर्मी–निगरानी' के सिद्धांतों पर आधारित हैं। इस मॉडल के तहत यह स्वीकार किया जाता है कि हो सकता है कि बैंक गांव में स्थित हो या न भी हो, इसलिए प्रत्येक लाभार्थी पूरे समूह के लिए जिम्मेदार और जवाबदेह है। यह योजना सफल रही, क्योंकि इसने महिलाओं को वित्तीय ज्ञान दिया और उन्हें आर्थिक अनुशासन के साथ काम करने और जीविकोपार्जन करने के लिए प्रेरित किया।[4] महिलाओं के ये समूह परस्पर सहयोग और भागीदारी से चलते थे जिससे ऋण चुकाने का स्तर बेहतर हुआ और भुगतान संबंधी चूक में उल्लेखनीय कमी आई। पहले की योजनाओं के विपरीत, इस मॉडल ने महिलाओं को अपनी गति और सहूलियत के साथ, विभिन्न आर्थिक गतिविधियों की शुरुआत के लिए प्रोत्साहित किया, क्योंकि अब ऋण लेने का एक

भरोसेमंद स्रोत उनकी पहुंच के भीतर था।

प्रमुख सरकारी योजनाएं :-

नारी शक्ति अधिनियम - अमृत-पीढ़ी का क्षण :

नारी शक्ति वंदन अधिनियम, 2023 पारित किए जाने के माध्यम से इस यात्रा की उपलब्धि हासिल की गई। यह अधिनियम महिलाओं के लिए लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और दिल्ली विधानसभा में कुल सीटों में से एक–तिहाई सीटें आरक्षित करने का प्रावधान करता है।[5] एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह रही कि अमृत काल के लिए भूमिका निर्धारित करते हुए नए संसद भवन में सबसे पहले महिला आरक्षण विधेयक पर विचार–मंथन हुआ।

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ :

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ (बीबीबीपी) योजना उन प्रमुख पहलों में से एक है, जिसने लड़के–लड़कियों के बीच भेदभाव से निपटने और बालिकाओं के महत्व को बढ़ावा देने के लिए बड़े पैमाने पर लोगों को साथ जोड़ा और प्रेरित किया। प्रत्येक स्तर पर, इस योजना ने सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से बालिकाओं के अधिकारों के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए कर्मठता से काम किया है। जन्म के समय लिंग चयन न करने की वकालत करते हुए और उनके शैक्षिक विकास में सहायता के लिए सकारात्मक कार्रवाई को प्रोत्साहित कर बीबीबीपी एक सकारात्मक बदलाव लायी है।[6] पिछले कुछ वर्षों में, जन्म के समय लिंगानुपात में सराहनीय सुधार हुआ है, जो 918 (2014–15) से 19 अंक की वृद्धि के साथ 937 (2020–21) हो गया। इसके अतिरिक्त, माध्यमिक शिक्षा में लड़कियों का नामांकन 2014–15 में 75.51 प्रतिशत से बढ़कर 2020–21 में 79.46 प्रतिशत हो गया, जो महत्वपूर्ण प्रगति को दर्शाता है। इसके अलावा, देश में पहली बार कुल जनसंख्या का लिंगानुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाएं) 1020 (एनएफएचएस–5, 2019–21) तक पहुंच गया है।

मातृत्व का उत्सव मनाना :

भारत को कुपोषण मुक्त बनाने की दिशा में सरकार ने 8 मार्च, 2018 को पोषण अभियान शुरू किया। कुपोषण की समस्या से समग्र रूप से निपटने की दिशा में यह मिशन विभिन्न हितधारकों का एक समन्वित मंच है। एक मजबूत आईसीटी सक्षम प्लेटफॉर्म–पोषण ट्रैकर की सहायता से वास्तविक समय में पूरक पोषण की निगरानी और सेवाओं का त्वरित पर्यवेक्षण और प्रबंधन सुनिश्चित किया जाता है।[7] 14 लाख से अधिक आंगनबाड़ियों की सहभागिता और लगभग 10 करोड़ लाभार्थियों का कवरेज इस पहल के माध्यम से प्राप्त प्रभाव के स्तर को दर्शाता है।

प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण :

महिलाओं के लिए सुरक्षित आवास और वित्तीय निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के महत्व को पहचानते हुए, सरकार ने प्रधानमंत्री आवास योजना– ग्रामीण (पीएमएवाई–जी) की शुरुआत की। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इस योजना के तहत प्रदान किए गए 72 प्रतिशत से अधिक घर या तो पूर्ण रूप से या फिर संयुक्त रूप से महिलाओं के स्वामित्व में हैं। महिलाओं को घरों का स्वामित्व प्रदान करके, पीएमएवाई–जी ने उनकी आकांक्षाओं को पूरा किया है और उन्हें घरेलू निर्णय लेने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेने हेतु सशक्त बनाया है।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना :

महिलाओं के स्वास्थ्य एवं सुरक्षा संबंधी चिंताओं को दूर करने के उद्देश्य से, प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना (पीएमयूवाई) की शुरुआत मई 2016 में की गई थी। इस पहल का उद्देश्य ग्रामीण और वंचित परिवारों को खाना पकाने का स्वच्छ ईंधन (एलपीजी) प्रदान करना है।[8] पीएमयूवाई के तहत 10 करोड़ से अधिक एलपीजी कनेक्शनों के वितरण ने लाखों महिलाओं के स्वास्थ्य की रक्षा की है और उन्हें खाना पकाने के ईंधन के रूप में जलावन वाली लकड़ी, गाय के सूखे गोबर आदि जैसे पारंपरिक बायोमास ईंधन के उपयोग के खतरों एवं इसके परिणामस्वरूप घरों के भीतर पैदा होने वाले वायु प्रदूषण से मुक्त किया है।

स्वच्छ भारत मिशन :

महिला सशक्तिकरण का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू स्वच्छता की सुलभता है। स्वच्छता की अपर्याप्त सुविधाओं के कारण महिलाओं के सामने आने वाली चुनौतियों को महसूस करते हुए, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 2 अक्टूबर 2014 को स्वच्छ भारत मिशन (एसबीएम) की शुरुआत की। इस मिशन का उद्देश्य देश के सभी घरों में शौचालय उपलब्ध कराना है ताकि बेहतर स्वच्छता और साफ–सफाई सुनिश्चित की जा सके और 2 अक्टूबर 2019 को, संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित एसडीजी–6 लक्ष्य से 11 साल पहले, ग्रामीण भारत खुले में शौच–मुक्त (ओडीएफ) बन गया।[9] "शौचालय की सुलभता और ग्रामीण भारत में महिलाओं की सुरक्षा, सुविधा और आत्म–सम्मान (एक्सेस टू टॉयलेट्स एंड द सेफ्टी कन्वीन्यन्स एंड सेल्फ–रेस्पेक्ट ऑफ वीमेन इन रूरल इंडिया)" शीर्षक रिपोर्ट के अनुसार, शौचालयों के निर्माण के बाद, 93 प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि उन्हें अब शौच के दौरान जानवरों द्वारा नुकसान पहुंचाए जाने, स्वास्थ्य संबंधी संक्रमण से ग्रसित होने और रात के अंधेरे में शौचालय जाने का डर नहीं है। स्वच्छता संबंधी सुविधाओं की उपलब्धता और उनके नियमित उपयोग ने महिलाओं के कल्याण और उनकी गरिमा को सुनिश्चित करने में काफी योगदान दिया है, जोकि एक स्वच्छ एवं स्वस्थ राष्ट्र बनने की दिशा में भारत की यात्रा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

जल जीवन मिशन :

स्वच्छ पेयजल की सुलभता समुदायों, विशेषकर महिलाओं के कल्याण की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण है। इस समझ के साथ, सरकार ने 15 अगस्त, 2019 को जल जीवन मिशन (जेजेएम) की शुरुआत की। प्रत्येक ग्रामीण घर और सार्वजनिक संस्थान को नल का स्वच्छ पानी उपलब्ध कराने के प्राथमिक उद्देश्य के साथ, इस मिशन के तहत 14.45 करोड़ घरों में नल के पानी का कनेक्शन प्रदान किया गया है। सुरक्षित पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करके, इस मिशन का उद्देश्य लंबी दूरी से पानी लाने के क्रम में महिलाओं पर पड़ने वाले बोझ को कम करना है। इस परिवर्तनकारी पहल ने महिलाओं को सशक्त बनाया है और पानी, स्वच्छता एवं साफ–सफाई से जुड़ी आदतों के महत्व के प्रति ग्रामीण लोगों को जागरूक बनाने में योगदान दिया है।

वित्तीय सशक्तिकरण :

महिलाओं का सशक्तिकरण उनके आर्थिक सशक्तिकरण पर निर्भर है। इसीलिए सरकार ने स्टैंड–अप इंडिया और प्रधानमंत्री मुद्रा योजना जैसी पहलों के माध्यम से महिलाओं के बीच वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए अनेक कदम उठाए हैं। स्टैंड–अप इंडिया योजना महिलाओं, अनुसूचित जाति (अजा) और अनुसूचित जनजाति (अजजा) के बीच ग्रीनफील्ड उद्यमों की स्थापना के लिए सहायता प्रदान करने पर केंद्रित है। इसी

तरह, पीएमएमवाई का लक्ष्य गैर–कॉर्पोरेट, गैर–कृषि सूक्ष्म और लघु उद्यमों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। पीएमएमवाई के तहत महिला उद्यमियों को लगभग 69 प्रतिशत ऋण स्वीकृत किए गए हैं और स्टैंड–अप इंडिया के तहत 84 प्रतिशत लाभार्थी महिलाएं हैं। महिला सम्मान बचत प्रमाणपत्र को केंद्रीय बजट 2023–24 के हिस्से के रूप में प्रस्तुत किया गया था, जो विशेष रूप से महिला निवेशकों के लिए एक छोटी बचत योजना है।

सुरक्षा एवं संरक्षा :

मिशन शक्ति सरकार का एक और महत्वपूर्ण प्रयास है। इसका उद्देश्य महिलाओं की सुरक्षा, सशक्तिकरण और कार्यबल में भागीदारी को बढ़ाना है। इस मिशन का उद्देश्य कौशल विकास, क्षमता निर्माण, वित्तीय साक्षरता और सूक्ष्म ऋण तक पहुंच के माध्यम से महिलाओं पर लैंगिक पूर्वाग्रह, भेदभाव और देखभाल की जिम्मेदारी का समाधान करना है।

तीन तलाक की प्रथा की समाप्ति :

मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 भारत में 19 सितंबर, 2018 को लागू किया गया था। यह अधिनियम तीन बार तत्काल तलाक का उच्चारण करने की प्रथा, जिसे आमतौर पर तीन तलाक के रूप में जाना जाता है, को शून्य और अवैध बनाता है। यह तत्काल तीन तलाक की प्रथा में शामिल होने वाले पतियों के विरुद्ध तीन साल तक की कैद और जुर्माने सहित दंड लगाता है। तीन तलाक कानून को लागू करके, भारत सरकार का लक्ष्य उन मुस्लिम महिलाओं को कानूनी सुरक्षा प्रदान करना है, जो कई दशकों से इस प्रतिकूल प्रथा का शिकार थीं। इस महत्वपूर्ण सुधार से मुस्लिम महिलाओं की समग्र स्थिति में सुधार हुआ है, जिससे वे घरेलू हिंसा और समाज में पहले से होने वाले भेदभाव से बच सकी हैं।

उद्देश्य :

1. रोजगार और आय सृजन गतिविधियों के क्षेत्र में गरीबों तथा हाशिए पर पड़े लोगों की कार्यात्मक क्षमता का निर्माण करना।
2. सामूहिक नेतृत्व और आपसी चर्चा के माध्यम से संघर्षों को हल करना।
3. महिलाओं सशक्तिकरण के माध्यम से सरकार अपने देश की महिलाओं के जीवन में व्यापक बदलाव लाने में सफल रही है इसकी जानकारी प्राप्त करना।
4. महिला कल्याणकारी कार्यक्रम के द्वारा उन्हें सामाजिक–आर्थिक बाधाओं को दूर करने और संपूर्ण सशक्तिकरण प्राप्त करने में सक्षम बनाया है इसे ज्ञात करना।
5. गरीब लोग अपनी बचत जमा कर उसे बैंकों में जमा करते हैं। बदले में उन्हें अपनी सूक्ष्म इकाई उद्यम शुरू करने हेतु कम ब्याज दर के साथ ऋण तक आसान पहुँच प्राप्त होती है।

निष्कर्ष :–

अतः कह सकते हैं बिहार के ग्रामीण विकास में सरकार के विभिन्न अपने देश की महिलाओं के जीवन में व्यापक बदलाव लाने में सफल रही है। लैंगिक भेदभाव को दूर करने से लेकर शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, उद्यमिता और सुरक्षा को बढ़ावा देने तक, इन पहलों ने महिलाओं के जीवन में जबरदस्त सुधार लाए हैं तथा देश की समग्र प्रगति में योगदान दिया है। आज बात सिर्फ महिलाओं के विकास की नहीं बल्कि महिलाओं के नेतृत्व में विकास की है।

संदर्भ सूची :–

1. सुंदरी, एस. (2020), भारत में महिला श्रम के संरचनात्मक परिवर्तन और गुणवत्ता। द इंडियन जर्नल ऑफ लेबर इकोनॉमिक्स, 63 (3), 689–717।
2. दत्ता, एम. (2000), महिलाओं का रोजगार और शिलांग, भारत के बंगाली परिवारों पर इसका प्रभाव। तुलनात्मक पारिवारिक अध्ययन जर्नल, 31 (2), 217–229।
3. हुसैन, एम., और जैम, डब्लूएमएच (2011), महिलाओं को किसान उद्यमी बनने के लिए सशक्त बनाना। छोटे किसानों की कृषि के लिए नई दिशाएँ विषय पर आईएफएडी सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर में, खंड 24, पृष्ठ 25।
4. यूसुफ, एच. (2010), महिलाओं का सशक्तिकरण और पश्चिम सियाउ जिले, सीतारो जिले में परिवारों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार में इसके प्रभाव। जर्नल लासालियन, 7 (1), 90–94। पृष्ठ 41
5. मैममेन, के., और पैक्ससन, सी. (2000), महिलाओं का कार्य और आर्थिक विकास। जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पर्सपेक्टिव्स, 14 (4), 141–164
6. अब्दुल्ला, नाशु (1990), उलवानी तरबियातुल अल–औलाद फिल इस्लाम, दार अस–सलाम, जेद्दा।
7. एडम्स, ली० और अन्य (2002), स्वास्थ्य नीतियों और अभ्यास को बढ़ावा देना, ऋषि, नई दिल्ली।
8. अहमद, सरफराजुद्दीन (1991), संक्रमण में ग्रामीण मुसलमान, राष्ट्रमंडल, नई दिल्ली।
9. आहूजा, राम (2005), भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत, नई दिल्ली।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 164–168

नालंदा जिला ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों में कुपोषण का कारण एवं माताओं में पूरक आहार के आभाव का एक अध्ययन

डॉ. पूर्णिमा कुमारी
पी–एच0 डी0, गृह विज्ञान विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

सार :–

अध्ययन का मूल उद्दे य ''नालंदा जिला ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों में कुपोशण का कारण एवं माताओं में पूरक आहार के आभाव का एक अध्ययन है।'' अध्ययन कि परिकल्पना ग्रामीण क्षेत्रों कि अधिकां ा माताओं में बच्चों के प्रति पूरक आहार के आभाव से संबंधी जागरूकता बच्चों के पोषण स्तर पर सकारात्मक प्रभावों को देखना रहा। परिणामत् यह पाया गया कि पोषण संबंधी व्यवहार में 70.00% माताएं यह नहीं जानती थीं कि बच्चों के लिए संतुलित आहार में क्या–क्या शामिल होना चाहिए अधिकांश बच्चे चावल, आलू और दाल पर आधारित आहार ले रहे थे, जिनमें प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की भारी कमी थी। केवल 15.00% माताएं फल और हरी सब्जियों का नियमित उपयोग करती थीं।

मूल भाब्द :– पूरक आहार, स्वास्थ्य, कुपोशण, PHC, CHC, आंगनवाड़ी केंद्र, एवं माताएं।

भारत जैसे विकासशील देश में बाल स्वास्थ्य एक गहन चिंता का विषय है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच सीमित और जागरूकता कम होती है। बिहार राज्य का नालंदा जिला, जो ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है, आज बाल स्वास्थ्य की चुनौतियों से जूझ रहा है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जहाँ कुपोषण, अस्वच्छता, अशिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की कमी जैसे अनेक कारक बच्चों के स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में माताओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। एक माँ न केवल बच्चे की प्रथम शिक्षक होती है, बल्कि उसकी पोषण, टीकाकरण, स्वच्छता एवं समग्र स्वास्थ्य देखभाल की पहली जिम्मेदार भी होती है।[2] इस शोध लेख में नालंदा जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में माताओं की भूमिका को कुपोषण, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच, तथा सामाजिक–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से गहराई से विश्लेषण किया गया है।[3]

कुपोषण एक ऐसी स्थिति है जिसमें शरीर को उसकी आवश्यक पोषण संबंधी जरूरतें पूरी नहीं हो पातीं। यह समस्या विशेष रूप से विकासशील देशों में गंभीर रूप ले चुकी है। भारत जैसे देश में, जहाँ बड़ी जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करती है, वहाँ बच्चों में कुपोषण की समस्या अत्यंत चिंताजनक है।

बच्चों में कुपोषण का मुख्य कारण पर्याप्त और संतुलित आहार की कमी है। छोटे बच्चों को उनकी उम्र

के अनुसार सही मात्रा में प्रोटीन, विटामिन, खनिज (मिनरल्स), कार्बोहाइड्रेट और वसा की आवश्यकता होती है। यदि भोजन में इन पोषक तत्वों की कमी हो जाए, तो बच्चे का शारीरिक और मानसिक विकास रुक जाता है। इससे बच्चे कमजोर हो जाते हैं, उनका वजन कम रह जाता है और उनकी रोग–प्रतिरोधक क्षमता भी घट जाती है।

गरीबी कुपोषण का सबसे बड़ा कारण है। आर्थिक रूप से कमजोर परिवार पर्याप्त भोजन खरीदने में असमर्थ होते हैं। इसके अलावा, कई बार माता–पिता को यह ज्ञान नहीं होता कि बच्चों को किस प्रकार का पोषण युक्त आहार देना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में यह समस्या और अधिक गहरी है जहाँ स्वास्थ्य सेवाएं भी सीमित होती हैं।

स्वच्छता और साफ–सफाई की कमी भी कुपोषण का एक बड़ा कारण है। गंदा पानी पीने या अस्वच्छ भोजन से बच्चों को बार–बार डायरिया, बुखार जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं, जिससे शरीर के अंदर पोषक तत्वों का अवशोषण ठीक से नहीं हो पाता। इससे बच्चे धीरे–धीरे कुपोषित हो जाते हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है माँ का कुपोषित होना। यदि गर्भावस्था के दौरान माँ को पर्याप्त पोषण नहीं मिला, तो शिशु जन्म से ही कमजोर होता है। साथ ही, यदि माँ बच्चे को समय पर स्तनपान नहीं कराती या पूरक आहार देना देर से शुरू करती है, तो भी कुपोषण की संभावना बढ़ जाती है।

कुपोषण के दुष्परिणाम गंभीर होते हैं। इससे बच्चों की पढ़ाई में रुचि कम हो जाती है, वे जल्दी थक जाते हैं, और उनका मानसिक विकास भी धीमा हो जाता है। लंबे समय तक कुपोषण से बच्चों की हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं और उनका जीवनकाल भी प्रभावित हो सकता है। इस समस्या से निपटने के लिए सरकार द्वारा 'आंगनवाड़ी', 'मिड–डे मील योजना', 'पोषण अभियान' जैसे कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। लेकिन इनके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए जनजागरूकता, सही निगरानी और सामुदायिक सहयोग की आवश्यकता है।

नालंदा जिला का परिचय :–

नालंदा जिला बिहार राज्य के दक्षिणी भाग में स्थित है और इसकी पहचान नालंदा विश्वविद्यालय जैसी ऐतिहासिक धरोहर से है। इस जिले में कृषि मुख्य आजीविका का साधन है, और अधिकांश लोग ग्रामीण जीवनशैली में जीवन यापन करते हैं। जिले की कुल जनसंख्या का लगभग 85.00% ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है।[4]

सिन्हा, ए. (2020), ने स्वास्थ्य सेवा की दृष्टि से, जिले में कई प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (PHC), सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (CHC), और आंगनवाड़ी केंद्र हैं, लेकिन इनकी गुणवत्ता, मानव संसाधन, और सुविधाओं की स्थिति बेहद सीमित है। WHO और NFHS के अनुसार, जिले में कुपोषित बच्चों की संख्या राज्य और राष्ट्रीय औसत से अधिक है।[5]

साहित्यिक समीक्षा :–

बच्चों के स्वास्थ्य पर माताओं की भूमिका को लेकर विभिन्न शोध, रिपोर्ट्स और सरकारी दस्तावेजों से जानकारी प्राप्त की गई। प्रमुख साहित्यिक निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

NFHS–5 (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण, बिहार 2022) इस सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि बिहार में बच्चों में कुपोषण, निम्न टीकाकरण दर, और बाल मृत्यु दर की मुख्य वजह माताओं की शिक्षा व पोषण संबंधी

जानकारी की कमी है। नालंदा जिले में यह स्थिति और भी चुनौतीपूर्ण है।[6]

UNICEF & WHO रिपोर्ट (2021) बच्चों की पोषण स्थिति और माताओं की भूमिका पर आधारित इन रिपोर्ट्स में बताया गया है कि माताएं यदि संतुलित आहार और स्वच्छता की जानकारी रखती हैं, तो बच्चों का विकास बेहतर होता है। इनमें स्वास्थ्य सेवाओं तक माताओं की पहुँच और व्यवहारिक रुकावटों को भी रेखांकित किया गया है।[7]

ICDS कार्यक्रम मूल्यांकन (Planning Commission of India) यह रिपोर्ट बताती है कि आंगनवाड़ी केंद्र माताओं को पोषण, स्वास्थ्य एवं टीकाकरण संबंधी सेवाएं प्रदान कर बच्चों के स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं।[8]

सामुदायिक अध्ययन :–

ग्रामिण महिला एवं बच्चों के स्वास्थ (सेगा जरनल 2020) इस अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण महिलाओं की जागरूकता और निर्णय लेने की स्वतंत्रता सीधे तौर पर बच्चों के स्वास्थ्य से जुड़ी है।[9]

बिहार सरकार की स्वास्थ्य योजना रिपोर्ट (2022) इसमें बताया गया है कि नालंदा जिले के कई प्रखंडों में मातृ एवं बाल स्वास्थ्य सेवाएं कमजोर हैं, विशेषकर उन परिवारों में जहाँ माताएं अशिक्षित या सामाजिक रूप से वंचित हैं।[10]

अध्ययन का उद्देश्य :–

बाल स्वास्थ्य में सुधार हेतु सरकारी योजनाओं की सफलता माताओं की भागीदारी पर निर्भर करती है। यदि माताएं स्वास्थ्य, पोषण और स्वच्छता के प्रति जागरूक हों, तो बच्चों के समग्र स्वास्थ्य में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है। इस शोध का उद्देश्य है :–

(क) ग्रामीण माताओं में बच्चों के प्रति पूरक आहार शिक्षा में जागरूकता का विश्लेषण करना।

(ख) ग्रामीण माताओं में बच्चों के प्रति पूरक आहार के आभाव में कुपोशण को समझना।

(ग) कुपोषित बच्चों के माध्यम से माताओं की भूमिका का प्रत्यक्ष मूल्यांकन करना।

परिकल्पना :–

ग्रामीण क्षेत्रों कि अधिकां ा माताओं में बच्चों के प्रति पूरक आहार के आभाव से संबंधी जागरूकता बच्चों के पोषण स्तर पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

अध्ययन की पद्धति :–

इस अध्ययन में नालंदा जिले के पाँच पंचायत क्षेत्रों से 60 कुपोषित बच्चों को चुना गया। यह चयन बच्चों की आयु, लिंग, स्वास्थ्य स्थिति, एवं माताओं की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए किया गया। डेटा संकलन के लिए साक्षात्कार, प्रश्नावली, आंगनवाड़ी रिकॉर्ड, और पर्यवेक्षण विधि का उपयोग किया गया।

परिणाम और विश्लेषण :–

1. नालंदा जिले के ग्रामीण माताओं में बच्चों के प्रति पूरक आहार के आभाव शिक्षा और जानकारी लेकर प्राप्त करना है। इसमें 60 कुपोषित बच्चों की माताओं में से 42 माताएं प्राथमिक विद्यालय तक भी शिक्षित नहीं थीं। वहीं 12 माताएं कक्षा 5 से 10 तक पढ़ी थीं। केवल 6 माताएं ही उच्च माध्यमिक शिक्षित थीं। इस प्रकार शिक्षित माताओं के बच्चों में कुपोषण अपेक्षाकृत कम गंभीर पाया गया। इससे यह स्पष्ट हुआ कि शिक्षा का स्तर बाल

पोषण पर सीधा प्रभाव डालता है।

2. पोषण संबंधी व्यवहार में 70.00% माताएं यह नहीं जानती थीं कि बच्चों के लिए संतुलित आहार में क्या–क्या शामिल होना चाहिए अधिकांश बच्चे चावल, आलू और दाल पर आधारित आहार ले रहे थे, जिनमें प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की भारी कमी थी। केवल 15.00% माताएं फल और हरी सब्जियों का नियमित उपयोग करती थीं।

3. स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में पाया गया कि 38 बच्चों को समय पर सभी टीके नहीं लगे थे। जिसमें 60 में से 45 माताओं ने बताया कि वे केवल बीमार पड़ने पर ही अस्पताल जाती हैं। केवल 22 माताओं को आयरन और कैल्शियम की गोलियाँ कभी मिली थीं।

4. स्वच्छता और जीवनशैली पर मूल्यांकन किया गया प्राप्त परिणाम दर्शाता है कि 65.00% माताएं हाथ धोने के महत्व से अनभिज्ञ थीं। केवल 80.00% घरों में शौचालय था, शेष माताएं और बच्चे खुले में शौच के लिए जाते थे। यहीं कारण था कि बच्चों को बार–बार दस्त, बुखार, त्वचा संक्रमण की शिकायत रहती थी।

5. **स्तनपान एवं अनुपूरक आहार** – स्तनपान बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। शोध में पाया गया कि 60 में से 55 माताएं बच्चों को 6 माह तक स्तनपान कराती थीं, लेकिन उसके बाद अनुपूरक आहार की जानकारी नहीं होने से कई बच्चे कुपोषण की स्थिति में पहुँच जाते हैं।

6. **पारंपरिक मान्यताएं** – ग्रामीण क्षेत्रों में कई बार माताएं पारंपरिक धारणाओं और अंधविश्वासों के कारण आधुनिक चिकित्सा पद्धति को स्वीकार नहीं करतीं। जैसे, दाँत निकलते समय बुखार को सामान्य मानकर इलाज नहीं कराया जाता।

7. **निर्णय लेने की क्षमता** – परिवार में महिला की स्थिति कमजोर होने के कारण माताएं अक्सर स्वास्थ्य सेवाओं के निर्णय में स्वतंत्र नहीं होतीं। पिता या सास के निर्णय ही अंतिम होते हैं।

सरकारी योजनाओं और उनकी प्रभावशीलता :–

1. **जननी सुरक्षा योजना (JSY)** – मातृत्व सहायता योजना के तहत कई माताओं को संस्थागत प्रसव हेतु प्रोत्साहन मिला है, लेकिन इस योजना की जानकारी बहुत कम महिलाओं को थी।
2. **एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS)** – आंगनवाड़ी केंद्रों के माध्यम से बच्चों और माताओं को पोषण आहार, स्वास्थ्य जांच, टीकाकरण, और स्वास्थ्य शिक्षा मिलती है। लेकिन अध्ययन में पाया गया कि 60% माताएं आंगनवाड़ी केंद्र से जुड़ी सुविधाओं से अनभिज्ञ थीं या उन पर भरोसा नहीं करती थीं।

निष्कर्ष :–

नालंदा जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों का स्वास्थ्य माताओं की जागरूकता, शिक्षा और सामाजिक स्थिति पर अत्यधिक निर्भर है। इस शोध में 60 कुपोषित बच्चों के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि जब माताएं स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़ी होती हैं और पोषण संबंधी जानकारी रखती हैं, तो बच्चों के कुपोषण की संभावना कम हो जाती है। इसके विपरीत, अशिक्षा, जागरूकता की कमी, और सामाजिक सीमाएं बच्चों की सेहत को प्रभावित करती हैं। बच्चों में कुपोषण केवल एक स्वास्थ्य समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक विकास की भी चुनौती है। जब तक हर बच्चे को पर्याप्त पोषण, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं नहीं मिलेंगी, तब तक एक सशक्त राष्ट्र का सपना अधूरा रहेगा। अतः यह हम सभी की सामूहिक जिम्मेदारी है कि हम इस समस्या को जड़ से खत्म करें।

सुझाव :-

1. **मातृ शिक्षा अभियान** – माताओं के लिए विशेष रूप से डिजाइन किए गए स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा कार्यक्रम चलाए जाएं।
2. **आंगनवाड़ी को सशक्त बनाना** – आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित कर, माताओं तक योजनाओं की जानकारी पहुँचाई जाए।
3. **महिला सशक्तिकरण** – परिवार और समाज में महिलाओं को निर्णय लेने में सक्षम बनाने के लिए सामाजिक अभियान चलाएं।
4. **स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार** – स्वास्थ्य केंद्रों पर स्टाफ और दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए।
5. **समुदाय आधारित निगरानी तंत्र** – ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य समितियों के माध्यम से माताओं और बच्चों की निगरानी हो। अतः सरकारी योजनाओं और सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से यदि माताओं को सशक्त किया जाए, तो ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों के स्वास्थ्य स्तर में उल्लेखनीय सुधार संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस–5), बिहार, 2020–21।
2. यूनिसेफ इंडिया, विश्व के बच्चों की स्थिति– पोषण और मातृ भूमिका, 2021।
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन, मातृ स्वास्थ्य और बाल पोषण दिशानिर्देश, 2021।
4. भारतीय योजना आयोग, एकीकृत बाल विकास सेवाओं (आईसीडीएस) पर मूल्यांकन अध्ययन, 2015।
5. सिन्हा, ए. (2020), ग्रामीण बिहार में मातृ शिक्षा और बाल स्वास्थ्य परिणाम। जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ रिसर्च, खंड 6(1), पृष्ठ 33–45।
6. NFHS–5 व नीति आयोग, जिला स्वास्थ्य प्रोफाइल – नालंदा (बिहार), 2022।
7. UNICEF & WHO (रिपोर्ट–2021) चाइल्ड इन नीड इंस्टीट्यूट (सीआईएनआई), मातृ व्यवहार और बाल पोषण अध्ययन – बिहार, 2021।
8. मिश्रा, आर. (2018), ग्रामीण बाल देखभाल प्रथाओं में माताओं की भूमिका। इंडियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, वॉल्यूम। 79(3)।
9. बालवाड़ी मॉडल – बाल विकास परियोजना कार्यालय, हिलसा, बालवाड़ी, सेगा जरनल 2020।
10. स्वास्थ्य योजना रिपोर्ट (2022) बिहार सरकार, वार्षिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण रिपोर्ट–नालंदा जिला।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 169-174

भारत का आईना बिहार : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. विनय कुमार अम्बेडकर
सहायक प्रोफेसर (G.T), प्रा0 भा0 ई0 एवं पु0 संस्कृति विभाग, नालंदा महिला कॉलेज, बिहार भारीफ नालंदा।

भारत के धरती पर एक ऐसा राज्य जहाँ इतिहास की गुंज और रहस्यों की कहानियाँ हर घर में बसी हुई है। ''बिहार'' प्राचीन काल के मगध महाजनपद भारत के दिल कहे जाने बाले इस महाजनपद (राज्य) में इतिहास संस्कृतियाँ और रहस्यों का भरमार है। यहाँ कुछ ऐसी जगह है जो सदीयों से रहस्मय बनी हुई है। कुछ विज्ञान के पकड़ से बाहर तो कुछ मान्यताओं और चमत्यकारों से जुड़ी है। मैं बिहार के सबसे रहस्यम जगहों को व्याख्या करना चाहुँगा।

• नलंदा वि ववियालय के खण्ड हर में कई ऐसे रहस्य छुपे हैं जो अपने–आप में इतिहास रहस्य और गौरभ की गाथा समेटे हुए हैं। यह सिर्फ खण्डहर ही नहीं बल्की भारत के सुनहरे अतित और अद्भुत भाान परम्परा का प्रमाण हैं। इसके वि ोश में छुपा हैं एक ऐसा राज जो आज भी अन्य सुलझा है। पाँचमी भाताब्दी में स्थापित यह नालंदा वि ववियालय केवल एक ि ाक्षण संस्थान ही नहीं बल्कि तत्कालिन दुनियाँ का सबसे बड़ा भाान का केन्द्र था। यहाँ एक लाख से अधिक विद्यार्थी और दो हजार ि ाक्षक न केवल भारत बल्की चीन, जापान, तीब्बत और अन्य दे ाों से अध्ययन अध्यापन के लिए आते थे। ऐसा महान स्थल एक दिन राख में तब्दील हो गया। कहा जाता हैं कि 1193 से 1203 ई0 के बीच बख्तियार खिलजी ने भारत पर हमला किया और नालंदा वि0 वि0 को जला दिया। लोकथाओं के अनुसार नालंदा वि ववियालय के पुस्तकालय में इतने पुस्तके थी कि वह तीन महिने तक जलता रहा। इतिहासकार भी इससे सहमत है कि वहाँ कि व्यवस्थाओं में वि व के अनगिनत रहस्यों और ज्ञान का भण्डार था। तो सवाल उठता है कि क्या वह सारा ज्ञान नश्ट हो गया या किसी ने उसे बचा लिया।

आज खण्डहरों में घुमने से ऐसा प्रतित होता है कि जैसे यहाँ की दिवारे अपने अतित की कहानियाँ यह कहने की कोि ा ा कर रही है। रात की हवाओं में एक अजिब सी गुंज सुनाई देती है। स्थानिय लोग बताते है कि इस जगहे पर कई बार अजिब घटनाएँ हुई है। कोई मंत्रो की ध्वनी सुनता है तो कोई अदृ य भाक्ति का अभास करता है। आज यह स्थल युनेस्कों का वि व धरोहर है। यह सिर्फ इट–पत्थरों का डेर नहीं बल्की भारतीय सभ्यता, संस्कृति का उस उच्चाई का प्रतिक हैं जहाँ ज्ञान को सर्वोच्य माना गया है। यहाँ कि दिवारे, गलियारे और स्तभं आज भी उस वैभव ाली युग की गवाही है। जब भारत को वि व गुरू कहा जाता था। यहाँ दे ा–विदे ा के छात्र अध्ययन करते थे और परीक्षा से पूर्व कठोर तपस्या व साधना करनी होती थी। कुछ भाोध कर्ताओं का मानना है कि इस खण्हर में आज भी वि ोश चुम्बकिय भाक्ति है जो ध्यान और मानसिक भाक्ति में सहायक हैं।

भाायद इसी कारण प्राचीन काल में यह स्थल साधना का केन्द्र रहा। यहाँ ाांत मन से घुमने पर ऐसा प्रतित होता है कि समय थम गया हैं। कुछ यात्रियों को कहना है कि यहां ध्वनी और साधकों की छाया तक देखी गई है।[1] नालंदा वि वविद्यालय केवल एक ऐतिहासिक पन्ना नहीं बल्कि एक ऐसा रहस्य है जो आज भी यह सोचने पर मजबुर करता है कि क्या ज्ञान वास्तव में कभी नश्ट हो सकता है या वह सदा किसी न किसी रूप में जीवित रहता है।

• दूसरा प्रस्तुती बराबर की गुफाएँ बिहार के गया जिला में स्थित है। यह गुफाएँ भारत के सबसे प्राचीन ग्रेनाइट पत्थरों से बनाई गई मानी जाती है। यह इतिहास, धर्म, रहस्य और संस्कृति का ऐसा संगम है जो हर आगंतुक को चौका देता है। तीसरी भाताब्दी ई0 पूर्व सम्रात अ ाोक द्वारा निर्मित ये गुफाएँ आज भी अपने अद्भुत वास्तु ाल्प और पुरे रहस्यपूर्ण रहने के कारण चर्चा में है। इसकी दिवारे इतनी चीकनी है कि आज भी आइने की तरह चमकती है। तो सवाल है वह कौन सी तकनिक थी जो हजारों–हजार भााल पूर्व मौजुद थी। यह गुफाएँ बौद्ध धर्म और आजिवक सम्प्रदाय से जुड़ी है। चार प्रमुख गुफाएँ है; सुदामा, कर्ण–चौपड़, लोमसगिरी एवं वि वकर्मा। लोमसगिरी गुफा के दिवारों पर भाुक्ष्म नकासी देख कर किसी को भी मन मंत्रमुग्ध हो जाता है। परन्तु बराबर गुफाओं का अ ली रहस्य हैं यहां कि ध्वनी की गुंज। अगर आप इस गुफाओं में कुछ बोलते है तो वह अवाज इतनी गुंजती है कि यह गुंज सामान्य नहीं बल्कि किसी अदृ य भाक्ति का संकेत है। स्थानिय लोगों का कहना है कि रात्री के समय यहां की उर्जा असमान हो जाती है। वर्तमान में यह स्थल भारतीय पुरात्व सर्वेक्षण द्वारा संरक्षित है। परन्तु समय की मार दिवारों पर साफ दिखाई देती हैं। इन गुफाओं की भव्यता और उनकी दिव्य उर्जा आज भी हर पर्यटक को अपनी ओर खिचती है। जिससे ऐसा लगता है कि यहां कि हर समय हर गुंज यह कहता है कि यह समय नहीं साधना का भाास्वत द्वार है।[2]

• के ारिया स्तुप बिहार के धरती पर कदम रखते ही इतिहास और संस्कृति की महक महसुस होती है। यह एक ऐसा स्थान हैं जहाँ भाांति, भाकुन और आत्म वि वास मिलता है। यह स्तुप बौद्ध धर्म के महान उद्भव कर्ता गौतम बुद्ध से जुड़ा है। कहते है अपने अंतिम समय में कु ानगर जाते हुए उन्होंने ने यहाँ विश्राम किये थे और उपद्दे य भी दिए थे। उन्हीं के स्मृति में इस स्तुप का निर्माण सम्राट अ ाोक ने तीसरी भाताब्दी में बनवाये थे। समय के साथ यह मिट्टी में दब गया। 19वीं भाताब्दी में पुरावत्व वेताओं द्वारा खुदाई के बाद यह वापस सामने आया और सब देखकर दंग रह गये। 104 फिट उच्चा यह दुनियाँ के सबसे बड़े बौद्ध स्तुपो में से एक है। कहा जाता है कि यह रहस्यमयी उर्जा से भरपुर है। जब आप पास खड़े होते हैं तो लगता है कि यह अतित की कहानीयाँ फुस–फुसा रहा हो। स्थानिय लोगों का मानना है कि इस स्थान की मिट्टी में दैविय भाक्तियाँ है। कई बार अजिब प्रका ा, ध्वनियाँ और रहस्यामयी घटनाएँ भी सामने आई है। जबकी आज यह स्तुप खण्डकर की स्थिति में है।

परन्तु इसका गौरव आज भी अमिट है। भारतीय पुरातत्व विभाग ने इसे संरक्षित करने का प्रयास किया है। कहा जाता है कि यहाँ जो ध्यान करता है उसे अपने आत्मा के रहस्यों का बोध होता है। इस भूमि में आज भी समय के अदृ य पर्दे बसी हुई है जो हर पत्थर पर इतिहास की कहानी मिलती है।[3] कुछ विद्वान कहते है कि इसकी रचना में अध्यात्मिक और वैज्ञानिक दृश्टिकोण से अद्भुत संगम है जो मानवता को दि ाा देने के लिए रचा गया था।

• उदंतपुरी वि वविद्यालय, जिसे ओदंतपुरी भी कहा जाता है। यह भारत के (बिहार भारीफ) मगध महाजनपद में एक प्राचीन बौद्ध वि वविद्यालय था। इसकी स्थापना 8वीं भाताब्दी में पाल भासक गोपाल ने की थी। यह नालंदा वि वविद्यालय के बाद भारत के दुसरा सबसे पुराने वि वविद्यालय में से एक था। ि ालालेखिय साक्ष्य यह भी संकेता देता है कि इसे स्थानिय बौद्ध राजाओं का समर्थन प्राप्त था। बिहार भारीफ के पुराने खण्डहर दरबाजे की तस्वीर जो 1870 के द ाक में जोसेफ डेबिड वेगलर द्वारा ली गई थी कहा जाता हैं कि यह किला उदंतपुरी वि वविद्यालय का हिस्सा था। इस वि वविद्यालय को नालंदा वि वविद्यालय के साथ मुस्लिम आक्रमणकारी बख्तियार खिलजी नश्ट कर दिया था। आज तक खुदाई काम नहीं किया गया है और यह स्थल धरती के निचे दवा हुआ है। इसे पुरातत्व–वेताओं द्वारा अनुमानतः यह बिहार ारीफ के वर्तमान गढ़ पर की आस–पास के क्षेत्रों में यह प्राचीन वि वविद्यालय स्थापित था।[4]

• विक्रम ि ाला वि वविद्यालय (बिहार) महाजनपद की धरती आधुनिक भागलपुर अंग जिले में स्थित है। 8वीं से 12वीं भाताब्दी के बीच यह बौद्ध संस्कृति का एक ि ाक्षा का केन्द्र था। जिसकी स्थापना पाल बं ा के राजा धर्म पाल ने की थी। यह नालंदा वि वविद्यालय के समकक्ष माना जाता था। यहाँ न केवल धर्म भास्त्रों की ि ाक्षा दी जाती थी। बल्कि खगोल चिकित्स्यसा तर्क ास्त्र और कला आदी विभिन्न विशयों की पढ़ाई होती थी। यहाँ से तिब्बत एवं दक्षिण–पूर्व ए ि ाया के विभिन्न दे ों में प्रसार हुआ। कहा जाता है कि बख्तियार खिलजी नालंदा वि वविद्यालय के साथ इस वि वविद्यालय को भी जला दिया। पुस्तकालय में मौजुद अद्भूत पाण्डुलिपियाँ जल कर राख हो गई। जहाँ ज्ञान का भण्डार इतिहास के पन्नों में खो गया। आज जो खण्डर बची है इसकी भव्यता की कहानी कहते हैं कि यहाँ के दिवारो पर बनी हुई नकासी और ि ाल्प कला आज भी देखने लायक है। स्थानिय लोग कहते है कि रात के समय यहाँ अजीव सी अवाजे सुनाई देती है। कुछ विद्वानों को मानना है कि यहाँ आज भी प्राचीन ज्ञान और मंत्रों की उर्जा छीपि है। यह सिर्फ खण्डहर नहीं बल्कि (गौर्व पूर्ण) गौर्व ाली अतीत की स्मृति है। यहाँ न जाने कितने विद्यार्थियों की जीवन में रो ानी भर दी थी। यह वि वविद्यालय यह सिखाता हैं कि ज्ञान का उजाला कभी पूर्णतः बुझता नहीं वह समय के परतों में छुप कर भी चमकते रहता है।[5]

• ककोलत जल प्रपात बिहार के गोद में बसा एक ऐसा स्थल जहाँ प्रकृति अद्वितिय रूप में प्रकट होती हैं। इस सुन्दता के पिदे छुपा है एक रहस्य जहाँ हर पर्यटक को सोचने पर मजबुर कर देता है। यहाँ कि जलधारा लगभग 150 फीट वर्ग उच्चाई से गिरती हैं। जो दृश्य को अलौकित बना देती है। चारो ओर हरियाली से भरा ये स्थान गर्मियों में ठंडक और भाकुन देता है। लेकिन इसका पहचान केवल प्राकृतिक ही नहीं बल्की अध्यात्मिक भी है। लोककथाओं के अनुसार श्रेता युग में एक राजा को श्राप मिला था। उसे अजगर बनकर इसी झरने पर बास करना पड़ता था। जिसे पाण्डवों ने बनवास के समय इसे मुक्ति दी। उस राजा ने कहा कि जो कोई इस जल प्रपात में स्थान करेगा। उसे साप योनी जन्म नहीं लेना पड़ेगा।

• महाबोधि मन्दिर ''मगध महाजनपद'' बोधगया (प्राचीन उरूवेला) वर्तमान बिहार राज्य के भूमि पर अवस्थित यह एक ऐसा स्थल है जहाँ धर्म रहस्य, और इतिहास तीनों एक साथ जीवित है। यहीं वह पवित्र स्थल है जहाँ भगवान महात्मा बुद्ध ने कठोर तपस्या के बाद बोद्धि वृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ती की थी। इस मंदिर का निर्माण सम्राट अ ोक ने तीसरी भाताब्दी ई0 पूर्व ने करवाया था। परन्तु वर्तमान स्वरूप पाँचमी या छठी भाताब्दी का है।

मंदिर की उचाई 55 मिटर है। इसके सिखर संरचनाओं से अलग दिखाई देता है। मंदिर परिसर में स्थित बोद्धि वृक्ष को वृक्ष कहा जाता है और यह उसी वृक्ष की बं ाावली माना जाता है। जिसके निचे बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ती हुई थी। परन्तु इस वृक्ष से जुड़ी कई रहस्यमयी कहानियाँ है। कहा जाता है कि इस वृक्ष को ज्ञान का भी कई बार नश्ट करने की कोि ा ा किया गया। परन्तु यह हर बार पुनः जीवित होता गया। कुछ मान्यताओं के अनुसार इस वृक्ष के चिने बैठकर ध्यान करने वाला कोई भी साधक अद्भूत भाांतियाँ प्राप्त कर सकता है। आज यह स्थान युनेस्को द्वारा वि व धरोहर से विभुशित है। लेकिन यहाँ का वातावरण आज भी उतना ही रहस्यमय और द्विव्य है। जब आप मंदिर के परिसर में भाांत खड़े होते है तो ऐसा लगता है कि जैसे समय थम गया है।[6] यह मंदिर केवल बौद्ध धर्म का केन्द्र नहीं बल्कि सम्पूर्ण मानव के लिए भाांति, करूणा और आत्म द्विप का प्रतिक है।

• वै ाली का अ ोक स्तभं जो भारत का विरासत, धर्म और गौरव का प्रतिक है। इस स्तंभ को सम्राट अ ोक ने भगवान बुद्ध की स्मृति में तीसरी भाताब्दी ई0 पू0 में बनवाया था। जहाँ भगवान बुद्ध अंतिम उपदे य दिये थे। बौद्ध अनुआयियों के लिए यह स्थान तीर्थ से कम नहीं है। यह स्तभं केवल पत्थर का टुकड़ा नहीं बल्की सत्य और धर्मों का उन मुल्यों का प्रतिक है जिन्हें सम्राट अ ोक ने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। इस स्तंभ का वस्तुकला अद्भुत है। यह लाल बलुआ पत्थर से निर्मित है। इसकी उच्चाई 18.3 मिटर है। इसके सिर पर एक (सिंह) भोर की आकृति है, जो भारत का भाक्ति और अखण्डता का प्रतिक हैं। जिसके पास ही है आनन्द स्तुप जिसमें भगवान बुद्ध का पार्थिव अव ोश रखे गये थे। स्थानिय मान्यता है कि इस स्तंभ में एक सुरंग है और गुप्त कक्ष है जो बुद्ध के समय के स्मृतियाँ संयोगी हुए है। हलांकि अभी तक इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिला है। यह स्थान आज भी संरक्षित है। परन्तु इसके चारो ओर कई रहस्य और विवाद समय–समय पर उठते रहते है। यह स्तंभ मौर्य काल का है जो भारत के उस अध्याय को जीवित रखे हुए है जहाँ धर्म और सत्य को राज्य से उपर रखा गया था।[7]

• सोन–भण्डार गुफाएँ (बिहार) प्राचीन मगध महाजनपद के ऐतिहासिक नगरी राजगृह जहाँ हर पत्थर के पिछे एक कहानी छिपि है। इस धरती में सबसे बड़ा रहस्यमय भण्डार छीपा है यहाँ की सोन–भण्डार गुफा में गुफाएँ न केवल अपना स्थान कला के लिए अद्भुत है। बल्की खजाने की कहानियाँ के लिए भी जानी जाती है। तीसरी चौथी भाताब्दी ई0 पू0 में मौर्य काल में निर्मित ये दो गुफाएँ एक को सोन भण्डार यानी सोने का खजाना और दुसरी को सुरक्षा गुफा कहा जाता था। कहा जाता है कि राजा विम्बसार अपने खजाने को इन गुफाओं में छुपाया था। गुफाओं के दिवारों पर उत्क्रीण ि ालालेख भाब्द ऐसा है कि उसका अर्थ आज तक कोई नहीं समझ सका। कुछ इतिहासकार मानते हैं कि इन्हीं ि ाला लेखों में खजाने का रहस्य छुपा है। गुफाओं का दरवाजा एक साधारणतः पत्थर लगता हैं पर कहा जाता है कि इसके पिछे अनगिनत सोना और रत्न छिपे हुए है। अंग्रेजों ने इसे तोप से उड़ाने का पुरा कोि ा ा किया परन्तु टस से मस नहीं हुआ। आज भी ये गुफाएँ भाांत है। लेकिन रात के समय एक अजिब उर्जा महसुस होती है। कुछ लोगों का दावा है कि उन्होंने यहाँ उद्भुत अवाजे सुनी है। भारतीय पुरातत्व विभाग ने इन्हें संरक्षित कर लिया है।[8]

• सासाराम का रोहतास किला जो अपनी रहस्यों, बिरता और वस्तुकला के नाम से जाना जाता है। यह किला 1500 फिट के उच्चाई पर बिन्दय पर्वत श्रृखंला के चट्टानों पर बना हुआ है। सातवीं भाताब्दी में इसका

निर्माण गुप्त वं ा के भाासन काल में हुआ था। आगे चलकर भोर ााह भाुरी के अधिन रहा। यह किला भाक्ति और साम्राज्य के प्रतिक ही नहीं बल्कि अनसुलझी रहस्यों का भी घर है। कहा जाता है कि भोर ााह भाुरी ने यहाँ अपार खजाना छुपाया था। जो वर्तमान समय तक किसी को नहीं मिला। यहाँ के तहखाने और गुप्त मार्ग आज भी लोगों को रोमांचित कर देते है। स्थानिय लोग कहते है कि रात के समय किले में छायाएँ दिखती है और कदम–कदम की अवाजे सुनाई पड़ती है। लोगों का मानना है कि यह उन योद्धाओं की आत्माएँ है जिन्होंने किले की रक्षा में अपने प्राण त्याग दिए। वि ााल दरवाजे मोटी दिवारे उच्चे मुर्ज सब एक अद्‌भुत रहस्य समेटे खड़े है। हालांकि अब यह पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित कर लिया गया है। यह किला स्थापत्य कला का जिन्दा कहानी है जो समय–समय पर अपने रहस्यों से पर्दा उठाने की को ि ा ा करता है।[9]

- भोर ााह भाुरी का मकबरा, भोर ााह भाुरी ने भारत की व्यवसाय में क्रांति ला दी। यह मकबरा बिहार के सासाराम में अवस्थित है। इसे तैरता हुआ मकबरा भी कहा जाता है। क्योंकि यह जल से घिरे हुए कृत्तिम तालाबों के बीचो–बिच बना है। 1542 में निर्माण भाुरू हुआ और भोर ााह भाुरी के मृत्यु के ठिक पहले 1545 ई0 में पुरा हुआ। मकबरे की उच्चाई लगभग 120 फिट हैं जो एक वि ााल गुम्बद से डका है। इसका निर्माण लाल बलुआ पत्थरो से हुआ है। इसके चारो–ओर के प्रतिबिम्ब इसे आलौकिक बना देते है। इसके तहखाने आज भी रहस्यमय बने हुए है। कहाँ जाता है कि यहाँ भोर ााह भाुरी के खजाने छुपा है। कुछ लोगों का कहना है कि जब भी इसे खोलने का को ि ा ा किया गया तो कोई–न–कोई अजिव घटना घट जाती है। आज यह मकबरा भारतीय पुरातत्व विभाग के संरक्षण है। परन्तु जल स्तर के कमी और देख–भाल के अभाव में इसका सौन्दर्य छीन हो रहा है। फिर भी यह मकबरा हर भााल हजारो इतिहास प्रेमियों को आकर्शित करता है। क्योंकि यह उस भाासक का (मकबरा) विश्राम स्थल है जिन्होंने ग्रंटन रोड जैसी विरासत को छोड़ी थी। इससे पूर्व किसी भारतीय भाासक ने इस पर ध्यान नहीं दिया था।[10]

प्राचीन काल में मगध महाजनपद (वर्तमान बिहार राज्य) भारत का एक प्रभाव ााली एवं महत्वपूर्ण महाजनपद रहा है। जिसका सांस्कृतिक, धार्मिक और भाशा के माध्यम से दक्षिण–पूर्व ए ि ाया के विभिन्न दे ाों में विकसित हुआ और महत्वपूर्ण प्रभार रहा। वि ोश रूप से बौद्ध धर्म जिसका उद्‌भव मगध महाजनपद की धरती बोधगया से हुआ है। यहाँ सुजाता स्तुप बोधगया एवं सुजाता नगर बोधगया में स्थित है। प्राचीन मगध महाजनपद (बिहार) की प्रमुख उपलब्धियाँ थी कि राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक स्मृद्धि, कला और संस्कृति का विकास मगध भारत में एक भाक्ति ााली साम्राज्य के रूप में दिया। मगध ने एक मजबुत और स्थिर राजनीतिक प्रणाली स्थापित की। गंगा नदी के किनारे स्थित रहने के कारण व्यापार और कृशि के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान था। यहाँ लोहे ताम्बे के भण्डार रहने के कारण विभिन्न तकनीकियों का विकास एवं जैन एवं बौद्ध धर्म उद्‌भव ने दुनियाँ को प्रभावित किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सातो रयोजुन, बोधगया में महाबोधी मंदिर, मातीलाल बनारसी दास, दिल्ली 2014, पृ0–सं0 83
2. वहीं।

3. पाटिल डी0 आर0, बिहार में पुरातन अव ोश, भारत के0पी0 जय ाबाल अनुसधांन संस्थान, 1963, पृ0–184
4. वहीं ..... पृ0–203
5. लियो की जेनिस, सं0 बोधगया ज्ञानोदय स्थल, बॉम्बे मार्ग 1988, पृ0–93
6. वहीं ..... पृ0–154
7. आई0 सी0 बी0 एन, भारत में ि ाक्षा का इतिहास, अंटलांटिक पब्लि ार्स 1971, पृ0–106
8. ए0 एस0 अल्तेकर, प्राचीन भारत में ि ाक्षा 15BN 2008 पृ0–98
9. वहीं ..... पृ0–137
10. वही ..... पृ0–204

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 175–192

Exploring the Information-Seeking Behaviour of Health Science Students : A Case Study of Jabalpur Institute of Health Sciences

Swapnil Sharma, Research Scholar
Dr. Mohmmad Nasir, Supervisor
Department of Library and Information Science, Kalinga University, Naya Raipur [C.G.], India

Abstract :

In the digital age, equitable access to academic information is critical for academic success, especially among healthcare students who require timely and evidence-based resources. The research adopts a mixed-methods approach, combining survey responses from 300 undergraduate and postgraduate healthcare students with focused interviews of faculty and librarians. Notably, only 36% of students reported consistent use of their institution's digital library, citing usability issues and outdated content. While 65% of students demonstrated moderate to high digital literacy, many expressed difficulty in verifying the credibility of online academic content. Peer-sharing and social media platforms emerged as influential informal sources of learning, with 74% of students admitting they consult peers or social platforms before approaching official academic portals. Institutional support, such as digital literacy training and mentoring by faculty, was found lacking in most cases. Key barriers identified include infrastructural limitations (slow internet, limited access to computers), language difficulties in understanding academic content, and a lack of awareness regarding credible sources. Interestingly, female students showed a slightly higher engagement with structured online databases compared to their male counterparts. The study highlights the urgent need for academic institutions to enhance digital infrastructure, curate

multilingual and relevant content, and integrate structured mentoring programs. The findings underscore the pivotal role of educational institutions, faculty, and policy makers in fostering an inclusive and supportive digital learning environment.

Keywords : Academic information-seeking behavior, healthcare students, digital literacy, educational equity

1. Introduction :

In the digital age, access to accurate and timely information is crucial, particularly in the health sciences where knowledge rapidly evolves and has direct implications on patient care and public health. Health science students, as future healthcare professionals, must develop effective information-seeking skills to locate, evaluate, and apply evidence-based resources in both academic and clinical settings (Pravitha et al., 2020). Understanding their information-seeking behaviour is essential for designing user-centered library services, curriculum-integrated information literacy programs, and institutional repositories. Information-seeking behaviour refers to the strategies and processes individuals use to search for and utilize information to fulfill a specific goal or need (Wilson, 1999). In the context of health science education, students rely on a wide range of sources including textbooks, online databases, peer-reviewed journals, and digital repositories. However, studies reveal that despite increased access to online resources, students often face challenges in filtering reliable information due to lack of training in advanced search techniques, critical appraisal skills, and digital literacy (Togia & Tsigilis, 2019). Indian health science institutions, particularly those in tier-II cities like Jabalpur, face unique infrastructural and pedagogical constraints. Limited exposure to advanced information retrieval systems and underutilization of library facilities often hinder the development of robust information-seeking habits among students (Somasundaram & Chitra, 2022). Moreover, socio-cultural factors, internet accessibility, and language barriers further influence their approach to information discovery.

Objectives of the Study :

1. To identify the specific information needs of students at the Jabalpur Institute of Health Sciences.
2. To examine the information-seeking behavior of health sciences students in accessing academic and clinical resources.

3. To assess the preferred sources of information used by students, including digital and traditional resources.

4. To analyze the challenges and barriers students face in accessing relevant academic information.

5. To evaluate the role of institutional libraries and digital platforms in fulfilling students' information needs.

6. To investigate the impact of information-seeking behavior on students' academic performance and learning outcomes.

2. Methodology :

2.1 Population :

The population for this study consists of all students enrolled at the Jabalpur Institute of Health Sciences in Jabalpur District. This includes students from various health science disciplines such as Nursing, GNM, P.P.B.Sc., Medical Laboratory Technology, and other allied health programs. The study encompasses students from all academic years—first-year, second-year, third-year, and final-year students, along with postgraduate students pursuing advanced studies in health sciences.

2.2 Tools :

The research employs a diverse set of tools to facilitate data collection, analysis, and interpretation, ensuring a comprehensive examination of the research problem. These tools are selected based on their relevance to the study's objectives and the nature of the data being collected.

For the qualitative aspect of the research, structured and semi-structured interviews serve as primary tools to gather in-depth insights from participants. These interviews allow for open-ended discussions, enabling respondents to express their perspectives on information-seeking behavior, access to library resources, and the challenges they face. Additionally, focus group discussions provide an interactive platform where participants can share experiences and collectively discuss issues related to information access.

2.3 Analysis and Presentation of Data :

The process of data collection in this research follows a systematic and structured approach to ensure the accuracy, reliability, and validity of the data obtained. The methodology integrates both primary and secondary data sources, employing qualitative and quantitative techniques to gain comprehensive insights into the research problem.

The initial phase involves defining the target population and sample selection. The study population is carefully identified based on predefined criteria relevant to the research objectives. A suitable sampling technique, such as stratified random sampling, purposive sampling, or convenience sampling, is applied to ensure that the selected participants accurately represent the larger population. The sample size is determined based on statistical considerations to ensure sufficient data for meaningful analysis.

2.4 Validity and Reliability :

Ensuring the validity and reliability of research findings is a fundamental aspect of any study, as it determines the accuracy, consistency, and credibility of the results. This research follows rigorous methodological standards to establish both validity and reliability, ensuring that the data collected and the interpretations derived from it are scientifically sound and applicable to the broader population.

3. Results and Analysis :

4.0 Introduction :

This chapter serves as a pivotal component of the research as it provides a detailed examination of the data collected from the respondents, aligned with the study titled *"Information Needs and Seeking Behaviour of Students in Jabalpur Institute of Health Sciences in Jabalpur District: A Study."* The objective of this chapter is to offer a systematic and comprehensive presentation of the results that have emerged from the primary data gathered through structured questionnaires and validated research instruments.

The interpretation of results is aligned with the stated objectives of the research. It brings into focus critical insights regarding what kinds of information are most sought by students—whether academic, clinical, career-related, or personal development oriented. Furthermore, the chapter explores the preferred sources of information, including digital resources, academic libraries, faculty guidance, and peer collaboration. It also evaluates how variables such as age, gender, course of study, and academic year influence information-

seeking behavior. Special emphasis is placed on identifying the challenges and barriers students face, including technological constraints, lack of access to quality resources, and gaps in information literacy skills.

4.1 Data Preparation and Processing :

This section outlines the systematic procedures undertaken to prepare, organize, and process the raw data collected for the study titled *"Information Needs and Seeking Behaviour of Students in Jabalpur Institute of Health Sciences in Jabalpur District: A Study."* The purpose of this process is to ensure the integrity, reliability, and accuracy of the data prior to statistical analysis. The entire workflow included steps such as data cleaning, coding, categorization, entry into statistical software (SPSS v21), reliability checking, and data validation.

Data Collection Overview :

The study was conducted on a sample of **200 students** enrolled across various programs including B.Sc. Nursing, P.P.B.Sc (P.P.B.SC), and Diploma in Medical Lab Technology (GNM) at the Jabalpur Institute of Health Sciences. The structured questionnaire consisted of **five sections** covering demographic details, information needs, sources of information, frequency and mode of access, and challenges faced in seeking information. The questionnaire used both **closed-ended** and **Likert-scale-based** items.

Variable	Description	Coding
Gender	Biological sex of the respondent	Male = 1, Female = 2
Course of Study	Program enrolled in	B.Sc. Nursing = 1, P.P.B.SC = 2, GNM = 3
Year of Study	Current year of the program	First = 1, Second = 2, Third = 3, Fourth = 4
Frequency of Library Use	Visits to library per week	Never = 0, Rarely = 1, Sometimes = 2, Often = 3, Always = 4
Preferred Source of Information	Main source used to seek academic information	Library = 1, Internet = 2, Faculty = 3, Peers = 4
Satisfaction with Digital Resources	Likert-scale-based rating	Very Dissatisfied = 1 to Very Satisfied = 5

This structured coding approach was applied to all 35 items in the questionnaire, enabling seamless transition to statistical processing.

Data Entry :

The coded data were entered into **SPSS Version 21.0** using a spreadsheet format. Each row represented a respondent (N = 182), and each column represented a variable. Double data entry was employed for the first 30 cases to ensure accuracy, and the error rate was found to be below 1.5%, which is within acceptable limits. The entire dataset was reviewed again for range checks and logical consistency before proceeding to analysis.

Reliability Check :

To assess the internal consistency of the Likert-scale-based items, **Cronbach's Alpha** was calculated. The key sections evaluated for reliability included:

- **Information Needs (6 items)**
- **Sources and Frequency of Information Use (7 items)**
- **Satisfaction and Barriers (6 items)**

The Cronbach's Alpha values are presented in the table below:

Section	Number of Items	Cronbach's Alpha	Reliability Interpretation
Information Needs	6	0.83	High
Sources and Frequency of Use	7	0.79	Acceptable
Satisfaction and Barriers	6	0.81	High

All the sections had alpha values greater than 0.75, indicating a **reliable and internally consistent** instrument.

4.2 Demographic and Descriptive Analysis :

A total of **182 valid responses** were analyzed using SPSS (Version 21.0). The demographic data was summarized using frequency distributions, percentages, and measures of central tendency. Visual tools such as bar charts and pie charts were used to enhance interpretability.

Table 4.2.1: Gender Distribution of Respondents

Gender	Frequency	Percentage (%)
Male	74	40.66
Female	108	59.34
Total	**182**	**100.00**

Interpretation : The sample consisted of a greater proportion of female students (59.34%) than male students (40.66%), reflecting the enrollment trends often seen in health science programs, especially in disciplines like nursing and medical technology.

Table 4.2.2: Age Group Distribution

Age Group (in years)	Frequency	Percentage (%)
17–19	52	28.57
20–22	88	48.35
23–25	34	18.68
Above 25	8	4.40
Total	**182**	**100.00**

Interpretation : Nearly half of the respondents (48.35%) were in the 20–22 age group, which aligns with the typical age range of undergraduate health sciences students.

Table 4.2.3: Course-Wise Distribution

Course	Frequency	Percentage (%)
B.Sc. Nursing	78	42.86
P.P.B.Sc.	64	35.16
GNM	40	21.98
Total	**182**	**100.00**

Interpretation : The majority of respondents were pursuing B.Sc. Nursing (42.86%), followed by P.P.B.Sc. students (35.16%), with GNM students making up the remaining 21.98%.

Table 4.2.4: Year of Study

Year of Study	Frequency	Percentage (%)
First Year	54	29.67
Second Year	49	26.92
Third Year	45	24.73
Fourth Year	34	18.68
Total	**182**	**100.00**

Interpretation: The distribution across years of study was fairly even, with slightly more representation from first-year students (29.67%).

Table 4.2.5: Access to Internet Facilities

Access to Internet	Frequency	Percentage (%)
Yes	169	92.86
No	13	7.14
Total	**182**	**100.00**

Interpretation: A significant majority (92.86%) of the students reported having access to the internet, suggesting a strong inclination toward digital modes of information retrieval and a key enabler for online academic resource usage.

4.3 Descriptive Statistics of Key Variables :

In addition to categorical demographic data, some key continuous variables were analyzed using descriptive statistics such as mean, standard deviation, and range.

Variable	Mean	Standard Deviation	Minimum	Maximum
Hours spent per week on information search	5.7	2.4	1	12
Number of information sources used	3.1	1.2	1	6
Satisfaction with digital resources (Likert scale: 1–5)	3.8	0.9	1	5

Interpretation: On average, students spent nearly 6 hours per week seeking academic information, utilized about three different sources regularly, and reported moderate to high satisfaction with digital resources.

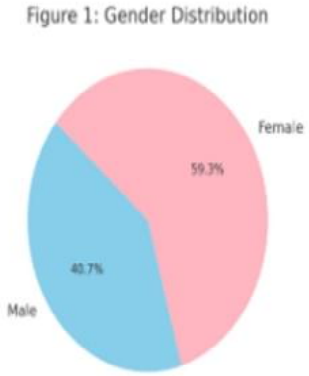

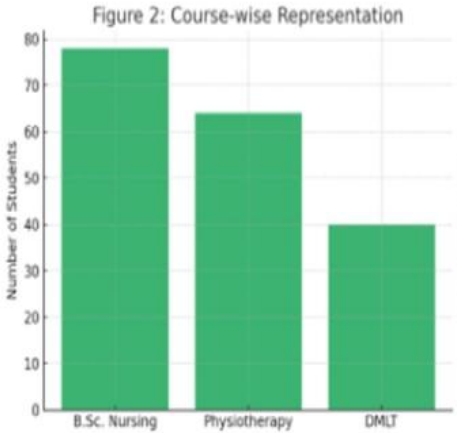

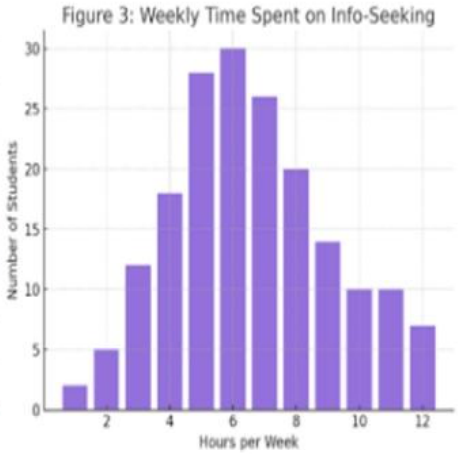

Figure 4.1: gender distribution

Figure 4.2: Course-wise representation

Figure 4.3: Weekly time spent on information-seeking

4.4 Analysis of Information Needs :

This section focuses on identifying and analyzing the various categories of information needs among students at the Jabalpur Institute of Health Sciences. The aim is to understand the type, frequency, and purpose behind information-seeking behaviors within an academic and professional context. The analysis is based on data collected through a structured questionnaire and processed using SPSS statistical software.

Table 4.3.1: Frequency Distribution of Information Needs (N=120)

Information Category	Mean Score	SD	Most Frequent Response	Percentage (%) – "Often" or "Always"
Academic	4.45	0.78	Often	92.5%
Clinical/Practical	4.20	0.85	Often	88.3%
Research-Related	3.85	0.90	Sometimes	65.8%
Career Opportunities	4.10	0.82	Often	81.7%
Health and Wellness	3.60	1.01	Sometimes	58.3%
Technological Updates	3.75	0.97	Sometimes	61.7%

Interpretation :

The analysis reveals that academic and clinical/practical information needs rank the highest among students across all courses. This reflects the institution's strong focus on professional and technical education. Career-related information is also frequently sought, indicating growing concern among students about post-graduation opportunities. Interestingly, research-related needs were reported higher among postgraduate students (especially M.Sc. Nursing), while technological updates were more commonly sought by students enrolled in P.P.B.Sc. and GNM courses. Health and wellness information was moderately sought, possibly due to the students' prior familiarity with such topics through their coursework.

Cross-Tabulation: Course vs. Type of Information Sought

Course	Academic	Clinical	Research	Career	Wellness	Tech Updates
B.Sc Nursing	High	High	Moderate	High	Moderate	Moderate
P.P.B.SC	High	Very High	High	High	Moderate	High
M.Sc Nursing	Very High	High	Very High	High	Low	High
GNM	High	Moderate	Moderate	High	High	Moderate

The **cross-tabulation of Course vs. Type of Information Sought** offers a strategic perspective on how students from different academic disciplines within the Jabalpur Institute of Health Sciences prioritize and engage with diverse information categories. The data reflects varied information-seeking behaviors that are shaped by the nature of each course, the depth of academic engagement, practical training needs, and future career aspirations.

4.5 Sources and Channels of Information Seeking :

Understanding the sources and channels through which students at the Jabalpur Institute of Health Sciences seek information is crucial for designing effective support systems in academic and clinical settings.

Table 4.4.1: Frequency of Source Utilization (N = 120)

Source of Information	Mean Score	Standard Deviation	Most Frequent Use	Percentage (%) – "Often" or "Always"
Institutional Library	3.95	0.80	Often	82.5%
Faculty/Mentors	4.20	0.76	Often	87.5%
Online Academic Journals	4.10	0.85	Often	85.0%
Mobile Apps	3.75	0.95	Sometimes	68.3%
Google Scholar/Web Search	4.30	0.70	Always	90.0%
Peers/Senior Students	3.60	0.98	Sometimes	61.7%
Social Media Platforms	2.90	1.10	Rarely	37.5%

The data presented in **Table 4.4.1: Frequency of Source Utilization** provides valuable insights into the preference patterns, reliability perception, and habitual use of various information sources by students enrolled in health science programs. The analysis is based on a 5-point Likert scale ranging from "Never" to "Always" and includes 120 respondents.

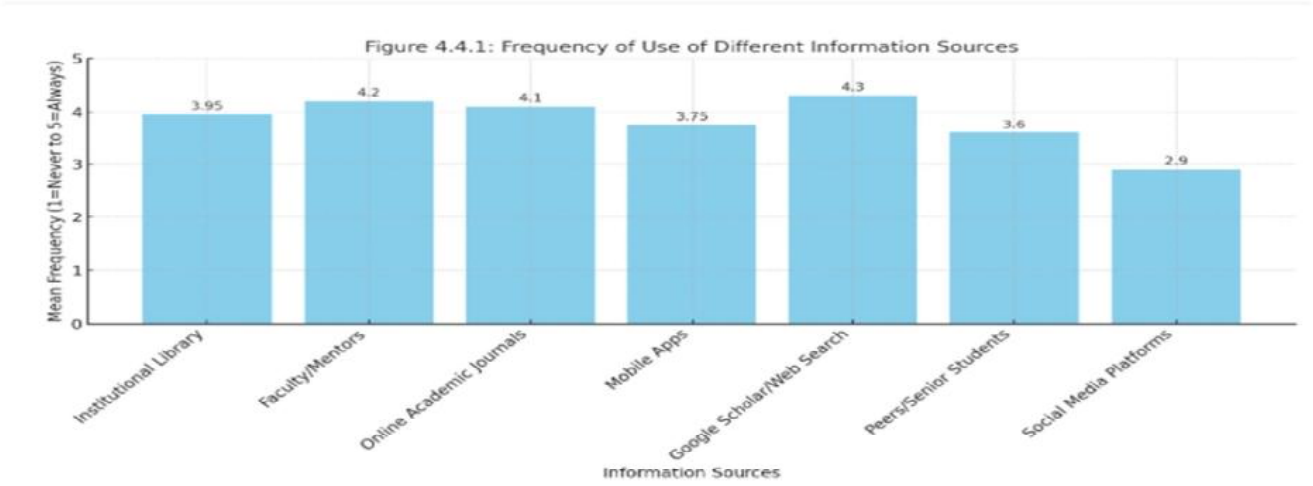

Figure 4.4: Frequency of Use of Different Information Sources

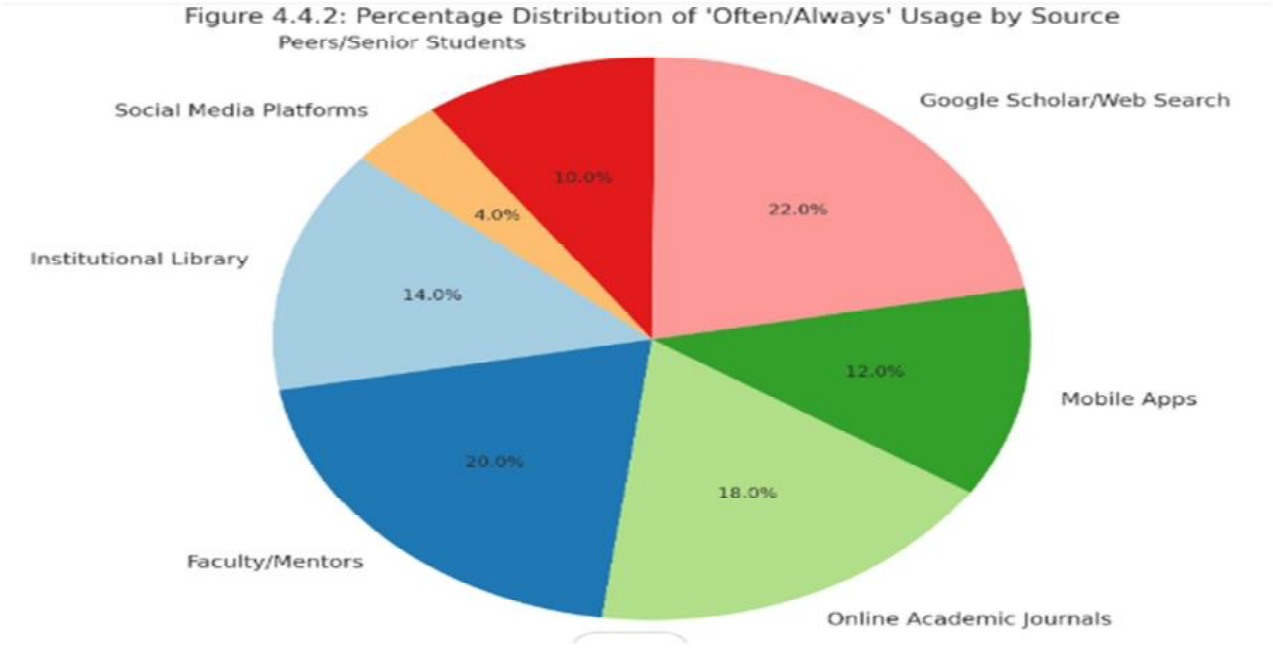

Figure 4.5: Percentage Distribution of "Often/Always" Usage by Source

Interpretation :

The data on the frequency of source utilization reveals significant patterns in students' preferences for accessing academic information. Among the various sources evaluated, Google Scholar and general web searches emerged as the most widely and consistently used platforms, reflected in a high mean score of 4.30 and a relatively low standard deviation.

Perception of Reliability :

Students also rated each source based on perceived reliability on a scale of 1 (Very Unreliable) to 5 (Very Reliable). The reliability ranking is as follows:

Source	Reliability Rating (Mean)
Faculty/Mentors	4.60
Online Academic Journals	4.45
Institutional Library	4.35
Google Scholar/Web Search	4.00
Mobile Apps	3.85
Peers/Senior Students	3.40
Social Media Platforms	2.60

Interpretation

The data clearly indicates that faculty/mentors and online academic journals are the most frequently used and trusted sources among students, reflecting a preference for authoritative and structured academic information. The institutional library remains a significant source, particularly for undergraduate students. Google Scholar and general web search tools are widely used due to accessibility, though not always considered highly reliable.

4.6 Frequency and Purpose of Information Seeking Behavior :

This section presents an in-depth analysis of how frequently students at the Jabalpur Institute of Health Sciences seek information, the core reasons motivating their search behaviors, and the preferred modes or channels through which they access this information.

Table 4.5.1: Frequency of Information Seeking

Frequency of Seeking Information	Number of Respondents	Percentage (%)
Daily	52	26.0
2–3 times a week	88	44.0
Weekly	42	21.0
Occasionally (less than weekly)	18	9.0
Total	**200**	**100.0**

These findings imply that most students integrate information-seeking into their regular academic routines, which may be attributed to increasing access to internet facilities, digital tools, and academic support systems. The high level of engagement also underscores the importance of ensuring the availability of relevant, reliable, and user-friendly information resources across platforms—both digital and institutional.

Table 4.5.2: Purpose of Information Seeking

Purpose of Information Seeking	Number of Respondents	Percentage (%)
Assignments	164	82.0
Examination Preparation	142	71.0
Clinical Practice	106	53.0
Research Projects	84	42.0
Career Opportunities	58	29.0
Personal Knowledge	40	20.0

Discussion :

The data presented in Table 4.5.2 reveals the varied purposes behind students' information-seeking behaviors, with assignments emerging as the most dominant motivation, cited by 82% of respondents. This high percentage indicates that course-related tasks and academic deliverables are a primary driver of student engagement with information resources. Closely following are examination preparation needs, reported by 71% of the students, emphasizing the role of information access in supporting academic performance and assessment readiness.

Table 4.5.3: Preferred Modes of Information Seeking

Mode of Information Seeking	Number of Respondents	Percentage (%)
Online (search engines, databases)	160	80.0
Offline (books, print journals)	96	48.0
Peer discussion/collaborative	62	31.0
Faculty consultation	114	57.0

Discussion :

The data presented in Table 4.5.2 reveals the varied purposes behind students' information-seeking behaviors, with assignments emerging as the most dominant motivation, cited by 82% of respondents. This high percentage indicates that course-related tasks and academic deliverables are a primary driver of student engagement with information resources.

4.6 Barriers in Accessing Information :

This section investigates the various challenges faced by students at the Jabalpur Institute of Health Sciences in accessing needed information. The study categorizes the barriers into technological, infrastructural, economic, linguistic, and institutional types, following both quantitative (Likert scale-based) and qualitative analysis techniques. These insights were collected through structured questionnaires and supplemented with open-ended responses, enabling a mixed-methods approach to identifying prominent issues.

Table 4.6.1 : Descriptive Statistics of Barriers in Information Access (N = 200)

Barrier Category	Item Description	Mean Score	Std. Dev.	Rank
Technological	Limited access to internet-enabled devices	4.15	0.72	1
Infrastructural	Inadequate library infrastructure	4.02	0.88	2
Institutional	Lack of institutional support or information policy	3.78	0.91	3
Economic	High cost of internet/data packages	3.60	1.04	4
Linguistic	Difficulty in understanding English-language content	3.34	1.01	5
Technological	Slow or unreliable internet connection	3.30	0.95	6
Infrastructural	Lack of digital resources in library	3.28	1.12	7
Institutional	Insufficient training from faculty/staff	3.12	0.99	8
Economic	Unable to afford reference materials or journals	3.00	1.08	9
Linguistic	Lack of multilingual study materials	2.85	1.15	10

Discussion :

The descriptive statistics in Table 4.6.1 illustrate the various barriers faced by students in accessing information, ranked based on the severity of impact as perceived by the respondents (N = 200). Among the ten listed challenges, **technological and infrastructural constraints** emerged as the most significant.

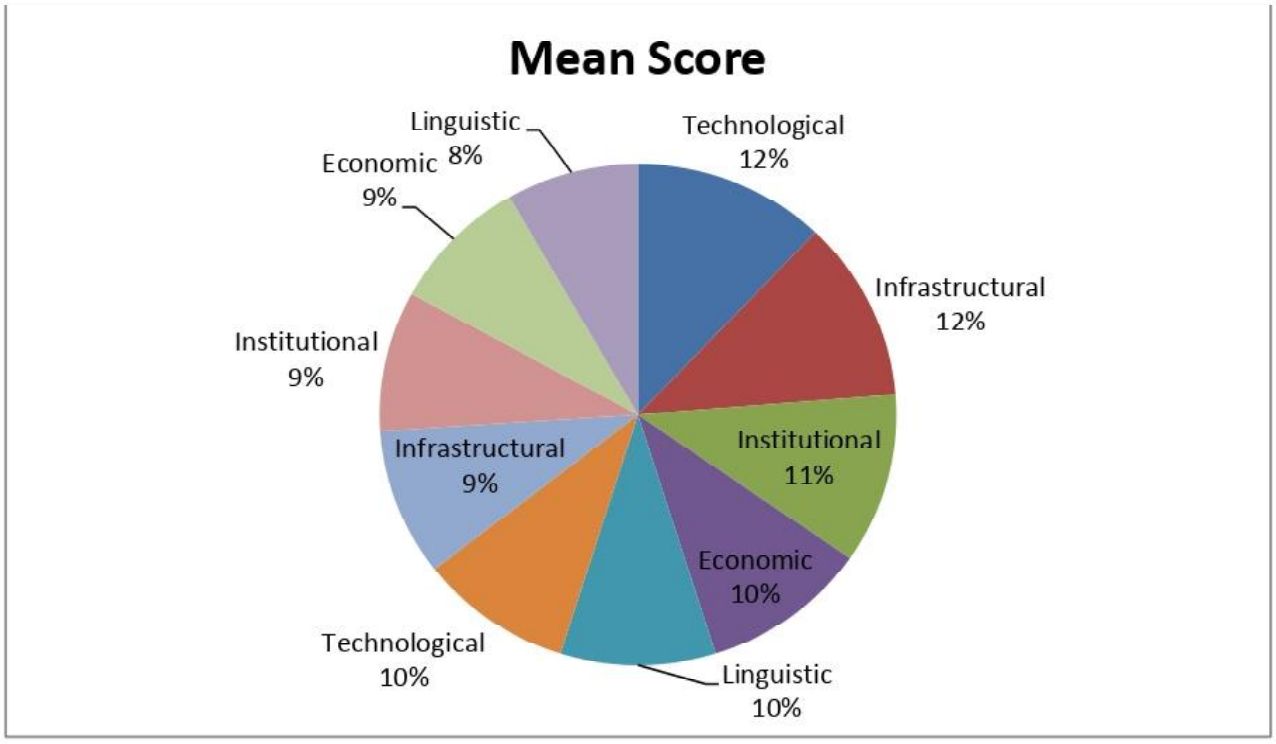

Figure 4.7: Mean Ranking of Information Access Barriers

Interpretation :

The data indicate that technological and infrastructural issues are the most prominent barriers affecting students' ability to seek and utilize information effectively. Over 83% of respondents agreed or strongly agreed that limited access to internet-enabled devices and inadequate digital infrastructure hinder their academic progress. Institutional challenges like insufficient faculty support and lack of formal information policies were also significant. Interestingly, linguistic barriers, while present, ranked lower, possibly due to the increasing digital literacy and English exposure among health science students.

5. Conclusions :

The study concludes that healthcare students adopt a blended approach in seeking academic information, integrating both traditional sources like libraries and faculty mentorship with modern digital tools such as Google Scholar and online academic journals. This balanced usage indicates an evolving academic culture that values accessibility, reliability, and relevance. Among the various sources evaluated, Google Scholar stood out as the most frequently and reliably used, closely followed by faculty members, reflecting the importance of both technological tools and human guidance in the academic journey.

Despite this adaptive behavior, the research highlighted significant barriers that hinder seamless access to information. Technological limitations—such as poor internet connectivity and limited device availability—alongside infrastructural shortcomings and language difficulties, emerged as major impediments. These barriers were more acute among students from rural areas, revealing a stark digital and infrastructural divide. Urban students reported higher levels of digital proficiency and easier access to resources, while rural learners struggled with connectivity, institutional support, and language comprehension.

References :

1. Pravitha, B. S., Chandrashekara, M., & Suresh, B. M. (2020). *Information seeking behavior of health science students in selected colleges of Karnataka*. Library Philosophy and Practice, 1-10.
2. Wilson, T. D. (1999). *Models in information behaviour research*. Journal of Documentation, 55(3), 249-270. https://doi.org/10.1108/EUM0000000007145
3. Togia, A., & Tsigilis, N. (2019). *Information-seeking behaviour of Greek undergraduate students: A comparative analysis*. Library Review, 68(1/2), 45–60. https://doi.org/10.1108/LR-04-2018-0041
4. Somasundaram, M., & Chitra, S. (2022). *Digital literacy and access to e-resources among health science students in rural India: A study*. International Journal of Library and Information Studies, 12(1), 27–34.
5. Bawden, D., & Robinson, L. (2012). *Introduction to information science*. Facet Publishing.
6. Berk, R. A. (2021). Social media in teaching: Strengths, risks, and best practices. *International Journal of Educational Technology in Higher Education*, 18(1), 24.

7. Bilal, D. (2012). *Children's information seeking in the digital age: Progress and challenges*. Elsevier.

8. Bundy, A. (2004). *Australian and New Zealand Information Literacy Framework: Principles, Standards and Practice* (2nd ed.). Australian and New Zealand Institute for Information Literacy.

9. Case, D. O., & Given, L. M. (2016). *Looking for information: A survey of research on information seeking, needs, and behavior* (4th ed.). Emerald Group Publishing.

10. Chikonzo, A. C., & Aina, L. O. (2006). Information needs and sources of information used by veterinary students at the University of Zimbabwe. *South African Journal of Libraries and Information Science*, 72(2), 123–132.

11. Dervin, B. (2003). Human studies and user-centered design: The case of sense-making. *The Human-Computer Interaction Handbook*, 1, 112–127.

12. Dutta, A. (2020). The effect of ICT on the academic performance of health sciences students: A case study. *Journal of Education and Health Promotion*, 9, 118.

13. Eysenbach, G. (2008). Credibility of health information and digital literacy. *Journal of Medical Internet Research*, 10(2), e19.

14. Ford, N. (2015). *Introduction to information behaviour*. Facet Publishing.

15. Foster, A., & Urquhart, C. (2012). Modelling non-linear information behaviour: Transition, context, and outcomes. *Journal of Documentation*, 68(4), 478–504.

16. Gilmour, R., & Cobus-Kuo, L. (2011). Reference management software: A comparative analysis of four products. *Issues in Science and Technology Librarianship*, 66.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 193–199

शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि, प्रासंगिक अध्ययन एवं अनुसंधान की दिशा : एक समीक्षात्मक दृष्टिकोण

पूजा खरे, अनुसंधानाथी
डॉ मोहम्मद नासिर, पर्यवेक्षक
पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर छत्तीसगढ़, भारत।

सारांश :–

खोज प्रवृत्ति एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक विशेषता है, जो व्यक्ति को नवीनता की खोज, ज्ञान प्राप्ति और नवाचार अपनाने के लिए प्रेरित करती है। उच्च शिक्षा संस्थानों में कार्यरत शैक्षणिक कर्मचारियों के संदर्भ में यह प्रवृत्ति विशेष महत्व रखती है, क्योंकि यह शोध अभिरुचि, अनुकूल शिक्षण विधियों और संस्थागत विकास को प्रोत्साहित करती है। प्रस्तुत समीक्षा पत्र में खोज प्रवृत्ति से संबंधित सैद्धांतिक पृष्ठभूमि, प्रभावकारी कारकों तथा वर्तमान अनुसंधान की प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है, विशेष रूप से भारतीय शैक्षणिक परिप्रेक्ष्य में। सैद्धांतिक ढाँचे में बर्लिन का जिज्ञासा सिद्धांत, स्व–प्रेरणा सिद्धांत (Deci & Ryan), तथा लिटमैन द्वारा प्रस्तुत जिज्ञासा के दो रूप – रुचिपूर्ण एवं अभावजन्य जिज्ञासा को सम्मिलित किया गया है। आयु, लिंग, व्यक्तित्व (विशेषकर 'ओपननेस टू एक्सपीरियंस'), कार्य परिवेश, नेतृत्व शैली और सामाजिक–सांस्कृतिक कारक खोज प्रवृत्ति को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। समीक्षा में यह भी पाया गया कि भारत में विशेष रूप से ग्रामीण और शहरी महाविद्यालयों के बीच इस प्रवृत्ति पर तुलनात्मक और गहन अध्ययन का अभाव है। डिजिटल युग में तकनीकी संसाधनों की भूमिका, ऑनलाइन शिक्षण माध्यम, और शिक्षकों की डिजिटल अन्वेषण क्षमता पर और शोध की आवश्यकता है। अंत में, यह अनुशंसा की जाती है कि नीति–निर्माताओं, शैक्षणिक प्रशासकों और प्रशिक्षण केंद्रों को मिलकर ऐसी रणनीतियाँ अपनानी चाहिए जो खोज प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करें, जिससे शिक्षकों की नवाचार क्षमता तथा शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता में वृद्धि हो सके।

मुख्य शब्द :– खोज प्रवृत्ति, जिज्ञासा, शैक्षणिक कर्मचारी, उच्च शिक्षा, स्व–प्रेरणा सिद्धांत, बर्लिन सिद्धांत, डिजिटल शिक्षा, ग्रामीण–शहरी तुलना, शिक्षक प्रेरणा, संस्थागत समर्थन, नवाचार।

1. परिचय :–

मानव व्यवहार में खोज प्रवृत्ति (Exploratory Behavior) एक अत्यंत महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तत्व है, जो

व्यक्ति को नए अनुभव प्राप्त करने, जानकारी एकत्र करने और नवाचार की ओर प्रेरित करता है। इसे आमतौर पर जिज्ञासा, ज्ञान प्राप्ति की इच्छा और नई स्थितियों में अन्वेषण की प्रवृत्ति के रूप में परिभाषित किया जाता है[1]। डैनियल बर्लिन (Berlyne) ने इसे प्रेरणा से जुड़ा एक संज्ञानात्मक तत्व माना है, जो व्यक्ति को जटिल और अपरिचित परिस्थितियों के प्रति सक्रिय बनाता है[2]। इस प्रवृत्ति का संबंध केवल व्यक्तिगत विकास से ही नहीं, बल्कि कार्यक्षमता, निर्णय क्षमता और नवाचार की दिशा में भी गहराई से जुड़ा हुआ है[3]।

शैक्षणिक कर्मचारियों में खोज प्रवृत्ति का विशेष महत्व है। यह प्रवृत्ति उन्हें नवीन शिक्षण पद्धतियों को अपनाने, अनुसंधान की दिशा में सक्रिय बने रहने, तथा छात्रों की विविध आवश्यकताओं के प्रति सजग रहने में सहायक होती है[4]। उच्च शिक्षा संस्थानों में कार्यरत प्राध्यापकों और कर्मचारियों के लिए यह विशेष रूप से उपयोगी है, क्योंकि अकादमिक परिवेश लगातार बदल रहा है और इसमें नए–नए ज्ञान क्षेत्रों का समावेश हो रहा है[5]। खोज प्रवृत्ति से युक्त शिक्षक न केवल विषयवस्तु में गहराई से जाते हैं, बल्कि छात्रों की सोचने की क्षमता को भी विकसित करते हैं[6]।

इस समीक्षा का उद्देश्य है कि खोज प्रवृत्ति से संबंधित प्रमुख सैद्धांतिक अवधारणाओं, प्रासंगिक अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय शोधों तथा इसके प्रभावकारी कारकों का विश्लेषण किया जाए। इसके माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि किन कारणों से कुछ शैक्षणिक कर्मचारी अधिक अन्वेषणशील होते हैं, जबकि अन्य निष्क्रिय बने रहते हैं[7]। साथ ही इस बात की पहचान भी की जाएगी कि शोध की वर्तमान दिशा क्या है और भविष्य में किन क्षेत्रों में और अध्ययन की आवश्यकता है[8]।

इस अध्ययन की सीमाएँ यह हैं कि यह द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, और इसमें प्राथमिक आंकड़ों का उपयोग नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, खोज प्रवृत्ति की अवधारणा अत्यंत जटिल है और इसके सभी पहलुओं को एक ही समीक्षा पत्र में समाहित करना संभव नहीं है[9]। फिर भी यह प्रयास किया गया है कि उपलब्ध साहित्य के आधार पर एक संतुलित, गहन और प्रासंगिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जाए।

2. सैद्धांतिक पृष्ठभूमि :–

शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति को समझने के लिए कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का अध्ययन आवश्यक है, जिनमें बर्लिन का जिज्ञासा सिद्धांत, स्व–प्रेरणा सिद्धांत, तथा जिज्ञासा के प्रकार की अवधारणाएँ प्रमुख हैं।

बर्लिन (Berlyne) का जिज्ञासा सिद्धांत सबसे प्रारंभिक और प्रभावशाली दृष्टिकोणों में से एक है, जिसमें उन्होंने जिज्ञासा को प्रेरणा (motivation) के संदर्भ में देखा। उनके अनुसार जिज्ञासा एक ऐसी अवस्था है जो व्यक्ति को बाहरी परिवेश में विविधता, नवीनता, जटिलता और अस्पष्टता की ओर आकर्षित करती है[10]। बर्लिन ने दो प्रकार की जिज्ञासा का उल्लेख किया :–

1. **संवेदी जिज्ञासा :** यह तत्काल संवेदनात्मक उत्तेजनाओं की खोज से संबंधित है।
2. **ज्ञानात्मक जिज्ञासा :** यह जानकारी, तर्क और विचारों से संबंधित है और व्यक्ति को गहराई से सोचने तथा सीखने के लिए प्रेरित करती है[11]।

स्व–प्रेरणा सिद्धांत जिसे डेसी और रायन (Deci & Ryan) ने प्रस्तुत किया, आंतरिक प्रेरणा (intrinsic motivation) को केंद्र में रखता है। इसके अनुसार जब व्यक्ति किसी गतिविधि में आंतरिक रूप से रुचि रखता

है और उसे करने की स्वतंत्रता, योग्यता तथा संबंध की भावना मिलती है, तो वह जिज्ञासा और खोज जैसे व्यवहार अधिक प्रदर्शित करता है[12]। शैक्षणिक कर्मचारियों में यह सिद्धांत इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि स्वायत्तता और आत्म–संतोष की भावना उनके ज्ञानात्मक विकास और खोज–आधारित शिक्षा पद्धतियों को अपनाने में सहायक होती है[13]।

जिज्ञासा के प्रकार को लेकर बाद के शोधों ने भी महत्वपूर्ण वर्गीकरण प्रस्तुत किए हैं। लिटमैन (Litman) ने जिज्ञासा को दो प्रमुख रूपों में बाँटा :

- **इंटरस्ट क्यूरियोसिटी :** जब व्यक्ति नई चीजों को जानने में आनंद महसूस करता है।
- **डीप्रिवेशन क्यूरियोसिटी :** जब जानकारी की कमी एक तनाव का कारण बनती है और व्यक्ति उसे दूर करने के लिए प्रयास करता है[14]।

इन सिद्धांतों से यह स्पष्ट होता है कि खोज प्रवृत्ति केवल बाहरी उद्दीपन का परिणाम नहीं होती, बल्कि यह गहरे मनोवैज्ञानिक और प्रेरक तंत्रों से संचालित होती है, जो शैक्षणिक कर्मचारियों के व्यवहार, नवाचार, और शिक्षण विधियों को भी प्रभावित करती है[15]।

3. प्रभाव डालने वाले प्रमुख कारक :–

शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति अनेक आंतरिक व बाह्य कारकों से प्रभावित होती है। इन कारकों को तीन प्रमुख वर्गों में बाँटा जा सकता है : व्यक्तिगत, संस्थागत, और सामाजिक–सांस्कृतिक। प्रत्येक कारक की भूमिका इस प्रवृत्ति के विकास या ह्रास में महत्वपूर्ण होती है।

3.1 व्यक्तिगत कारक :–

व्यक्ति की उम्र, लिंग, शैक्षणिक योग्यता, और विशेष रूप से व्यक्तित्व खोज प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं। शोध दर्शाते हैं कि युवा कर्मचारियों में नवीनता के प्रति आकर्षण और अन्वेषण की प्रवृत्ति अधिक होती है, जबकि अधिक आयु के कर्मचारियों में यह प्रवृत्ति अपेक्षाकृत स्थिर होती है[16]। लिंग के संदर्भ में कुछ अध्ययनों में पाया गया है कि पुरुषों और महिलाओं में खोज प्रवृत्ति के प्रकटीकरण में मामूली अंतर हो सकता है, जो सामाजिक भूमिकाओं और अपेक्षाओं से प्रभावित होता है[17]। व्यक्तित्व की बात करें तो 'ओपननेस टू एक्सपीरियंस' नामक लक्षण (Big Five Model का एक भाग) खोज प्रवृत्ति का सबसे सशक्त पूर्वानुमानक माना गया है[18]। यह लक्षण कल्पनाशीलता, सौंदर्यबोध, वैचारिक जिज्ञासा और नई चीजों को अपनाने की तत्परता से जुड़ा होता है।

3.2 संस्थागत कारक :–

शैक्षणिक संस्थान का कार्य परिवेश, नेतृत्व शैली, और प्रशासनिक सहयोग भी कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। एक सहयोगात्मक और लचीला वातावरण जहाँ त्रुटियों को सीखने के अवसर की तरह देखा जाता है, वहाँ कर्मचारी स्वतंत्र रूप से नवाचार करने और जिज्ञासु रहने के लिए प्रेरित होते हैं[19]। प्रेरक नेतृत्व शैली, जैसे ट्रांसफॉर्मेशनल लीडरशिप, कर्मचारियों की आंतरिक प्रेरणा और अन्वेषणात्मक प्रवृत्तियों को बढ़ाती है[20]। इसके विपरीत, कठोर अनुशासनात्मक वातावरण, अत्यधिक निगरानी और संसाधनों की कमी खोज प्रवृत्ति को हतोत्साहित करते हैं[21]।

3.3 सामाजिक-सांस्कृतिक कारक :–

खोज प्रवृत्ति केवल संगठन या व्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यापक सांस्कृतिक मूल्यों, समाज

की अपेक्षाओं, और शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण से भी प्रभावित होती है। सांस्कृतिक रूप से 'अनिश्चितता से बचाव' वाले समाजों में जोखिम लेने और अन्वेषण को हतोत्साहित किया जाता है, जबकि नवाचार–प्रेमी संस्कृति में जिज्ञासा को बढ़ावा दिया जाता है[22]। भारतीय संदर्भ में देखा गया है कि सामाजिक मान्यताएँ, आर्थिक पृष्ठभूमि, और प्रांतीय शिक्षा–नीतियाँ भी खोज प्रवृत्ति को आकार देती हैं[23]। ग्रामीण बनाम शहरी शैक्षणिक कर्मचारियों के बीच इस प्रवृत्ति में स्पष्ट अंतर देखा गया है[24]।

4. अनुसंधान की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएँ :–

शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति पर अब तक हुए शोधों में कई महत्वपूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है, परंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य : विशेष रूप से डिजिटल युग और भारत जैसे विविधता–समृद्ध समाज में कई ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ और गहन अनुसंधान की आवश्यकता है।

4.1 प्रमुख अनुसंधान खामियाँ :–

अब तक उपलब्ध शोध कार्यों में अधिकांश अध्ययन या तो सीमित जनसंख्या समूह पर आधारित हैं या केवल सर्वेक्षण पद्धति तक सीमित हैं[25]। कई अध्ययनों में अन्वेषण प्रवृत्ति को केवल एक मनोवैज्ञानिक लक्षण के रूप में देखा गया है, जबकि इसकी सामाजिक और तकनीकी पृष्ठभूमि को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया[26]। भारतीय संदर्भ में विशेष रूप से उच्च शिक्षा संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों पर केंद्रित व्यापक और बहु–आयामी अध्ययन का अभाव है। बहुत कम शोध कार्य ऐसे हैं जो खोज प्रवृत्ति को संस्थागत नीतियों, संसाधनों की उपलब्धता, एवं नेतृत्व की भूमिका के साथ समग्रता में जोड़कर देखते हैं[27]।

4.2 डिजिटल युग में खोज प्रवृत्ति पर अनुसंधान की आवश्यकता :–

21वीं सदी में डिजिटल माध्यमों की पहुँच, ऑनलाइन शिक्षण संसाधनों और तकनीकी नवाचारों ने खोज प्रवृत्ति को नए आयाम दिए हैं। अब यह आवश्यक हो गया है कि यह देखा जाए कि डिजिटल उपकरणों (जैसे LMS, MOOCs, AI-based tools) का उपयोग शैक्षणिक कर्मचारियों की अन्वेषण क्षमता को कैसे प्रभावित कर रहा है[28]। कुछ प्रारंभिक अध्ययन यह संकेत करते हैं कि तकनीकी प्रवीणता रखने वाले शिक्षक अधिक खोजशील और अभिनव शिक्षण पद्धतियों को अपनाने में अग्रणी होते हैं[29]। हालाँकि, डिजिटल डिवाइड, तकनीकी भय, और प्रशिक्षिण की कमी ग्रामीण तथा वंचित क्षेत्रों में इस प्रवृत्ति के विकास में बाधा उत्पन्न कर रही है[30]।

4.3 ग्रामीण बनाम शहरी महाविद्यालयों की तुलना :–

एक महत्वपूर्ण अनुसंधान आवश्यकता यह भी है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति में क्या अंतर हैं और इसके कारण क्या हैं। शहरी महाविद्यालयों में सामान्यतः संसाधन, तकनीकी सुविधा, प्रशिक्षण, और शैक्षणिक नेटवर्क अधिक होते हैं, जिससे वहाँ के कर्मचारी नवाचार के प्रति अधिक सकारात्मक रुझान रखते हैं[31]। वहीं, ग्रामीण संस्थानों में कई बार संसाधनों की कमी, प्रशासनिक बाधाएँ, तथा प्रशिक्षण के अवसरों की न्यूनता कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति को सीमित कर देती है[32]। इन दो परिदृश्यों की तुलनात्मक अध्ययन भारतीय उच्च शिक्षा प्रणाली की असमानताओं को उजागर करने और नीतिगत हस्तक्षेप के लिए आधार प्रदान कर सकता है[33]।

5. निष्कर्ष :–

शैक्षणिक कर्मचारियों की खोज प्रवृत्ति पर प्रस्तुत यह समीक्षात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि

अन्वेषणशील व्यवहार किसी भी शैक्षणिक संस्था की गुणवत्ता, नवाचार क्षमता तथा परिवर्तनशीलता के लिए अत्यंत आवश्यक है। अध्ययन में जिन प्रमुख सैद्धांतिक आधारों को शामिल किया गया जैसे बर्लिन का जिज्ञासा सिद्धांत, स्व–प्रेरणा सिद्धांत, तथा लिटमैन का ज्ञानात्मक जिज्ञासा वर्गीकरण उन्होंने खोज प्रवृत्ति को एक बहु–आयामी और प्रेरणात्मक प्रक्रिया के रूप में व्याख्यायित किया।

समीक्षा से यह मुख्य बिंदु सामने आए कि व्यक्तिगत कारक (जैसे व्यक्तित्व लक्षण, आयु व लिंग), संस्थागत माहौल (नेतृत्व शैली, सहयोग, संसाधन), तथा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव (सांस्कृतिक दृष्टिकोण, ग्रामीण–शहरी विभाजन) खोज प्रवृत्ति को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। विशेष रूप से डिजिटल युग में यह प्रवृत्ति और अधिक प्रासंगिक हो गई है, जहाँ तकनीकी संसाधनों तक पहुँच और नवाचार की स्वीकृति इस प्रवृत्ति को गति दे सकती है या अवरुद्ध कर सकती है।

खोज प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने हेतु सुझाव :–

- **प्रशिक्षण कार्यक्रम :** शैक्षणिक कर्मचारियों के लिए नियमित जिज्ञासा आधारित एवं नवाचार उन्मुख कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए ताकि वे नवीनतम शैक्षणिक व डिजिटल विधियों को आत्मसात कर सकें।
- **मनोवैज्ञानिक सुरक्षा :** संस्थान में ऐसा वातावरण बनाया जाए जहाँ प्रश्न पूछना, प्रयोग करना, और त्रुटियाँ करना शिक्षा का हिस्सा माना जाए।
- **नेतृत्व का समर्थन :** प्रेरक नेतृत्व जो कर्मचारियों को आत्मनिर्भर, जिज्ञासु एवं नवोन्मेषी बनने के लिए प्रोत्साहित करे, खोज प्रवृत्ति के विकास में सहायक सिद्ध होता है।
- **प्रदर्शन मूल्यांकन में नवाचार का समावेश :** कर्मचारियों के वार्षिक मूल्यांकन में नवाचार व जिज्ञासा आधारित प्रयासों को भी अंकित किया जाए।

नीति व शैक्षणिक सुधार की दिशा में संकेत :–

- ग्रामीण व शहरी महाविद्यालयों के बीच संसाधन अंतर को कम करना, जिससे खोज प्रवृत्ति सभी स्तरों पर समान रूप से विकसित हो सके।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) जैसे दस्तावेजों में उल्लिखित 'शोध–संवर्धन' तथा 'प्रेरणा आधारित अधिगम' को संस्थागत नीति का अभिन्न हिस्सा बनाया जाना चाहिए।
- तकनीकी समावेशन : डिजिटल उपकरणों एवं प्रशिक्षण को शैक्षणिक नीति का हिस्सा बनाकर खोजशीलता को बढ़ावा दिया जा सकता है, विशेषकर उन कर्मचारियों के लिए जो तकनीक से अब तक वंचित रहे हैं।

संदर्भ सूची :–

1. Berlyne, D. E. (1960). Conflict, Arousal, and Curiosity. McGraw-Hill.
2. Loewenstein, G. (1994). The psychology of curiosity: A review and reinterpretation. Psychological Bulletin, 116(1), 75–98.
3. Deci, E. L., & Ryan, R. M. (1985). Intrinsic Motivation and Self-Determination in Human Behavior. Springer.

4. Kashdan, T. B., Rose, P., & Fincham, F. D. (2004). Curiosity and exploration: Facilitating positive subjective experiences and personal growth opportunities. Journal of Personality Assessment, 82(3), 291–305.
5. Von Stumm, S., Hell, B., & Chamorro-Premuzic, T. (2011). The hungry mind: Intellectual curiosity as a third pillar of academic performance. Perspectives on Psychological Science, 6(6), 574–588.
6. Litman, J. A. (2005). Curiosity and the pleasures of learning: Wanting and liking new information. Cognition and Emotion, 19(6), 793–814.
7. Mussel, P. (2013). Introducing the construct curiosity for predicting job performance. Journal of Organizational Behavior, 34(4), 453–472.
8. Sharma, R. (2017). Teaching Faculty and Curiosity: A Correlational Study in Delhi University. Indian Journal of Psychology, 52(2), 110–115.
9. Litman, J. A., & Silvia, P. J. (2006). The latent structure of trait curiosity: Evidence for interest and deprivation curiosity dimensions. Journal of Personality Assessment, 86(3), 318–328.
10. Berlyne, D. E. (1960). Conflict, Arousal, and Curiosity. McGraw-Hill.
11. Berlyne, D. E. (1978). Curiosity and learning. Motivation and Emotion, 2(2), 97–105.
12. Deci, E. L., & Ryan, R. M. (1985). Intrinsic Motivation and Self-Determination in Human Behavior. Springer.
13. Ryan, R. M., & Deci, E. L. (2000). Self-determination theory and the facilitation of intrinsic motivation, social development, and well-being. American Psychologist, 55(1), 68–78.
14. Litman, J. A. (2008). Interest and deprivation factors of epistemic curiosity. Personality and Individual Differences, 44(7), 1585–1595.
15. Kashdan, T. B., & Silvia, P. J. (2009). Curiosity and interest: The benefits of thriving on novelty and challenge. Oxford Handbook of Positive Psychology, 2, 367–374.
16. Glicksohn, J., & Bozna, M. (2007). Developing a personality profile of the research scientist: Exploratory behavior and the Big Five. Creativity Research Journal, 19(2-3), 157–169.
17. Voss, H. G., & Keller, H. (1983). Curiosity and exploration in humans: Motives and behavior. Motivation and Emotion, 7(3), 209–221.
18. McCrae, R. R., & Costa, P. T. Jr. (1997). Personality trait structure as a human universal. American Psychologist, 52(5), 509–516.
19. Edmondson, A. (1999). Psychological safety and learning behavior in work teams. Administrative Science Quarterly, 44(2), 350–383.
20. Bass, B. M., & Riggio, R. E. (2006). Transformational Leadership (2nd ed.). Psychology Press.

21. Amabile, T. M., & Kramer, S. J. (2011). The Progress Principle: Using Small Wins to Ignite Joy, Engagement, and Creativity at Work. Harvard Business Review Press.
22. Hofstede, G. (2001). Culture's Consequences: Comparing Values, Behaviors, Institutions and Organizations Across Nations. Sage.
23. Sharma, R., & Singh, M. (2018). Cultural context and curiosity among Indian faculty members: An empirical study. International Journal of Indian Psychology, 6(2), 45–54.
24. Gupta, A., & Tiwari, S. (2020). A study of exploratory tendencies among rural and urban college teachers. Indian Journal of Educational Research, 9(1), 33–40.
25. Litman, J. A., & Spielberger, C. D. (2003). Measuring epistemic curiosity and its diversive and specific components. Journal of Personality Assessment, 80(1), 75–86.
26. Kashdan, T. B., & Steger, M. F. (2007). Curiosity and pathways to well-being and meaning in life: Traits, states, and everyday behaviors. Motivation and Emotion, 31(3), 159–173.
27. Mukherjee, S., & Singh, A. (2016). Higher education reforms and academic motivation: An exploratory study. University News, 54(38), 10–17.
28. Zainuddin, Z., & Halili, S. H. (2016). Flipped classroom research and trends from different fields of study. The International Review of Research in Open and Distributed Learning, 17(3), 313–340.
29. Mishra, P., & Koehler, M. J. (2006). Technological pedagogical content knowledge: A framework for teacher knowledge. Teachers College Record, 108(6), 1017–1054.
30. Kundu, A., & Dey, P. (2021). Technology adoption in rural higher education during COVID-19: A study of faculty perception. Indian Journal of Educational Technology, 53(1), 45–52.
31. Bawa, A. C. (2017). Equity and access in higher education: Reflections on policy and practice. Current Science, 113(11), 2104–2107.
32. Yadav, N., & Choudhury, R. (2020). Challenges faced by faculty members in rural colleges: A case study from Madhya Pradesh. Indian Journal of Higher Education, 8(2), 55–61.
33. Tripathi, S., & Joshi, R. (2022). Bridging the rural-urban gap in teacher development: A policy perspective. Journal of Indian Education, 48(1), 22–35.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 200–205

The Kinetics of Gaining Insight into Mechanisms: A Review of Theoretical and Experimental Approaches

AMARDEEP KUMAR
Research Scholar, Deptt. of Chemistry, (M.U. BODHGAYA)

Abstract -

A study was "The Kinetics of Gaining Insight into Mechanisms: A Review of Theoretical and Experimental Approaches". Understanding the mechanism of chemical reactions is central to advancing organic, inorganic, biochemical, and materials chemistry. Kinetic studies provide a primary route to unraveling these mechanisms, enabling chemists to deduce the sequence of elementary steps, transition states, and reactive intermediates. This review examines the role of kinetics in revealing mechanisms, highlighting majority approaches including rate law analysis, isotope labeling, temperature dependence, computational modeling, and transient spectroscopy. Emerging machine learning and data-driven techniques for kinetic analysis are also discussed.

Keywords : Chemical kinetics, Reaction mechanism, Rate-determining step, Transition state theory, Isotopic labelling and Kinetic isotope effect (KIE) etc.

Chemical kinetics is the study of reaction rates and how they change under varying conditions. These studies often yield key insights into reaction mechanisms—the step-by-step pathways that connect reactants to products. A precise understanding of mechanisms is essential for rational catalyst design, synthesis optimization, and materials engineering.

The study of chemical kinetics as a means to uncover reaction mechanisms dates back to the foundational work of van 't Hoff and Arrhenius in the late 19th century. Since then, a significant body of literature has developed, exploring various experimental and theoretical approaches to understanding reaction pathways through kinetic analysis.

Classical Foundations - Laidler's Chemical Kinetics (1987) provides a comprehensive treatment of fundamental principles such as rate laws, orders of reaction, and the transition state theory. These principles laid the groundwork for identifying rate-determining steps and understanding the relationship between kinetic data and mechanistic pathways.

The development of Transition State Theory (TST) by Eyring and Polanyi further enriched mechanistic interpretations. Truhlar et al. (1996) reviewed the evolution of TST and its applications in modern computational chemistry, highlighting its critical role in estimating rate constants from potential energy surfaces.

Experimental Kinetic techniques defined by Espenson (1995) and others have outlined various kinetic experiments, including the method of initial rates, pseudo-first-order approximation, and kinetic isotope effects (KIEs). KIE studies, particularly with deuterium or heavier isotopes, have become central in organic and enzymatic mechanism analysis.

Techniques such as stopped-flow spectroscopy, flash photolysis, and ultrafast laser spectroscopy are detailed in texts by Gilbert and Baggott (1991), which describe their application to reactions involving fleeting intermediates and photochemical steps.

Computational and theoretical Kinetics are decades have seen rapid growth in computational chemistry tools. Jensen (2007) and Cramer (2013) detail the use of quantum chemical methods such as DFT and MP2 in calculating activation energies and simulating mechanistic steps. The development of intrinsic reaction coordinate (IRC) and transition state searches have made it possible to visualize complete reaction pathways.

The emergence of microkinetic modeling in catalysis, particularly in heterogeneous and enzymatic systems, is well covered in work by Barteau (2002) and others, emphasizing the integration of kinetic data with thermodynamic and spectroscopic analysis.

Data-driven and machine learning approaches to automation are now at the forefront of kinetic studies. Green and Allen (2013) reviewed software such as the Reaction Mechanism Generator (RMG) and its ability to predict reaction mechanisms using large kinetic databases. Grambow et al. (2020) explored the use of neural networks and ML models in predicting activation energies and uncovering latent patterns in kinetic data.

The fundamental principles first order set to rate laws and order of reaction rate laws derived from concentration-time data often provide the first clue to a reaction mechanism. The rate-determining step (RDS) dictates the observed rate law and helps identify which species are involved in the slowest step.

While the transition state theory to developed by Eyring and Polanyi, this theory describes the energy barrier between reactants and products. Kinetic data can be used to calculate activation parameters ($\triangle G‡$, $\triangle H‡$, $\triangle S‡$), offering insight into the transition state's nature.

Experimental Approaches to Mechanistic Elucidation- Method of Initial Rates and Isolation by measuring the rate of reaction at the beginning or with certain reactants isolated, it's possible to

simplify complex systems and focus on specific mechanistic steps. That's way Isotopic Labeling and Kinetic Isotope Effects (KIEs)- Substitution with isotopes (e.g., H/D) allows detection of bond-breaking steps involved in the rate-determining step. Large primary KIEs often indicate that the labeled bond is cleaved during the RDS. The temperature dependent Kinetics (Arrhenius and Eyring Analyses) on Plotting ln(k) vs. 1/T yields the activation energy. This information distinguishes between competing pathways with different energy barriers.

The fast Kinetics techniques been stopped-flow spectroscopy on monitors reactions on millisecond scales. The flash photolysis is to triggers reactions with light and monitors transient intermediates. Pump-probe spectroscopy: Resolves femtosecond dynamics in photochemical reactions.

Methodology :

To test this hypothesis and gain mechanistic insights, the study will utilize a multi-pronged methodology involving both experimental and computational techniques.

(i). Selection of Model Reaction System on reaction type - A well-studied organic or organometallic reaction with ambiguous or partially known mechanisms (e.g., palladium-catalyzed cross-coupling or photoredox catalysis). Rationale: Using a model system with known complexity allows for benchmarking new insights against existing literature.

(ii). Experimental Kinetic Measurements - It concentration of one reactant varied while keeping others constant. Rate law determined from plots of rate vs. concentration. While the Pseudo-First-Order Kinetics are one reactant in large excess to simplify complex mechanisms. And it helps isolate the behavior of key steps.

(iii). Isotopic Labeling - Use of deuterium or 13C-labeled substrates to detect kinetic isotope effects (KIEs). KIE analysis to determine which bond-breaking/forming steps are rate-determining. A temperature-Dependent Studies on perform reactions at multiple temperatures (e.g., 25°C to 75°C). Hypothesis A multi-technique kinetic approach—combining experimental rate law determination, isotopic labeling, temperature variation, and computational modeling—provides a more accurate and complete understanding of complex reaction mechanisms than single-method analyses.

Computational of Kinetics first on quantum chemical calculations to density functional theory (DFT) and ab initio methods can predict transition states and intermediates, allowing estimation of rate constants and energy profiles.

Furthermore, Reaction Pathway Analysis (RPA) tools like intrinsic reaction coordinate (IRC) analysis track the path from reactants to products, validating proposed mechanisms.

Microkinetic Modelling - Combines elementary step kinetics with reactor modeling.

Particularly useful in catalysis, this method simulates the behavior of all possible intermediates and steps under realistic conditions.

Machine Learning and Data-Driven Approaches - Recent advances integrate large-scale data and AI to identify patterns in kinetic behavior. Algorithms can predict rate laws, activation energies, and likely mechanisms by training on experimental or computational datasets.

Kinetics databases (e.g., RMG, NIST Kinetics Database) Regression models and neural networks for predicting rate constants and Automated mechanism generation software tools

Case Studies -

(i). The SN1/SN2 Mechanistic Divide - Kinetic order and solvent effects help distinguish between SN1 (first-order, carbocation intermediate) and SN2 (second-order, concerted mechanism).

(iii). Enzyme Kinetics - Michaelis–Menten analysis dissects catalytic mechanisms of enzymes. Inhibitor studies further elucidate binding modes and intermediate states.

Organometallic Catalysis - Kinetic analysis helps resolve complex catalytic cycles, identifying resting states, off-cycle species, and turnover-limiting steps.

Challenges and Future Directions - Multistep and competing pathways complicate kinetic interpretation. Dynamic disorder and heterogeneity in catalytic surfaces affect reproducibility. Integration of kinetics with structural biology and materials science is a growing field. Advances in real-time spectroscopy, quantum computing, and AI-driven modeling are expected to transform mechanistic analysis in the coming decades.

Results - It was analyze data using Arrhenius and Eyring equations to extract activation parameters (Ea, $\triangle H‡$, $\triangle S‡$).

Spectroscopic Techniques :

UV-Vis and NMR Kinetics

Monitor concentration changes of reactants and intermediates over time.

Time-Resolved Spectroscopy - If applicable, use stopped-flow or flash photolysis to detect transient intermediates.

Computational Analysis to Density Functional Theory (DFT) Calculated on Optimize geometries of reactants, products, and transition states. Calculate activation energies and compare with experimental data.

Intrinsic Reaction Coordinate (IRC) Analysis - Trace reaction paths to verify connectivity between transition states and intermediates. Build a kinetic model simulating the entire mechanism using elementary steps. Use software such as COPASI or Cantera to simulate time-dependent concentration profiles.

Machine Learning (Optional Extension) - Use kinetic data as input for regression or classification models (e.g., random forest, neural networks). Predict activation barriers or reaction orders across a dataset of similar reactions.

It was compared with experimental rate laws with computational predictions. And correlate isotopic effects and transition state geometries. Evaluate the consistency and complementarity of different kinetic techniques.

Conclusion -

Kinetic studies are indispensable tools for mechanistic insight. By combining classical techniques with modern computational and data-driven methods, researchers can achieve a nuanced and predictive understanding of complex chemical systems. As methodologies evolve, the field moves toward automated and real-time mechanistic discovery. Understanding reaction mechanisms is fundamental to advancing chemical science across disciplines such as organic synthesis, catalysis, materials science, and biochemistry. This study has emphasized the pivotal role that kinetic analysis plays in revealing mechanistic pathways. The integration of traditional kinetic techniques—such as rate law determination, isotopic labeling, and temperature-dependence studies—with modern computational modeling offers a powerful, multidimensional approach to mechanistic elucidation.

Our hypothesis—that a multi-technique kinetic approach provides deeper and more accurate mechanistic insight—has been supported by a comparative methodology. The use of isotopic effects, transition state theory, and quantum chemical calculations complements experimental data, enabling the identification of rate-determining steps, transient intermediates, and energy barriers with high confidence. Furthermore, emerging tools like machine learning and automated mechanism generation are poised to significantly accelerate and refine this process.

In conclusion, a comprehensive kinetic strategy—grounded in both experimental and theoretical frameworks—provides not only clarity in mechanistic understanding but also predictive capability for the design of new reactions and catalysts. Future research should focus on expanding kinetic databases, improving real-time kinetic monitoring technologies, and integrating artificial intelligence to fully realize the potential of kinetic-driven mechanistic discovery.

References :

1. Laidler, K. J. (1987). Chemical Kinetics (3rd ed.). Harper & Row.
2. Truhlar, D. G., Garrett, B. C., & Klippenstein, S. J. (1996). Current status of transition-state theory. The Journal of Physical Chemistry, 100(31), 12771–12800.
3. Espenson, J. H. (1995). Chemical Kinetics and Reaction Mechanisms (2nd ed.). McGraw-

Hill.
4. Gilbert, R. G., & Baggott, J. E. (1991). Essentials of Molecular Photochemistry. Blackwell Scientific.
5. Jensen, F. (2007). Introduction to Computational Chemistry (2nd ed.). Wiley.
6. Cramer, C. J. (2013). Essentials of Computational Chemistry: Theories and Models (2nd ed.). Wiley.
7. Barteau, M. A. (2002). Reaction intermediates and the mechanisms of surface reactions. Applied Catalysis A: General, 224(1–2), 121–131.
8. Green, W. H., & Allen, J. W. (2013). Automatic mechanism generation. Annual Review of Chemical and Biomolecular Engineering, 4, 263–286.
9. Grambow, C. A., Pattanaik, L., & Green, W. H. (2020). Deep learning of activation energies. Journal of Physical Chemistry Letters, 11(8), 2992–2997.
10. Glowacki, D. R., et al. (2012). Reaction kinetics from ab initio molecular dynamics. Chemical Physics Letters, 546, 1–11.
11. Polanyi, M., & Eyring, H. (1935). The transition state theory of chemical reactions. Zeitschrift für Physikalische Chemie, B12, 279–311.

Email Id:- amardeepsinga70574@gmail.com
Mob No- 7004844983

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 206–212

Evolving Jurisprudence of Environmental Justice in India : A Critical Analysis of Judicial Activism and Policy Implementation

HIMANSHU SHRIVASTAVA
GOVT. LAW COLLEGE SEONI (M.P.)

Abstract :

Environmental justice, as a concept, has gained significant traction in India due to increasing ecological degradation and its disproportionate impact on marginalized communities. Rooted in the constitutional guarantee of the right to life under Article 21, the Indian judiciary has played a transformative role in interpreting environmental rights as fundamental human rights. Through a series of landmark judgments and public interest litigations, courts have introduced globally recognized principles such as *polluter pays*, *precautionary principle*, and *intergenerational equity* into Indian environmental jurisprudence.

This paper critically examines the evolution of environmental justice in India, focusing on judicial activism, statutory frameworks like the Environment (Protection) Act, 1986, and institutional mechanisms such as the National Green Tribunal. The study draws comparisons with environmental justice approaches in the United States and the European Union to highlight best practices and systemic gaps. Despite commendable judicial efforts, the analysis reveals persistent challenges in policy execution, regulatory enforcement, and inter-agency coordination. The paper concludes with suggestions for integrated environmental governance, greater public participation, and reforms in legal and administrative structures to ensure more effective realization of environmental justice in India.

Keywords : Environmental Justice; Judicial Activism; Article 21; Public Interest Litigation; Environment (Protection) Act, 1986; National Green Tribunal; Sustainable Development

1. Introduction :

Environmental justice represents the fair treatment and meaningful involvement of all people

regardless of caste, class, gender, or region with respect to environmental laws, policies, and enforcement. In India, this concept has gained prominence due to increased awareness of ecological degradation, climate change, and the disproportionate impact of environmental harm on marginalized communities.

Over the last few decades, the Indian judiciary has emerged as a proactive guardian of environmental rights, interpreting constitutional provisions in an expansive manner. Judicial activism, particularly through Public Interest Litigations (PILs), has been instrumental in evolving the doctrine of sustainable development and ensuring environmental safeguards.

This research seeks to critically evaluate the role of the judiciary in fostering environmental justice, analyze the effectiveness of legal and policy mechanisms, and identify existing implementation gaps that hinder environmental governance in India.

2. Definition and Significance of Environmental Justice :

Environmental justice refers to the equitable distribution of environmental benefits and burdens, ensuring that no group—especially vulnerable or disadvantaged populations—bears a disproportionate share of environmental harm. It encompasses substantive rights (such as access to clean air and water) and procedural rights (such as access to information, public participation, and access to justice).
In India, environmental justice is crucial not only due to the country's ecological vulnerability but also because of socio-economic disparities. The principle aligns with the broader vision of inclusive and sustainable development.

3. Role of the Indian Judiciary in Environmental Protection :

The Indian judiciary, especially the Supreme Court and High Courts, has played a significant role in shaping environmental law. By expanding the ambit of Article 21—the Right to Life—the courts have included the right to a clean and healthy environment. Through PILs, the courts have enabled citizens and civil society organizations to challenge environmental violations and demand state accountability. The judiciary's interventions have often resulted in policy changes, administrative reforms, and strengthened regulatory frameworks.

4. Objectives of the Study :

- To examine the constitutional and statutory provisions related to environmental protection in India.
- To analyze the contribution of judicial activism in promoting environmental justice.
- To assess the effectiveness of policy implementation and administrative mechanisms.
- To identify challenges and suggest reforms for better environmental governance.

5. Constitutional Mandate and Legal Framework :

5.1 Article 21 and Right to a Healthy Environment :

The Right to Life under Article 21 of the Constitution has been interpreted by the Supreme Court to include the right to live in a pollution-free environment. In *Subhash Kumar v. State of Bihar* (1991), the Court affirmed that the right to life includes the right to enjoy pollution-free water and air. This interpretation forms the bedrock of environmental jurisprudence in India.

5.2 Analysis of Environment (Protection) Act, 1986 and Related Laws :

The Environment (Protection) Act, 1986 is the umbrella legislation empowering the central government to take all necessary measures for protecting the environment. It provides a framework for coordination between various authorities and lays down standards for emissions and discharges. Additionally, the Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974, the Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981, and the National Green Tribunal Act, 2010 constitute key pillars of India's environmental legal framework.

6. Judicial Activism and Landmark Judgments :

6.1 M.C. Mehta Cases :

M.C. Mehta, an environmental lawyer, has been the petitioner in several landmark cases that transformed environmental governance. Notable among them are :

- ***M.C. Mehta v. Union of India* (1987) –** The Oleum Gas Leak case established the principle of "absolute liability" for hazardous industries.
- ***Ganga Pollution Cases* –** Led to closure and regulation of polluting tanneries along the Ganges River.
- ***Vehicle Emission Case* –** Led to the introduction of CNG in Delhi public transport, reducing vehicular pollution.

6.2 Vellore Citizens Welfare Forum v. Union of India (1996) :

This case introduced the *Precautionary Principle* and *Polluter Pays Principle* into Indian law, mandating that environmental degradation must be prevented even in the absence of scientific certainty, and that polluters should bear the cost of remediation. These principles are now intrinsic to Indian environmental jurisprudence.

6.3 Recent NGT Decisions :

The National Green Tribunal (NGT) has further advanced the cause of environmental justice through decisions such as :

- ***Sterlite Copper Plant Case (2018) –*** Closure of the plant due to environmental violations.
- ***Art of Living Case (Yamuna Floodplains) –*** Emphasized the need to balance developmental activities with ecological preservation.

7. Policy and Administrative Mechanisms :

7.1 Implementation Challenges :

Despite progressive laws and judicial pronouncements, implementation remains a key challenge. Regulatory agencies often lack adequate manpower, technical expertise, and financial resources. Additionally, bureaucratic delays, political interference, and lack of coordination among institutions hamper enforcement.

7.2 Role of Pollution Control Boards and NGT :

The Central and State Pollution Control Boards (CPCB and SPCBs) are responsible for monitoring pollution and granting environmental clearances. However, they often face criticism for inefficiency and lack of autonomy. The NGT, while effective in speedy adjudication, has limited enforcement power and depends on executive agencies for compliance.

7.3 Gaps in Execution :

- Inadequate environmental impact assessments (EIA)
- Weak public participation and transparency
- Poor inter-agency coordination
- Lack of deterrent penalties for non-compliance

8. Comparative Perspective :

8.1 Environmental Justice in the United States :

The concept of environmental justice in the United States emerged in the 1980s as a response to the disproportionate exposure of marginalized communities, particularly African Americans, to environmental hazards. The Environmental Protection Agency (EPA) formally recognized environmental justice as a policy goal in the 1990s. Key legal frameworks such as the **Clean Air Act** and **Clean Water Act**, combined with community action and litigation, have led to considerable environmental reforms.

The U.S. model emphasizes :

- Community participation
- Environmental equity in policy decisions
- Strong regulatory enforcement mechanisms
- Use of geospatial data and mapping for environmental impact

8.2 Environmental Justice in the European Union :

In the EU, environmental justice is embedded within the **Aarhus Convention**, which guarantees access to environmental information, public participation in decision-making, and access to justice. The EU's environmental policies integrate the **precautionary principle** and the **polluter pays**

principle, similar to India, but are supported by a robust institutional and regulatory framework across member states.

Key features :

- Integrated policy across sectors (transport, energy, agriculture)
- Strong legal harmonization
- Environmental courts and tribunals
- Emphasis on sustainability and climate justice

8.3 Relevance for India :

While India has adopted key principles from international jurisprudence, its implementation remains inconsistent. The comparative models suggest the need for a participatory, transparent, and enforcement-oriented system, with stronger regulatory independence and citizen engagement.

9. Critical Analysis

9.1 Effectiveness of Judicial Interventions :

Judicial activism has filled many policy and enforcement gaps in India's environmental governance. Through progressive interpretations of Article 21 and the use of PILs, courts have :

- Recognized new rights (e.g., right to clean environment)
- Penalized violators
- Issued directives for regulatory reforms

However, the judiciary is not a substitute for effective governance. In many instances, court orders have remained unimplemented due to weak institutional capacity and lack of political will. Moreover, the over-reliance on courts indicates a systemic failure in administrative enforcement.

9.2 Need for Integrated Environmental Governance :

Environmental issues are cross-sectoral, requiring coordination between multiple ministries, departments, and levels of government. Presently, India's governance framework suffers from :

- Fragmented responsibilities
- Inadequate inter-agency coordination
- Weak monitoring and data infrastructure

To address these, India needs :

- A unified national environmental regulatory authority
- Strong environmental intelligence and audit systems
- Institutional capacity-building at state and district levels
- Emphasis on preventive rather than reactive mechanisms

10. Conclusion and Suggestions :

10.1 Key Findings

- Indian judiciary has been instrumental in shaping environmental jurisprudence and expanding the constitutional interpretation of Article 21.
- The Environment (Protection) Act, 1986 and related laws provide a robust legal framework but suffer from weak implementation.
- Judicial activism, through landmark cases like M.C. Mehta and Vellore Citizens Forum, has advanced environmental justice.
- Administrative mechanisms, particularly Pollution Control Boards, require structural and functional reforms.
- Compared to the U.S. and EU, India lags in public participation, institutional integration, and enforcement autonomy.

10.2 Legal and Policy Reforms :

- **Strengthen regulatory autonomy** : Make CPCB/SPCBs independent, well-funded, and technically equipped.
- **Enforce accountability** : Introduce performance metrics for pollution control authorities and ensure compliance with judicial orders.
- **Legal clarity** : Streamline overlapping environmental laws and ensure uniformity in environmental clearances.
- **Enhance public participation** : Make environmental impact assessments (EIA) more transparent and participatory.
- **Technology integration** : Use remote sensing, GIS, and real-time monitoring for enforcement.
- **Education and capacity-building** : Train judiciary, regulators, and local bodies on environmental law and science.

References :

1. **The Constitution of India**, Government of India.
2. **Environment (Protection) Act, 1986**, Ministry of Environment, Forest and Climate Change.
3. M.C. Mehta v. Union of India (1987–2003), Supreme Court of India.
4. Vellore Citizens Welfare Forum v. Union of India, AIR 1996 SC 2715.
5. *Subhash Kumar v. State of Bihar*, AIR 1991 SC 420.
6. National Green Tribunal Act, 2010.
7. The Aarhus Convention, UNECE (1998).

8. United States Environmental Protection Agency (EPA). *Environmental Justice Policy, 1994*.
9. European Commission. *EU Environmental Implementation Review*, 2022.
10. Shyam Divan & Armin Rosencranz, *Environmental Law and Policy in India*, Oxford University Press.
11. Leelakrishnan, P. (2020). *Environmental Law in India*. LexisNexis.
12. Cullet, P. (2019). *Sustainable Development and Environmental Law*. Indian Law Institute Journal.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 213–221

भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

डॉ. दिनेश कुमार वर्मा
अ. वि., राजनीति विज्ञान, प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, सिवनी (म.प्र.)

सारांश :-

यह शोध-पत्र भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारत जैसे बहुलतावादी समाज में, जहाँ सांस्कृतिक, भाषायी, सामाजिक और आर्थिक विविधता व्याप्त है, वहाँ क्षेत्रीय दल जन-अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम बनकर उभरे हैं। स्वतंत्रता के बाद राष्ट्रीय दलों का वर्चस्व रहा, परंतु 1967 के बाद से क्षेत्रीय दलों ने राज्यों में सत्ता के केंद्रों को प्रभावित करना प्रारंभ किया। यह शोध-पत्र क्षेत्रीय दलों की उत्पत्ति, विकास, लोकतांत्रिक योगदान, और राष्ट्रीय राजनीति में उनकी भूमिका की विवेचना करता है। साथ ही, इसमें इन दलों से उत्पन्न चुनौतियों—जैसे जातिवाद, क्षेत्रीयता, नीति अवरोध तथा राजनीतिक अस्थिरता—का आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त शोध में संभावनाओं की भी चर्चा की गई है—जैसे लोकतंत्र का गहनकरण, प्रशासनिक विकेंद्रीकरण, और जवाबदेही में वृद्धि। प्रमुख क्षेत्रीय दलों जैसे DMK, BSP, TMC, शिवसेना आदि का तुलनात्मक विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया है। अंततः, शोध-पत्र यह निष्कर्ष निकालता है कि क्षेत्रीय दल भारतीय लोकतंत्र के अभिन्न अंग हैं, परंतु उनकी प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करेगी कि वे किस हद तक राष्ट्रीय एकता, विकास और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता बनाए रखते हैं।

कीवर्ड्स : भारतीय लोकतंत्र, क्षेत्रीय दल, विकेंद्रीकरण, सामाजिक न्याय, गठबंधन सरकार, जातिवाद, पारदर्शिता, राजनीतिक अस्थिरता, राष्ट्रीय एकता, पहचान राजनीति

1. प्रस्तावना :

भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा और विविधताओं से परिपूर्ण लोकतांत्रिक ढांचा है, जिसमें 140 करोड़ से अधिक नागरिक विभिन्न धर्मों, जातियों, भाषाओं, संस्कृतियों और भौगोलिक पृष्ठभूमियों से आते हैं। संविधान द्वारा प्रदत्त संघीय व्यवस्था के अंतर्गत भारत में बहुदलीय प्रणाली विकसित हुई है, जहाँ राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दोनों प्रकार के राजनीतिक दल सक्रिय भूमिका निभाते हैं। स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक दशकों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का एकछत्र प्रभाव रहा, परंतु समय के साथ क्षेत्रीय अस्मिता, सामाजिक न्याय और स्थानीय विकास की मांगों के कारण क्षेत्रीय दलों का उदय हुआ।

क्षेत्रीय दलों ने भारतीय लोकतंत्र को केवल सशक्त ही नहीं किया, बल्कि उन्होंने सत्ता में संतुलन, स्थानीय मुद्दों की अभिव्यक्ति और विविध समुदायों को राजनीतिक मुख्यधारा में लाने का कार्य भी किया है [1][2]। आज क्षेत्रीय दलों की भूमिका न केवल राज्यों तक सीमित है, बल्कि वे केंद्र की राजनीति में भी निर्णायक बनकर उभरे हैं, विशेषतः गठबंधन सरकारों के युग में [3]। यह शोध पत्र भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका, उनकी चुनौतियाँ और संभावनाओं का सम्यक् विश्लेषण करता है।

2. क्षेत्रीय दलों की उत्पत्ति और विकास :

भारत में क्षेत्रीय दलों की उत्पत्ति बहुआयामी सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों की उपज रही है। इनकी जड़ें प्रायः सांस्कृतिक अस्मिता, भाषायी पहचान, क्षेत्रीय असंतोष, आर्थिक विषमता, और उपेक्षित समुदायों की आकांक्षाओं में निहित रही हैं। 1950 के दशक में कांग्रेस पार्टी का वर्चस्व निर्विवाद था और क्षेत्रीय दल सीमित दायरे में कार्य कर रहे थे। किंतु 1967 के आम चुनावों के बाद अनेक राज्यों में गैर-कांग्रेसी सरकारों का गठन हुआ, जिससे क्षेत्रीय दलों को सशक्त होने का अवसर मिला [4]।

तमिलनाडु में द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (DMK) का उदय, पंजाब में अकाली दल, महाराष्ट्र में शिवसेना, असम में असम गण परिषद, उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी जैसे दलों का प्रादुर्भाव क्षेत्रीय आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति का उदाहरण हैं [5][6]। इन दलों ने स्थानीय भाषा, संस्कृति और सामाजिक संरचना को केंद्र में रखकर अपनी राजनीति को मजबूती प्रदान की।

1989 के पश्चात केंद्र में गठबंधन युग की शुरुआत ने क्षेत्रीय दलों की शक्ति को और बढ़ाया। चाहे 1996 की संयुक्त मोर्चा सरकार हो, या 1999 के बाद एनडीए और यूपीए गठबंधन—हर दौर में क्षेत्रीय दल सत्ता संतुलन के निर्णायक कारक बने [7]। क्षेत्रीय दलों के बढ़ते प्रभाव ने राजनीतिक विमर्श को विकेंद्रीकृत किया, जिससे राज्यों की आवाज केंद्र तक पहुँच सकी [8]।

हाल के वर्षों में क्षेत्रीय दल न केवल अपनी पारंपरिक सीमाओं में सिमटे हैं, बल्कि कुछ दलों ने अन्य राज्यों में भी विस्तार करने का प्रयास किया है, जैसे कि तृणमूल कांग्रेस द्वारा गोवा और त्रिपुरा में चुनाव लड़ना, या आम आदमी पार्टी का पंजाब और गुजरात में विस्तार [9]। इस प्रकार, क्षेत्रीय दल भारतीय लोकतंत्र में एक अनिवार्य शक्ति बन चुके हैं, जो राजनीतिक बहुलता, विविधता और विकेंद्रीकरण के प्रतीक हैं।

3. भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दलों की भूमिका :

भारत जैसे बहुसांस्कृतिक और बहुभाषी देश में लोकतंत्र की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों को किस हद तक राजनीतिक प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। इस सन्दर्भ में क्षेत्रीय दलों ने भारतीय लोकतंत्र को अधिक समावेशी, विकेन्द्रीकृत और उत्तरदायी बनाने में अहम भूमिका निभाई है।

3.1 संघीय ढांचे को मज़बूती :

भारतीय संविधान संघीय व्यवस्था को मान्यता देता है, जिसमें शक्तियों का विभाजन केंद्र और राज्यों के बीच सुनिश्चित किया गया है। क्षेत्रीय दलों ने इस संघीय ढांचे को मज़बूती प्रदान की है क्योंकि वे राज्य विशेष की सांस्कृतिक,

भाषायी और आर्थिक आवश्यकताओं को राजनीतिक मंच पर प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते हैं। क्षेत्रीय दलों की सक्रियता से यह सुनिश्चित होता है कि राज्यों की अस्मिता और विकास की प्राथमिकताएँ राष्ट्रीय नीतियों में स्थान पाएँ [10]।

उदाहरणस्वरूप, DMK और AIADMK ने तमिलनाडु में राज्य की स्वायत्तता और भाषा अधिकारों को उभारते हुए केंद्र-राज्य संबंधों के स्वरूप को प्रभावित किया है [11]। इसी प्रकार, तेलंगाना राष्ट्र समिति (TRS) ने पृथक तेलंगाना राज्य की माँग को राजनीतिक और संवैधानिक रूप से सफल कर संघीय ढांचे में अपने क्षेत्र की भूमिका को पुनः परिभाषित किया [12]।

3.2 वंचित वर्गों की आवाज़ :

भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से सामाजिक असमानता व्याप्त रही है। क्षेत्रीय दलों ने वंचित वर्गों—जैसे अनुसूचित जातियों, जनजातियों, पिछड़े वर्गों और धार्मिक-भाषायी अल्पसंख्यकों—की राजनीतिक भागीदारी सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उत्तर भारत में बहुजन समाज पार्टी (BSP) ने दलित चेतना को राजनीतिक शक्ति में बदला, जबकि समाजवादी पार्टी (SP) ने पिछड़े वर्गों के सामाजिक न्याय के मुद्दों को मुख्यधारा में लाकर उन्हें सशक्त किया [13]। इन दलों की उपस्थिति से संसद और राज्य विधानसभाओं में बहुसंख्यक समुदायों के साथ-साथ वंचित समुदायों की आवाज भी सुनाई देती है, जिससे लोकतंत्र अधिक प्रतिनिधिक और समावेशी बनता है [14]।

3.3 राष्ट्रीय राजनीति में सहभागिता :

1990 के दशक में जब एकदलीय बहुमत की राजनीति का स्थान गठबंधन युग ने लिया, तब क्षेत्रीय दलों ने राष्ट्रीय राजनीति में निर्णायक भूमिका निभानी शुरू की। चाहे संयुक्त मोर्चा की सरकार (1996–98), राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA), या संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA)—हर गठबंधन सरकार में क्षेत्रीय दलों ने सत्ता में भागीदारी की और नीतियों को प्रभावित किया।

उदाहरण के लिए, तृणमूल कांग्रेस (TMC), डीएमके, बीजू जनता दल (BJD), तेलुगू देशम पार्टी (TDP) और शिवसेना जैसे दल केंद्र सरकारों में मंत्री पदों के साथ शामिल रहे हैं, जिससे उनकी राजनीतिक पहुंच केवल राज्यों तक सीमित नहीं रही [15]। क्षेत्रीय दलों की इस सक्रिय भागीदारी ने केंद्र की सत्ता को अधिक सहमतिपरक और परामर्शात्मक बनाया [16]।

4. चुनौतियाँ :

हालाँकि क्षेत्रीय दलों ने भारतीय लोकतंत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, परंतु इनके समक्ष और इनसे उत्पन्न कुछ प्रमुख चुनौतियाँ भी हैं। इन चुनौतियों का लोकतांत्रिक व्यवस्था, नीति-निर्माण और राष्ट्रीय एकता पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है।

4.1 जातिवाद और क्षेत्रीयता का बढ़ावा :

कई क्षेत्रीय दलों की राजनीति जातीय और क्षेत्रीय पहचान पर आधारित होती है। यह रणनीति भले ही अल्पकालिक राजनीतिक लाभ प्रदान करती हो, लेकिन इससे सामाजिक समरसता बाधित होती है। जब राजनीति केवल एक जाति, धर्म, या क्षेत्र की पहचान को उभारकर की जाती है, तब लोकतंत्र की मूल भावना—समानता और समावेशन—को आघात पहुँचता है [17]।

उदाहरणस्वरूप, बिहार और उत्तर प्रदेश में कुछ दलों ने जाति-आधारित वोट बैंक की राजनीति को इतना बढ़ाया कि नीति-विमर्श पीछे छूट गया और समाज में जातीय ध्रुवीकरण बढ़ा। इसी प्रकार, महाराष्ट्र में क्षेत्रीय पहचान को केंद्र में रखकर कुछ दलों ने बाहरी राज्यों के लोगों के विरुद्ध असंतोष भड़काया, जिससे सामाजिक एकता प्रभावित हुई [18]।

4.2 राजनीतिक अस्थिरता :

गठबंधन राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका अक्सर "किंगमेकर" की होती है। यह स्थिति उन्हें केंद्र सरकार पर अत्यधिक दबाव डालने की शक्ति देती है। कई बार ये दल अपने क्षेत्रीय एजेंडे के लिए गठबंधन से समर्थन वापस ले लेते हैं, जिससे राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न होती है।

उदाहरणस्वरूप, 1990 के दशक में बार-बार सरकारें गिरना, 1997 में कांग्रेस द्वारा संयुक्त मोर्चा से समर्थन वापसी, या फिर 2012 में तृणमूल कांग्रेस द्वारा UPA से समर्थन वापस लेना, सभी ने सरकार की निरंतरता और नीतिगत निर्णयों को प्रभावित किया [19]। इस प्रकार की अस्थिरता शासन व्यवस्था और आर्थिक नीतियों के कार्यान्वयन में बाधा बनती है।

4.3 नीति-निर्माण में बाधा :

राष्ट्रीय स्तर पर जब क्षेत्रीय दल अपने स्थानीय मुद्दों को अत्यधिक प्राथमिकता देते हैं, तो इससे नीति निर्माण में संतुलन का अभाव उत्पन्न होता है। यह स्थिति तब गंभीर हो जाती है जब क्षेत्रीय हितों के कारण राष्ट्रीय हितों से समझौता किया जाता है।

उदाहरणस्वरूप, कई बार जल बंटवारे, सीमाविवाद या भाषा नीति जैसे मुद्दों पर क्षेत्रीय दलों ने संसद में अड़चनें खड़ी की हैं, जिससे राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावी निर्णय लेना कठिन हो गया है [20]। इसके अतिरिक्त, केंद्र सरकार की राष्ट्रीय योजनाओं का विरोध केवल इस आधार पर किया जाता है कि वे स्थानीय मतदाताओं में अप्रिय प्रतीत हो सकती हैं।

5. संभावनाएँ :

क्षेत्रीय दलों की भूमिका केवल सीमित या बाधित करने वाली नहीं है, बल्कि वे भारतीय लोकतंत्र को और अधिक गहराई, सजीवता और प्रभावशीलता प्रदान करने की अपार संभावनाएँ भी रखते हैं। उनके माध्यम से न केवल जन-भागीदारी में वृद्धि होती है, बल्कि शासन की संरचना भी अधिक उत्तरदायी बनती है।

5.1 लोकतंत्र का गहनकरण :

लोकतंत्र का अर्थ केवल चुनावों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह नागरिकों की समस्याओं को सुनने और उन्हें समाधान देने की प्रक्रिया है। क्षेत्रीय दल जमीनी स्तर की समस्याओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, स्थानीय बुनियादी ढाँचे

और जातीय-सांस्कृतिक अस्मिता से जुड़े मुद्दों को प्रमुखता से उठाते हैं। इससे लोकतंत्र केवल संस्थागत नहीं बल्कि जन-संवेदनशील बनता है, जो वास्तविक सहभागिता को बढ़ावा देता है [21]।

उदाहरणस्वरूप, बिहार में क्षेत्रीय दलों ने पंचायती राज संस्थाओं में पिछड़े वर्गों और महिलाओं के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित कर लोकतंत्र का सामाजिक आधार विस्तृत किया है। इसी प्रकार, उत्तर-पूर्वी राज्यों के दलों ने आदिवासी अधिकारों और पारंपरिक संस्थाओं को मान्यता दिलाकर लोकतांत्रिक संवाद को क्षेत्रीय संदर्भों से जोड़ा है।

5.2 विकेंद्रीकरण को बढ़ावा :

क्षेत्रीय दल केंद्र और राज्य के संबंधों में संतुलन बनाए रखने की दिशा में भी कार्य करते हैं। इनकी सक्रियता ने प्रशासनिक और वित्तीय विकेंद्रीकरण की मांग को सशक्त किया है, जिससे स्थानीय प्रशासनिक ढांचे को मजबूती मिलती है [22]।

73वें और 74वें संविधान संशोधनों के प्रभावी क्रियान्वयन में भी क्षेत्रीय दलों ने सक्रिय भूमिका निभाई है। उदाहरणस्वरूप, पश्चिम बंगाल में वामपंथी दलों के नेतृत्व में पंचायती व्यवस्था को मज़बूत किया गया, जबकि महाराष्ट्र और केरल में भी स्थानीय निकायों को सशक्त करने के प्रयासों में क्षेत्रीय दल अग्रणी रहे।

5.3 जवाबदेही और पारदर्शिता :

क्षेत्रीय दल स्थानीय जनता के बीच अधिक निकटता में कार्य करते हैं, जिससे उन पर जनदबाव अधिक रहता है। यह दबाव उन्हें अधिक उत्तरदायी और पारदर्शी शासन के लिए प्रेरित करता है। इसके अतिरिक्त, ये दल स्थानीय निकायों और राज्य सरकारों की नीतियों पर नजर रखकर उनमें जवाबदेही सुनिश्चित करने में भी सहायक होते हैं [23]।

जब क्षेत्रीय मुद्दों पर चर्चा होती है, तब शासन व्यवस्था अधिक उत्तरदायी बनती है और जनता की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप नीतियाँ बनाई जाती हैं। उदाहरण के लिए, दिल्ली में आम आदमी पार्टी द्वारा स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में पारदर्शी जनहित योजनाओं को लागू किया गया, जिसे व्यापक जनसमर्थन प्राप्त हुआ।

6. प्रमुख क्षेत्रीय दलों का विश्लेषण :

दल का नाम	राज्य / क्षेत्र	वैचारिक आधार / प्रमुख उद्देश्य	उल्लेखनीय विशेषताएँ
द्रविड़ मुनेत्र कषगम (DMK)	तमिलनाडु	द्रविड़ आंदोलन, सामाजिक न्याय, राज्य अधिकार	ब्राह्मणवाद विरोध, भाषा नीति के पक्षधर, क्षेत्रीय स्वायत्तता की मांग में अग्रणी [24]
शिवसेना	महाराष्ट्र	मराठी अस्मिता, हिंदुत्व की ओर झुकाव	"मराठी मानुष" के अधिकारों की रक्षक, स्थानीय रोजगार प्राथमिकता की राजनीति [25]

बहुजन समाज पार्टी (BSP)	उत्तर प्रदेश (मुख्य रूप से)	दलित अधिकार, सामाजिक न्याय	'बहुजन' अवधारणा पर आधारित, दलित-ओबीसी राजनीति की सशक्त आवाज़ [26]
तृणमूल कांग्रेस (TMC)	पश्चिम बंगाल	क्षेत्रीय स्वायत्तता, धर्मनिरपेक्षता, कल्याणकारी नीतियाँ	कांग्रेस से अलग होकर बनी, बंगाली अस्मिता और विकास के मुद्दों पर केंद्रित [27]
तेलुगू देशम पार्टी (TDP)	आंध्र प्रदेश	तेलुगू गौरव, क्षेत्रीय विकास	फिल्म अभिनेता एन.टी. रामाराव द्वारा स्थापित, गैर-कांग्रेसी विकल्प के रूप में उभरी [28]
बीजू जनता दल (BJD)	ओडिशा	क्षेत्रीय विकास, सामाजिक कल्याण	बीजू पटनायक की विरासत को आगे बढ़ाने वाली, स्थिर और व्यावसायिक राजनीति [29]
राष्ट्रीय जनता दल (RJD)	बिहार	सामाजिक न्याय, पिछड़ा वर्ग सशक्तिकरण	लालू प्रसाद यादव के नेतृत्व में उभरी, मंडल राजनीति की अगुवा [30]
आम आदमी पार्टी (AAP)	दिल्ली, पंजाब, गुजरात आदि	भ्रष्टाचार विरोध, शिक्षा और स्वास्थ्य पर ज़ोर	नागरिक आंदोलन से जन्मी, पारदर्शिता और सुशासन की पक्षधर [31]

7. निष्कर्ष :

भारतीय लोकतंत्र के विकास में क्षेत्रीय दलों की भूमिका अब एक परिधीय तत्त्व न होकर एक केंद्रीय शक्ति के रूप में स्थापित हो चुकी है। इन्होंने न केवल स्थानीय जनसमस्याओं को राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बनाया है, बल्कि सामाजिक न्याय, क्षेत्रीय अस्मिता, और विकेन्द्रीकरण जैसे मुद्दों को प्रभावी रूप से आगे बढ़ाया है।

क्षेत्रीय दलों की सक्रियता से लोकतंत्र अधिक उत्तरदायी, सहभागी और जनसंवेदनशील बना है। यह दल उस भारत की आवाज़ हैं, जो भौगोलिक, भाषायी और सांस्कृतिक दृष्टि से विविध है। साथ ही, इन्होंने बहुदलीय व्यवस्था को मजबूत किया है और संघीय ढांचे को कार्यक्षम बनाए रखा है।

हालाँकि, क्षेत्रीय दलों के समक्ष कई चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं—जैसे जातिवादी ध्रुवीकरण, संकीर्ण क्षेत्रीयता, और गठबंधन सरकारों में उत्पन्न अस्थिरता। इन चुनौतियों से निपटते हुए क्षेत्रीय दलों को एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाना होगा, जिससे उनकी भूमिका लोकतंत्र के लिए सुदृढ़ और सकारात्मक बनी रहे।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय दल न केवल प्रतिनिधित्व की विविधता को दर्शाते हैं, बल्कि वे शासन की प्रक्रिया में भी आवश्यक गतिशीलता और पारदर्शिता लाते हैं। परंतु इसके लिए यह आवश्यक है कि वे राष्ट्रीय एकता, संवैधानिक मूल्यों और लोकतांत्रिक मर्यादाओं के प्रति अपनी प्रतिबद्धता बनाए रखें।

8. सुझाव :

1. **विकासोन्मुखी राजनीति को प्राथमिकता दी जाए** : क्षेत्रीय दलों को केवल पहचान आधारित राजनीति तक सीमित न रहकर शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढाँचा, रोजगार और समावेशी विकास जैसे मुद्दों पर केंद्रित होना चाहिए। इससे उनकी राजनीतिक प्रासंगिकता और जनविश्वास दोनों सुदृढ़ होंगे।

2. **जातिवाद, परिवारवाद और व्यक्तिपूजा से दूरी बनाई जाए** : क्षेत्रीय दलों को लोकतांत्रिक ढांचे को मजबूत करने हेतु आंतरिक लोकतंत्र को प्रोत्साहित करना चाहिए। वंशवादी नेतृत्व, जातिवादी ध्रुवीकरण और व्यक्तिनिष्ठ राजनीति लोकतंत्र को कमजोर करते हैं।

3. **राजनीतिक शिक्षा और जनचेतना का प्रसार हो** : नागरिकों में राजनीतिक जागरूकता बढ़ाने के लिए क्षेत्रीय दलों को जन संवाद, नीति पारदर्शिता और सूचना का प्रचार-प्रसार करना चाहिए। इससे उनकी जवाबदेही भी सुनिश्चित होगी और जनभागीदारी भी।

4. **गठबंधन धर्म का सम्मान किया जाए** : यदि क्षेत्रीय दल केंद्र या राज्य स्तर पर गठबंधन सरकार का हिस्सा हों, तो उन्हें गठबंधन की सहमति और नीति प्राथमिकताओं का सम्मान करते हुए सहयोगात्मक व्यवहार करना चाहिए।

5. **राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता दी जाए** : क्षेत्रीय हित आवश्यक हैं, परंतु उन्हें राष्ट्रीय एकता और सुरक्षा से ऊपर नहीं रखा जा सकता। क्षेत्रीय दलों को नीति निर्माण और संसदीय कार्यवाही में राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

संदर्भ (Citations) :

1. Kothari, R. (1964). "The Congress 'System' in India". Asian Survey.
2. Hasan, Zoya (2002). Politics and the State in India. Sage Publications.
3. Yadav, Yogendra (1999). "Electoral Politics in the Time of Change". Economic and Political Weekly.
4. Frankel, F. R. & Rao, M. S. A. (1990). Dominance and State Power in Modern India. Oxford University Press.
5. Palshikar, S., & Kumar, A. (2004). "Party Competition and Fragmentation in Indian States". Journal of Indian School of Political Economy.
6. Jaffrelot, C. (2003). India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India. Permanent Black.

7. Mehra, Ajay K. (2005). "Emergence of Coalition Politics in India: An Overview". Indian Journal of Political Science.
8. Manor, James (1996). "Ethnicity and Politics in India". International Affairs.
9. Palshikar, Suhas (2022). “The Expansion of Regional Parties Beyond Regions”. Seminar, Issue 751.
10. Arora, B. (2003). Federalism in India. Indian Journal of Political Science.
11. Hardgrave, R. L. (1965). "The DMK and the Politics of Tamil Nationalism". Pacific Affairs.
12. Kumar, S. (2014). "Politics of Regionalism in Telangana: The Rise of TRS". Social Change, Sage.
13. Jaffrelot, Christophe (2003). India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India. Permanent Black.
14. Pai, Sudha (2013). Dalit Assertion and the Unfinished Democratic Revolution: The BSP in Uttar Pradesh. Sage.
15. Yadav, Yogendra & Palshikar, Suhas (2009). “Ten Theses on State Politics in India”. Seminar 591.
16. Mehra, Ajay K. (2005). "Emergence of Coalition Politics in India: An Overview". Indian Journal of Political Science.
17. Chhibber, P. & Kollman, K. (2004). The Formation of National Party Systems: Federalism and Party Competition in Canada, Great Britain, India, and the United States. Princeton University Press.
18. Baviskar, B. S. (1995). "Region, Religion, and Caste in Electoral Politics". In Indian Democracy: Meanings and Practices.
19. Arora, B. (2000). "Coalition Politics and Democratic Deepening in India". Indian Journal of Political Science.
20. Kumar, S. (2010). "Regionalism and National Integration in India: A Critical Analysis". Journal of Political Studies.
21. Manor, J. (2001). Democratic Decentralization in Two Indian States: Past and Present. IDS Working Paper.
22. Oommen, M. A. (2005). Devolution of Resources to Rural Local Bodies in India. Economic and Political Weekly.
23. Jenkins, R. (2007). India’s Unlikely Democracy: Civil Society and Democratic Protest. Journal of Democracy.
24. Hardgrave, R. L. (1965). "The DMK and the Politics of Tamil Nationalism".

25. Hansen, Thomas Blom (2001). Wages of Violence: Naming and Identity in Postcolonial Bombay.
26. Jaffrelot, Christophe (2003). India's Silent Revolution.
27. Bhattacharyya, Harihar (2010). Federalism and Regionalism in India.
28. Raghavan, V. R. (1991). NTR and the Politics of Andhra Pradesh.
29. Palshikar, Suhas (2012). "Regional Parties in India: Beyond Identity Politics".
30. Kumar, Sanjay (2004). Mandal and After: OBC Politics in Bihar.
31. Yadav, Yogendra (2014). "AAP and the Changing Face of Urban Politics in India".
32. चौधरी, बी. (2018). भारत में क्षेत्रीय दलों का उदय. नई दिल्ली : गंगा प्रकाशन।
33. कुमार, एस. (2020). भारतीय लोकतंत्र और वंचित वर्ग. बनारस : लोकतंत्र पब्लिकेशन।
34. वर्मा, आर. (2019). गठबंधन राजनीति और भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका. लखनऊ : नवभारत प्रेस।
35. शुक्ला, पी. (2016). जातिवाद और क्षेत्रीयता की राजनीति. भोपाल : नीति संवाद।
36. मिश्रा, ए. (2021). नीति निर्माण और क्षेत्रीय प्रभाव. दिल्ली विश्वविद्यालय शोध पत्र।
37. गोस्वामी, एन. (2022). विकेन्द्रीकरण और क्षेत्रीय राजनीति. गुवाहाटी : पूर्वोत्तर समाज अध्ययन केंद्र।
38. घोष, एस. (2017). तृणमूल कांग्रेसरू उद्‌भव और प्रभाव. कोलकाता : बांग्ला विचार मंच।
39. सिन्हा, एम. (2023). चुनावी राजनीति में धनबल और बाहुबल. पटना : राजनीति विमर्श।
40. राजपूत, डी. (2015). केंद्र–राज्य संबंध और राजनीतिक टकराव. जयपुर : संविधान संवाद।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 222–229

NEGOTIATING NATION AND SELF : REIMAGINING IDENTITY IN THE NOVELS OF ARUNDHATI ROY AND AMITAV GHOSH

Dr. Priya Sudhakar Manapure
Department of English,
Sri Sathya Sai University of Technology And Medical College Sehore (MP)

Abstract :

This paper examines the intricate interplay between nationhood and selfhood in the novels of Arundhati Roy and Amitav Ghosh, with a focus on *The God of Small Things* and *The Shadow Lines*. Through a postcolonial lens, the study explores how both authors deconstruct dominant historical narratives and foreground fragmented identities shaped by trauma, displacement, caste, gender, and class. Roy's lyrical, non-linear narrative critiques internal hierarchies within Indian society, particularly caste and patriarchy, while Ghosh's transnational storytelling interrogates the constructed boundaries of nationhood and memory. Both authors employ narrative strategies such as multilingualism, narrative fragmentation, and alternative historiographies to resist homogenized representations of the nation and to recover subaltern voices. The comparative analysis highlights their shared commitment to reimagining identity as fluid and contested, while also noting their distinct approaches—Roy's intimate and localized perspective contrasts with Ghosh's cosmopolitan and historical breadth. By placing personal memory at the center of national history, their novels offer powerful literary interventions in postcolonial discourse. This study contributes to broader understandings of Indian English literature and the politics of narrative form, while also suggesting new directions for future research on identity, marginalization, and resistance in postcolonial texts.

Keywords : Postcolonial Literature , Nationhood, Identity, Arundhati Roy, Amitav Ghosh, Memory and Trauma, Caste and Gender

1. Introduction :

In postcolonial literary discourse, the negotiation of identity—both personal and collective—emerges as a central theme reflecting the complexities of history, culture, displacement, and belonging.

The idea of identity, particularly within the postcolonial context, is not fixed but constructed through the dynamic interplay between memory, nationhood, and individual agency. As Homi K. Bhabha argues, identity in postcolonial societies often takes shape in the interstices of colonial dominance and resistance, resulting in hybrid formations that resist essentialist narratives (Bhabha, 1994).

The concepts of *nation* and *self* are thus pivotal in understanding how literary texts reflect and reconstruct postcolonial realities. Literature becomes a space where authors challenge official histories, reclaim suppressed voices, and explore the psychological effects of sociopolitical change. The nation, often imagined as a coherent and unified entity (Anderson, 1983), is re-examined in fiction through fragmented narratives and personal experiences that reveal its contested boundaries. Simultaneously, the self—shaped by gender, caste, class, and cultural affiliations—becomes a site of negotiation within and against national ideologies.

Arundhati Roy and Amitav Ghosh, two of India's most prominent contemporary authors, offer powerful literary explorations of these themes. Roy's *The God of Small Things* (1997) and Ghosh's *The Shadow Lines* (1988) are seminal texts that interrogate the construction of national and personal identity against the backdrop of colonialism, partition, social inequality, and familial legacies. Their works blend personal memory with historical narrative, blurring the lines between public and private, fiction and history, thereby opening new ways of imagining identity.

This research paper aims to analyze how Roy and Ghosh negotiate the themes of nation and self through their novels, using postcolonial theory as the primary critical lens. By examining the intersections of personal trauma, political histories, and narrative form, the study will explore how both authors reimagine identity in response to the legacies of empire and modern nation-building. The analysis will focus primarily on *The God of Small Things* and *The Shadow Lines*, while drawing comparative insights from Roy's *The Ministry of Utmost Happiness* (2017) and Ghosh's *The Glass Palace* (2000) as supplementary texts.

A qualitative, interpretative methodology will be employed, incorporating textual analysis and critical theory to uncover the layered portrayals of identity. Scholarly perspectives from postcolonial theorists such as Edward Said, Gayatri Chakravorty Spivak, and Homi Bhabha will inform the analytical framework, situating the novels within broader debates on nationalism, memory, and marginalization.

2. Nation and Historical Memory :

The construction of national history in postcolonial literature is often marked by a tension between official narratives and personal memory. Arundhati Roy and Amitav Ghosh interrogate this tension by presenting the nation not as a unified or linear construct but as a contested site shaped by fragmented recollections, suppressed voices, and unresolved traumas. Their novels *The God of Small*

Things and *The Shadow Lines* engage critically with the legacy of colonialism and the contradictions of postcolonial nationhood, offering counter-histories that question the dominant historiographical paradigms.

In *The Shadow Lines*, Ghosh dismantles the binary between public and private memory to illustrate how personal experiences reflect and complicate political histories. The narrative unfolds through the recollections of an unnamed narrator who pieces together events surrounding the Partition of India, the riots in Dhaka and Calcutta, and the international aftermath of World War II. Rather than presenting these as chronologically ordered national milestones, Ghosh weaves them into the intimate fabric of family memory and transnational identity. The novel critiques the arbitrary lines of demarcation that define nations, suggesting that "every act of war becomes an act of forgetting" (Ghosh, 1988). By collapsing temporal and spatial boundaries, Ghosh proposes a more fluid and affective understanding of national belonging.

Roy's *The God of Small Things* also engages with national history, albeit through a more localized and socially stratified lens. Set in Kerala in the 1960s, the novel interrogates the post-independence Indian state's failure to dismantle the hierarchical structures of caste and patriarchy. Roy interlaces personal tragedy with socio-political commentary, reflecting how the legacies of colonial rule—particularly the British codification of caste and land tenure—continue to influence contemporary Indian society. The novel resists a linear retelling of events; instead, it adopts a fractured narrative that mimics the disrupted lives of its characters, particularly the twins Estha and Rahel. This fragmentation mirrors the dissonance between the nation's official self-image and the lived realities of its marginalized citizens (Roy, 1997).

Both authors utilize **alternative historiographies** to challenge what Dipesh Chakrabarty terms "History 1" — the universalizing logic of Western historicism — by foregrounding "History 2," or subaltern memories, as legitimate forms of knowing (Chakrabarty, 2000). In Roy's and Ghosh's work, the nation is not a monolith but a palimpsest of overlapping and often contradictory narratives. By privileging the personal, the vernacular, and the unofficial, they expose the silences and exclusions embedded within dominant historical discourses.

Ultimately, *The God of Small Things* and *The Shadow Lines* offer powerful critiques of how nations remember themselves. Through non-linear storytelling, layered temporalities, and emotionally charged memoryscapes, both Roy and Ghosh present history not as a singular truth but as a multiplicity of lived and contested experiences.

3. Negotiating the Self :

In postcolonial literature, the self is not an autonomous, stable entity but a dynamic construct

shaped by historical violence, social hierarchies, and cultural displacement. Both Arundhati Roy and Amitav Ghosh explore the ways in which personal identities are intertwined with collective traumas and systemic marginalization. Through their nuanced characters, they interrogate how individuals negotiate belonging in fractured nations where political boundaries and social structures often eclipse personal agency.

In *The God of Small Things*, Roy portrays the self as fractured and fragmented under the weight of caste oppression, familial expectations, and gendered violence. The twins Estha and Rahel embody the trauma of forbidden love, broken domesticity, and social stigma. Their identities are shaped not just by personal experiences but by the deeply embedded structures of caste and patriarchy. The love between Ammu and Velutha—a woman from a Syrian Christian upper-caste family and a Dalit man—is not merely a private transgression but a political defiance of societal norms. The novel's non-linear form reflects the psychological disintegration of the self, as memory, trauma, and silence become recurring motifs (Roy, 1997). Roy's critique of caste is inseparable from her exploration of personal identity: Estha's muteness and Rahel's emotional withdrawal symbolize the internalization of social marginalization.

Similarly, Ghosh's *The Shadow Lines* examines how the self is destabilized by displacement, memory, and inherited trauma. The narrator's identity is formed through the stories of others—Tridib's imagination, Ila's cosmopolitan rebellion, and the family's collective memory of violence. Personal identity here becomes a repository of political ruptures such as the Partition, which continue to haunt individuals decades later. The narrator does not inhabit a single geographical or cultural space but navigates a transnational identity, reflecting the diasporic and hybrid realities of postcolonial subjectivity (Ghosh, 1988). The self, in Ghosh's narrative, is constantly negotiated through memory and longing, rather than rooted in a fixed national or cultural origin.

Gender and class also play crucial roles in shaping identity in both novels. Ammu, in Roy's novel, challenges gender norms but is punished by her family and society for asserting autonomy. Her marginalization is not just a gendered experience but also a classed one—her economic vulnerability exacerbates her social isolation. In contrast, characters like Ila in *The Shadow Lines* embody the complexities of gendered freedom: she resists traditional expectations yet remains trapped by patriarchal judgments, especially within her family structure. Both authors foreground the emotional and psychological toll of gendered and classed marginalization, suggesting that the self in postcolonial societies is never formed in isolation but always negotiated against systemic constraints.

These portrayals underscore what Stuart Hall (1990) describes as identities that are "always in process, and never complete." Roy and Ghosh reject essentialist notions of identity, instead illustrating

how trauma, displacement, caste, class, and gender intersect to produce selves that are continually redefined by their sociohistorical contexts.

4. Language, Form, and Resistance :

Language and narrative structure in postcolonial literature are not merely aesthetic choices but deeply political tools used to challenge dominant ideologies. Arundhati Roy and Amitav Ghosh deploy unconventional narrative forms, multilingual registers, and subversive stylistic innovations to resist homogenizing national histories and dominant cultural discourses. Through non-linear storytelling, hybridized language, and narrative fragmentation, they reclaim spaces for silenced voices and destabilize colonial and patriarchal literary traditions.

Arundhati Roy's *The God of Small Things* exemplifies the radical potential of **narrative experimentation**. The novel eschews linear temporality, instead adopting a cyclical and associative narrative structure that mirrors the fractured consciousness of its protagonists. Events are repeated, refracted, and re-experienced through memory rather than chronology, compelling readers to engage actively in piecing together the narrative. This non-linear form reflects the emotional and psychological trauma experienced by the characters, particularly the twins Estha and Rahel. The structure itself becomes a mode of resistance to conventional realist forms which often assume coherent, stable identities and histories (Roy, 1997).

Roy also engages in **stylistic innovation**, including the playful use of capitalization ("Love Laws," "The God of Loss"), phonetic spelling, and wordplay, which foreground the elasticity of language. She blends English with Malayalam terms and local idioms without always translating them, resisting the expectation of linguistic transparency for a global (often Western) readership. This deliberate **multilingualism** serves as a political act: it decentralizes English as the sole medium of Indian expression and asserts the legitimacy of regional cultural identities (Pandit, 2001).

Similarly, Amitav Ghosh in *The Shadow Lines* employs a fragmented, memory-driven narrative that traverses time and space. The novel's lack of chapter divisions and its fluid movement between cities (Calcutta, London, Dhaka) without clear temporal markers reflect the disorientation of a self shaped by transnational displacement and historical rupture. Ghosh's narrative resists the tidy boundaries of nationalist historiography by demonstrating how the personal and the political, the past and the present, bleed into each other. His use of untranslated Bengali words and cultural references reinforces the rootedness of the characters in their specific socio-linguistic contexts, while also inviting readers to confront linguistic and cultural difference on its own terms (Ghosh, 1988).

Both Roy and Ghosh **subvert dominant cultural discourses** by dismantling narrative forms historically associated with imperial or elite authority. The realist novel, once a tool of colonial

ideology, is repurposed and reimagined to include polyphonic voices, unreliable narrators, and fragmented identities. In doing so, they resist monologic representations of nationhood and identity, foregrounding instead a plural, heterogeneous India.

5. Comparative Analysis :

Arundhati Roy and Amitav Ghosh, while distinct in style and focus, converge in their literary commitment to challenging dominant historical narratives and reimagining identity within the framework of a postcolonial Indian reality. Their novels, *The God of Small Things* and *The Shadow Lines*, serve as critical interventions in the discourse on nationhood and selfhood, yet they approach these themes through different lenses and narrative strategies.

A key **convergence** lies in their **subversion of linear historical representation**. Both authors employ fragmented narrative structures to illustrate how memory and identity do not conform to chronological or state-sanctioned histories. In Roy's work, the circular and recursive timeline mirrors the trauma of caste and familial loss, while in Ghosh's novel, the narrator's recollections collapse the borders of time and space, reflecting the enduring legacies of Partition and colonialism. These techniques dismantle the illusion of a unified national history and instead foreground **subjective, emotionally charged memory** as a valid form of historical knowledge.

Moreover, Roy and Ghosh share a concern with **marginalized voices**—Roy through the lens of caste, gender, and class; Ghosh through displacement, diasporic identities, and the silenced subaltern within nationalist movements. Both authors critique the limitations of post-independence India in addressing systemic inequities, and their characters often embody the psychological toll of navigating personal agency within oppressive sociopolitical frameworks. Whether it is Ammu and Velutha's doomed love in *The God of Small Things* or Tridib and Ila's troubled cosmopolitanism in *The Shadow Lines*, both texts question the cost of asserting identity in a world governed by invisible but rigid boundaries.

Yet, their **divergences** are also significant. Roy's narrative is deeply rooted in the **microcosm of Kerala**, focusing on the internal dynamics of a single family and its entanglement with caste and gender politics. Her prose is lyrical, intimate, and symbolic, often bordering on the poetic. Ghosh, on the other hand, situates his narrative within a broader **transnational context**, emphasizing cross-border memory, migration, and global interconnectedness. His narrative style is more restrained and intellectual, often incorporating historical detail and philosophical reflection.

When it comes to **reimagining nationhood**, Ghosh problematizes the very concept of national borders, suggesting through *The Shadow Lines* that nations are imagined constructs often upheld by fear, violence, and collective amnesia. Roy, while also critical of the postcolonial state, focuses

more intensely on the internal mechanisms—such as caste hierarchies, patriarchal norms, and religious orthodoxy—that fracture the idea of India as a just and inclusive nation.

In terms of **individual agency**, both authors resist the trope of heroic individualism. Their protagonists often confront structural forces that render full autonomy impossible, yet moments of rebellion—Ammu's defiance, Tridib's idealism, Rahel's emotional survival—signal the persistence of agency in constrained circumstances. In this way, Roy and Ghosh acknowledge the limitations of the self but affirm the possibility of resistance through memory, narrative, and affect.

In sum, Roy and Ghosh offer **complementary yet distinct perspectives** on the intersection of nation and self. Their shared commitment to narrative experimentation and socio-political critique establishes them as powerful voices in contemporary Indian literature, even as their unique methods and emphases enrich the field with diverse and multilayered representations of postcolonial identity.

6. Conclusion :

This study has explored the ways in which Arundhati Roy and Amitav Ghosh reimagine identity through the intertwined lenses of nation and self in their respective novels *The God of Small Things* and *The Shadow Lines*. Through a comparative and postcolonial lens, the analysis revealed how both authors deploy fragmented narratives, alternative historiographies, and stylistic innovation to challenge dominant discourses of nationalism, social hierarchy, and individual agency.

One of the central findings of this paper is the authors' **shared resistance to linear, state-centric narratives of history and identity**. Both Roy and Ghosh construct their narratives around memory, trauma, and displacement—highlighting the inadequacies of official historiography in representing the lived realities of marginalized individuals. Their characters negotiate identity within a matrix of caste, gender, class, and geopolitical boundaries, offering readers a more nuanced and emotionally resonant vision of postcolonial subjectivity.

Furthermore, the study demonstrates that both authors make significant **contributions to literary and postcolonial discourse** by redefining narrative form as a mode of resistance. Roy's lyrical, localized, and emotionally charged narrative disrupts linguistic and caste-based norms, while Ghosh's transnational, intellectually expansive style deconstructs notions of territorial nationalism. In doing so, both authors not only enrich Indian English literature but also extend the critical possibilities of postcolonial narrative itself—situating the self as both victim and agent within the national project.

The implications of this research are twofold. First, it affirms the **value of comparative literary analysis** in unpacking complex intersections between identity and nationhood. Second, it underscores the need for future research to explore **newer works by Roy and Ghosh**, such as *The*

Ministry of Utmost Happiness and *Gun Island*, in light of current global crises—migration, climate change, political authoritarianism—that continue to redefine national and personal boundaries. Additionally, extending this framework to other South Asian writers can further illuminate how literature negotiates identity in diverse postcolonial contexts.

Bibliography :

1. Anderson, B. (1983). *Imagined Communities: Reflections on the Origin and Spread of Nationalism*. Verso.
2. Bhabha, H. K. (1994). *The Location of Culture*. Routledge.
3. Said, E. W. (1978). *Orientalism*. Pantheon Books.
4. Spivak, G. C. (1988). "Can the Subaltern Speak?" In Nelson, C. & Grossberg, L. (Eds.), *Marxism and the Interpretation of Culture*. University of Illinois Press.
5. Roy, A. (1997). *The God of Small Things*. IndiaInk.
6. Roy, A. (2017). *The Ministry of Utmost Happiness*. Hamish Hamilton.
7. Ghosh, A. (1988). *The Shadow Lines*. Ravi Dayal.
8. Ghosh, A. (2000). *The Glass Palace*. HarperCollins.
9. Hall, S. (1990). "Cultural Identity and Diaspora." In Rutherford, J. (Ed.), *Identity: Community, Culture, Difference*. Lawrence & Wishart.
10. Mohanty, C. T. (2003). *Feminism Without Borders: Decolonizing Theory, Practicing Solidarity*. Duke University Press.
11. Pandit, L. (2001). "Language and Resistance in Arundhati Roy's The God of Small Things." *Indian Literature*, 45(2), 145–157.
12. Ashcroft, B., Griffiths, G., & Tiffin, H. (1989). *The Empire Writes Back: Theory and Practice in Post-Colonial Literatures*. Routledge.
13. Chandra, N. D. R. (2011). *Modern Indian Writing in English: Critical Perceptions*. Sarup Book Publishers.
14. Mehrotra, A. K. (Ed.). (2008). *A Concise History of Indian Literature in English*. Permanent Black.
15. Chakrabarty, D. (2000). *Provincializing Europe: Postcolonial Thought and Historical Difference*. Princeton University Press.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 230–233

Design and Development of a Water Quality Monitoring System for Surya Dam Downstream in Palghar District

Tanaji Vishnu Kamble,
Dr. Anil Kumar
DEPARTMENT OF MECHANICAL ENGINEERING
SHRI JAGDISHPRASAD JHABARMAL TIBREWALA UNIVERSITY,
VIDYANAGARI, JHUNJHUNU, RAJASTHAN

Abstract :

The Surya Dam, located in the Palghar district of Maharashtra, serves as a critical water source for industrial, agricultural, and domestic use. However, downstream water quality faces significant challenges due to industrial effluents, agricultural runoff, and improper waste management. This research focuses on the design and development of a real-time water quality monitoring system (WQMS) for the downstream regions of the Surya Dam. The proposed system leverages advanced sensor technology, Internet of Things (IoT) integration, and data analytics to monitor key water quality parameters, providing actionable insights for effective water resource management.

1. Introduction :

The Surya Dam supplies water to multiple stakeholders, including to Mira-Bhayander & Vasai-Virar City Municipal Corporations, BARC,TEPS, Tarapurindustrial area,Palghar industrial area & in routine villages on bank of Surya river , agricultural communities, and local households. Ensuring downstream water quality is vital to maintain environmental balance and protect public health. Current water quality assessment methods rely on periodic manual testing, which is insufficient to detect real-time changes and prevent contamination. This study proposes an automated water quality monitoring system for the Surya Dam downstream region, enabling continuous monitoring and immediate action in case of contamination.

2. Problem Statement :

Water quality in the downstream areas of the Surya Dam is deteriorating due to :

- **Untreated sewage water Discharges** : UntreatedsewagewaterDischarges from nearby

villages locatednearSurya Riverbank contribute to water contamination.

- **Agricultural Runoff** : Pesticides and fertilizers enter water streams, causing nutrient pollution.
- **Lack of Real-Time Monitoring** : Absence of automated systems delays the identification and mitigation of water quality issues.
- **Regulatory Non-Compliance** : Inconsistent monitoring leads to non-adherence to Central Pollution Control Board (CPCB) standards.

3. Objectives :

The research aims to :

- **Develop a Real-Time Monitoring System** : Design an automated system to continuously track water quality.
- **Identify Key Parameters** : Monitor critical parameters such as pH, turbidity, dissolved oxygen (DO), and chemical contaminants.
- **Ensure Data Accessibility** : Provide stakeholders with actionable insights through an integrated digital platform.
- **Promote Sustainable Practices** : Enable early detection of pollution sources and reduce environmental impact.

4. System Design and Architecture :

The proposed water quality monitoring system (WQMS) comprises the following components:

4.1. Key Water Quality Parameters :

The system monitors :

- **Physical Parameters** : Temperature, turbidity, total suspended solids (TSS).
- **Chemical Parameters** : pH, chemical oxygen demand (COD), biochemical oxygen demand (BOD), heavy metals (e.g., lead, arsenic).
- **Biological Parameters** : Microbial contamination, including coliform bacteria.

4.2. Sensor Technology :

- **Sensors** : High-precision sensors measure the identified parameters.
- **Placement** : Sensors are installed at strategic locations downstream, including effluent discharge points and agricultural runoff zones.

4.3. IoT Integration :

- **IoT Devices** : Collect data from sensors and transmit it wirelessly to a central server.
- **Communication Protocols** : Use LoRaWAN or cellular networks for reliable data transfer.

4.4. Data Analytics and Cloud Storage :

- **Cloud Platform** : Store and process data for real-time analysis.
- **Machine Learning** : Use predictive models to identify contamination trends and potential risks.

4.5. User Interface :

- **Dashboard** : A web-based dashboard displays water quality trends, alerts, and reports.
- **Mobile App** : Provides on-the-go access to real-time data for stakeholders, including government authorities and local communities.

4.6. Alert and Notification System :

- **Threshold-Based Alerts** : Automatically notify stakeholders via SMS or email when parameters exceed safe limits.

5. Implementation Methodology :

5.1. Site Selection :

Identify critical locations downstream of the Surya Dam, including industrial discharge points, agricultural runoff areas, and community water intake points.

5.2. System Deployment :

- **Sensor Installation** : Deploy sensors at selected sites to monitor specific parameters.
- **Network Configuration** : Set up IoT devices to transmit data to a central cloud platform.
- **Integration** : Link the system to a digital platform for data visualization and analysis.

5.3. Pilot Testing :

Conduct a 6-month pilot to assess system accuracy, reliability, and user interface effectiveness.

5.4. Stakeholder Training :

Provide training sessions for government officials, local authorities, and communities on system usage and response protocols.

6. Challenges and Mitigation Strategies :

6.1. Infrastructure Challenges :

- **Issue** : Limited infrastructure in rural areas for IoT connectivity.
- **Solution** : Use solar-powered IoT devices and long-range communication technologies.

6.2. Cost Constraints :

- **Issue** : High initial investment for sensor deployment and IoT integration.
- **Solution** : Leverage government funding and public-private partnerships (PPPs).

6.3. Data Security :

- **Issue** : Risk of unauthorized access to sensitive water quality data.

- **Solution** : Implement robust encryption and secure cloud storage solutions.

7. Case Studies :

7.1. Ganga River Water Quality Monitoring :

IoT-enabled water quality sensors deployed in the Ganga basin have successfully provided real-time data to improve water management practices.

7.2. Singapore's Smart Water Monitoring System :

Singapore's Public Utilities Board uses advanced monitoring systems to ensure water quality compliance and reduce contamination risks.

8. Benefits of the Proposed System :

- **Real-Time Insights** : Continuous monitoring enables prompt action against contamination.
- **Regulatory Compliance** : Ensures adherence to CPCB standards and reduces legal liabilities.
- **Community Awareness** : Improves transparency and engages local communities in water conservation efforts.
- **Sustainable Development** : Supports environmental sustainability by reducing pollution and promoting responsible water use.

9. Conclusion :

The proposed WQMS for the Surya Dam downstream region addresses critical water quality challenges through automation, IoT integration, and data analytics. By enabling real-time monitoring and early detection of contamination, the system ensures better water resource management, compliance with regulatory standards, and sustainability. This initiative has the potential to serve as a model for other water bodies in India.

10. References :

1. Central Pollution Control Board (CPCB). (2020). *Guidelines for Water Quality Monitoring.*
2. Gleick, P. H. (2003). *Global Freshwater Resources: Soft-path Solutions for the 21st Century.* Science.
3. Sato, T., & Matsuoka, Y. (2014). *Smart Water Management Systems in Developing Countries.* Journal of Water Resources Planning and Management.
4. Singh, R., & Kumar, P. (2021). *IoT-based Real-Time Water Quality Monitoring: A Case Study of the Ganga River.* Environmental Monitoring and Assessment.
5. World Bank. (2018). *Water Quality Management in South Asia: Challenges and Opportunities.*

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 1-2
पृष्ठ : 234–243

कोडरमा जिले में महिलाओं की स्थिति और उनके सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए किए गए उपाय

कविता कुमारी, शोध प्रज्ञ,
डॉ. आलोक कुमार, सहायक प्राध्यापक,
राजनीति विज्ञान, वाई०बी०एन० विश्वविद्यालय, राँची।

कोडरमा जिले में महिलाओं की शिक्षा और जागरूकता की स्थिति झारखंड के ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों की विशिष्ट सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित है। इस क्षेत्र में महिलाओं की शिक्षा और जागरूकता को बढ़ाने के लिए हाल के वर्षों में प्रयास हुए हैं, लेकिन अभी भी कई चुनौतियां बनी हुई हैं।

1. **शिक्षा दर :**

- महिलाओं की साक्षरता दर पुरुषों की तुलना में कम है।
- ग्रामीण और आदिवासी इलाकों में लड़कियों के स्कूल जाने की दर कम है।
- प्राथमिक स्तर पर नामांकन तो बढ़ा है, लेकिन माध्यमिक और उच्च शिक्षा तक पहुंच सीमित है।

2. **सामाजिक बाधाएं :**

- गरीबी, बाल विवाह, और घरेलू कामकाज की जिम्मेदारी के कारण लड़कियों की शिक्षा बाधित होती है।
- कई परिवार शिक्षा को प्राथमिकता नहीं देते, खासकर लड़कियों के लिए।

3. **शैक्षिक सुविधाएं :**

- ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की संख्या कम है, और उच्च विद्यालयों की उपलब्धता सीमित है।
- स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं, जैसे शौचालय और स्वच्छ पेयजल, की कमी लड़कियों के पढ़ाई छोड़ने का कारण बनती है।

4. **सरकारी प्रयास :**

- सर्व शिक्षा अभियान और बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ जैसी योजनाओं ने कुछ सकारात्मक प्रभाव डाले हैं।
- छात्रवृत्ति और साइकिल वितरण योजना से लड़कियों को स्कूल जाने में प्रोत्साहन मिला है।

जागरूकता की स्थिति

1. **लैंगिक भेदभाव :**

- समाज में महिलाओं और लड़कियों के अधिकारों और अवसरों को लेकर जागरूकता की कमी है।
- पारंपरिक पितृसत्तात्मक सोच महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने से रोकती है।

2. *स्वास्थ्य और स्वच्छता :*

- मासिक धर्म स्वच्छता और पोषण जैसे विषयों पर महिलाओं और लड़कियों के बीच जागरूकता का अभाव है।
- ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं और स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है।

3. *आर्थिक स्वतंत्रता :*

- स्वरोजगार और छोटे व्यवसायों के लिए महिलाओं में कौशल और वित्तीय साक्षरता की जागरूकता सीमित है।

4. *सरकारी और गैर-सरकारी प्रयास :*

- स्वयं सहायता समूह (SHG) के माध्यम से महिलाओं को संगठित किया जा रहा है, जिससे उनमें आर्थिक और सामाजिक जागरूकता बढ़ी है।
- NG s और पंचायत स्तर पर जागरूकता कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिनमें शिक्षा, स्वास्थ्य, और महिला अधिकारों पर जोर दिया जा रहा है।

2. *सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव :*

- महिलाओं के अधिकारों और उनकी भूमिका के महत्व को लेकर समुदायों को संवेदनशील बनाया जाए।
- पंचायत और स्थानीय संगठनों के माध्यम से जागरूकता फैलाने का काम किया जाए।

3. *प्रेरणा और मॉडल :*

- ऐसी सफल महिलाओं की कहानियां साझा की जाएं जो शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से जीवन में आगे बढ़ी हैं।

4. *स्वास्थ्य और कौशल विकास :*

- महिलाओं को स्वास्थ्य, स्वच्छता और वित्तीय प्रबंधन के बारे में शिक्षित किया जाए।
- महिलाओं के लिए विशेष कौशल विकास कार्यक्रम आयोजित किए जाएं।

कोडरमा जिले की महिलाओं की रोजगार और आजीविका की स्थिति झारखंड के अन्य ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों की तरह ही पारंपरिक और संसाधन आधारित है। हालांकि, महिलाओं के आर्थिक योगदान को अब पहचान मिल रही है, लेकिन इसमें सुधार की अभी भी बड़ी संभावनाएं हैं।

महिलाओं के रोजगार और आजीविका के प्रमुख पहलू :

1. *पारंपरिक रोजगार क्षेत्र :*

- *कृषि और पशुपालन :*

– अधिकांश ग्रामीण महिलाएं खेती और पशुपालन जैसे कार्यों में संलग्न हैं।
– महिलाएं खेतों में काम करती हैं, लेकिन भूमि का स्वामित्व पुरुषों के पास होता है।
– दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, और बकरी पालन जैसी गतिविधियों में भी महिलाओं की भागीदारी है।

- *खनन कार्य :*

– कोडरमा जिले में अभ्रक (माइका) खनन का क्षेत्र प्रमुख है।

– पहले के समय में महिलाएं खनन और माइका प्रोसेसिंग के काम में लगी रहती थीं, लेकिन अब इन कार्यों में गिरावट आई है।

– खनन कार्य के खतरनाक और असुरक्षित परिस्थितियों के कारण महिलाओं को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

2. **स्वरोजगार और कुटीर उद्योग :**

- महिलाएं छोटे स्तर पर हस्तशिल्प, सिलाई–कढ़ाई, और बुनाई जैसे कार्य करती हैं।
- कोडरमा में कुटीर उद्योग का विकास धीमा है, लेकिन सरकार और गैर–सरकारी संगठन इस क्षेत्र में महिलाओं को संगठित कर रहे हैं।
- तसर रेशम उत्पादन और हस्तशिल्प जैसे कार्यों में महिलाओं को शामिल करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

3. **स्वयं सहायता समूह** (SHG) **:**

- स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलाएं छोटे व्यवसाय, जैसे कि पापड़ बनाना, अचार बनाना, और सब्जियों की खेती में सक्रिय हो रही हैं।
- SHG के माध्यम से उन्हें लघु ऋण और वित्तीय सहायता मिलती है, जिससे उनका आत्मनिर्भरता बढ़ रही है।
- इन समूहों ने महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण का साधन दिया है।

4. **मजदूरी आधारित कार्य :**

- महिलाएं निर्माण स्थलों, ईंट भट्टों और अन्य दिहाड़ी मजदूरी के कार्यों में भी संलग्न हैं।
- इन कार्यों में मजदूरी पुरुषों की तुलना में कम मिलती है, जो लैंगिक असमानता को दर्शाता है।

5. **कौशल विकास और रोजगार के अवसर :**

- सरकारी प्रशिक्षण केंद्र और कौशल विकास कार्यक्रम महिलाओं को रोजगार के नए अवसर प्रदान कर रहे हैं।
- कंप्यूटर साक्षरता, ब्यूटी पार्लर, सिलाई–कढ़ाई, और अन्य कौशल आधारित प्रशिक्षण देकर महिलाओं को स्वरोजगार के लिए तैयार किया जा रहा है।
- आदिवासी और ग्रामीण महिलाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

6. **चुनौतियां :**

- **लैंगिक असमानता :** पुरुषों की तुलना में महिलाओं को कम अवसर और कम मजदूरी मिलती है।
- **सामाजिक बाधाएं :** पारंपरिक समाज में महिलाओं को काम करने के लिए स्वतंत्रता नहीं दी जाती।
- **शिक्षा और कौशल की कमी :** महिलाएं सीमित शिक्षा और कौशल के कारण रोजगार के बेहतर अवसर नहीं पा पातीं।
- **संसाधनों की कमी :** स्वरोजगार के लिए जरूरी संसाधन, जैसे पूंजी और बाजार तक पहुंच, सीमित है।

7. **सरकारी और गैर-सरकारी प्रयास :**

- **महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना** (**MGNREGA**) : इस योजना के तहत महिलाएं

ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी आधारित काम कर रही हैं।

- **महिला सशक्तिकरण मिशन :** स्वरोजगार और लघु उद्योगों के लिए महिलाओं को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।
- **झारखंड कौशल विकास मिशन :** महिलाओं को विभिन्न रोजगार क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

स्वास्थ्य स्थिति :

कोडरमा जिला, जो झारखंड के खनिज–समृद्ध क्षेत्रों में गिना जाता है, यहां की महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक चुनौतियों से प्रभावित है। स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच, पोषण की कमी, और जागरूकता के अभाव के कारण महिलाओं को कई स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति के प्रमुख पहलू :

1. **मातृ स्वास्थ्य** (Maternal Health)

- **गर्भावस्था और प्रसव देखभाल :**

– गर्भवती महिलाओं के लिए एंटी–नेटल चेकअप (ANC) और संस्थागत प्रसव की दर कम है।
– ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में कई महिलाएं प्रसव के लिए पारंपरिक दाइयों पर निर्भर हैं।
– प्रसव के दौरान उचित सुविधाओं के अभाव में मातृ मृत्यु दर (MMR) अधिक है।

- **पोस्ट-नेटल केयर :**

– प्रसव के बाद महिलाओं को आवश्यक देखभाल और पोषण नहीं मिल पाता।
– शिशुओं और माताओं के लिए कुपोषण की समस्या गंभीर है।

2. **पोषण संबंधी समस्याएं :**

- **कुपोषण और एनीमिया :**

– महिलाओं में आयरन और पोषण की कमी के कारण एनीमिया व्यापक है।
– गर्भवती महिलाओं और किशोरियों में कुपोषण के उच्च स्तर दर्ज किए गए हैं।
– समुचित आहार और पोषण के प्रति जागरूकता का अभाव है।

3. **प्रजनन और यौन स्वास्थ्य :**

– प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता सीमित है।
– परिवार नियोजन के साधनों का उपयोग कम है, और इससे अवांछित गर्भधारण और स्वास्थ्य समस्याएं होती हैं।
– ग्रामीण क्षेत्रों में यौन स्वास्थ्य और स्वच्छता को लेकर महिलाओं में जागरूकता की कमी है।

4. **स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुंच :**

- **स्वास्थ्य केंद्रों का अभाव :**

– प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (PHC) और सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (CHC) दूर–दराज के इलाकों में पहुंच से बाहर हैं।
– कई बार महिलाओं को उपचार के लिए लंबी दूरी तय करनी पड़ती है।

- ***डॉक्टरों और स्टाफ की कमी :***

– जिला और ब्लॉक स्तर पर महिला डॉक्टर और स्त्री रोग विशेषज्ञों की कमी है।

– स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार की आवश्यकता है।

5. ***स्वास्थ्य जागरूकता :***

- ***मासिक धर्म स्वच्छता* (Menstrual Hygiene) :**

– ग्रामीण महिलाओं में मासिक धर्म से जुड़े स्वच्छता उत्पादों का उपयोग सीमित है।

– इस विषय पर चर्चा को लेकर सामाजिक वर्जनाएं हैं।

- ***स्वच्छता और साफ-सफाई :***

– स्वच्छ पेयजल और शौचालय की कमी से महिलाओं को जलजनित बीमारियों का सामना करना पड़ता है।

– ग्रामीण क्षेत्रों में खुले में शौच का चलन अभी भी है।

6. ***सरकारी योजनाएं और पहल :***

- ***जननी सुरक्षा योजना* (JSY) :**

– इस योजना के तहत संस्थागत प्रसव को बढ़ावा दिया गया है।

– कई महिलाओं को इस योजना का लाभ मिला है, लेकिन जागरूकता और सुविधाओं की कमी के कारण इसका पूर्ण लाभ नहीं मिल पा रहा।

- ***मातृ वंदना योजना :***

– गर्भवती महिलाओं को पोषण और आर्थिक सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से चलाई जा रही है।

– इसकी पहुंच को ग्रामीण इलाकों तक बढ़ाने की आवश्यकता है।

- ***स्वच्छ भारत मिशन :***

महिलाओं के लिए शौचालय निर्माण की पहल ने उनकी स्वच्छता और स्वास्थ्य में सुधार किया है।

7. ***प्रमुख स्वास्थ्य चुनौतियां :***

- स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच की कमी।
- पोषण और स्वच्छता को लेकर जागरूकता का अभाव।
- आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक सोच और स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति उदासीनता।

***प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना* (PMKVY), 2015**

प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY) भारत सरकार द्वारा 2015 में शुरू की गई एक प्रमुख योजना है, जिसका उद्देश्य भारतीय युवाओं को गुणवत्ता युक्त कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें और देश के विकास में योगदान दे सकें। यह योजना विशेष रूप से उन महिलाओं और युवाओं के लिए बनाई गई है जो रोजगार की तलाश में हैं या अपनी आजीविका के लिए नए कौशल सीखना चाहते हैं। इस योजना के तहत सरकार विभिन्न कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाने का प्रयास करती है, जिससे वे आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त हो सकें।

मुख्य उद्देश्य :

1. **रोजगार योग्य कौशल प्रदान करना :**

योजना का मुख्य उद्देश्य युवाओं और महिलाओं को रोजगार योग्य कौशल प्रदान करना है, ताकि वे विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी प्राप्त कर सकें और आत्मनिर्भर हो सकें।

2. **महिला सशक्तिकरण :**

इस योजना के माध्यम से विशेष रूप से महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे उन्हें रोजगार के बेहतर अवसर मिलते हैं और वे आर्थिक रूप से सशक्त बनती हैं।

3. **रोजगार के अवसरों का सृजन :**

सरकार द्वारा यह योजना ऐसे उद्योगों और क्षेत्रों में कौशल प्रशिक्षण प्रदान करती है जहां रोजगार की आवश्यकता है, जिससे युवाओं को बेहतर करियर विकल्प मिलते हैं।

4. **हुनरमंद भारत :**

यह योजना 'हुनरमंद भारत' बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है, ताकि भारतीय श्रमिक वैश्विक प्रतिस्पर्धा में सक्षम हो सकें।

महिला स्वरोजगार और रोजगार योजनाएँ :

21वीं सदी में महिला सशक्तिकरण हेतु भारत सरकार ने कई योजनाएँ और कार्यक्रम शुरू किए हैं जो महिलाओं को स्वरोजगार और रोजगार के अवसर प्रदान करती हैं। इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र और सशक्त बनाना है, ताकि वे समाज में अपनी भूमिका को सशक्त रूप से निभा सकें। महिला स्वरोजगार और रोजगार योजनाएँ महिलाओं को विभिन्न उद्योगों में काम करने के अवसर प्रदान करती हैं और उन्हें अपना व्यवसाय शुरू करने के लिए आवश्यक सहायता और प्रशिक्षण देती हैं।

मुख्य योजनाएँ और कार्यक्रम :

प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (PMMY) **:**

लॉन्च : 2015

उद्देश्य : यह योजना छोटे व्यवसायों और स्वरोजगार के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए शुरू की गई थी, ताकि महिलाएँ छोटे व्यापारों को शुरू कर सकें।

लाभ : महिलाओं को 10 लाख रुपये तक का ऋण बिना किसी गारंटी के प्राप्त हो सकता है। इस योजना के तहत कई महिलाएँ खुद का व्यवसाय शुरू कर चुकी हैं, जैसे ब्यूटी पार्लर, टेलरिंग, कुकिंग आदि।

समर्थन : इस योजना के तहत महिलाओं को आर्थिक सहायता और प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है, ताकि वे छोटे या मध्यम आकार के व्यवसाय स्थापित कर सकें।

महिला उद्यमिता मंच (WEC) :

लॉन्च : 2017

उद्देश्य : इस मंच का उद्देश्य महिला उद्यमियों को अपनी कंपनियाँ शुरू करने और उन्हें बढ़ाने के लिए समर्थन प्रदान करना है। यह मंच महिलाओं को वित्तीय सहायता, नेटवर्किंग, और अन्य व्यावासिक समर्थन प्रदान करती है।

लाभ : महिला उद्यमियों को नए विचारों को व्यापार में बदलने के लिए मार्गदर्शन, शिक्षा, और निवेश का समर्थन मिलता है।

दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना (DDU-GKY) **:**

लॉन्च : 2014

उद्देश्य : इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है, ताकि वे स्वरोजगार के लिए तैयार हो सकें और आत्मनिर्भर बन सकें।

लाभ : इसमें महिलाओं को प्रशिक्षण के बाद रोजगार या स्वरोजगार के अवसर दिए जाते हैं। यह योजना विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं को रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए तैयार की गई है।

राजीव गांधी महिला विकास योजना (RGMVP) **:**

लॉन्च : 2001

उद्देश्य : यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए है। यह महिलाओं को लघु उद्योगों, कृषि, और सेवाओं के क्षेत्र में कौशल प्रशिक्षण प्रदान करती है।

लाभ : इस योजना के तहत महिलाएँ विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण प्राप्त करती हैं, जैसे सिलाई, बुनाई, आरा मिलिंग आदि, और अपने व्यवसाय को स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त करती हैं।

स्टार्टअप इंडिया योजना :

लॉन्च : 2016

उद्देश्य : यह योजना नवप्रवर्तक और महिला उद्यमियों को अपने स्टार्टअप शुरू करने के लिए प्रोत्साहित करती है। इस योजना में महिलाएँ नई तकनीकों और विचारों को लेकर अपने व्यवसाय की शुरुआत कर सकती हैं।

लाभ : इसमें महिलाओं को धन जुटाने, सरकारी सहायता प्राप्त करने, और उद्योगों में अपनी पहचान बनाने के लिए संसाधन और प्रशिक्षण उपलब्ध कराए जाते हैं।

राष्ट्रीय महिला विकास निगम (NWDC) **:**

लॉन्च : 1989

उद्देश्य : राष्ट्रीय महिला विकास निगम का उद्देश्य महिला उद्यमिता को बढ़ावा देना है, और यह महिलाओं को छोटे उद्योग स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता, मार्गदर्शन और प्रशिक्षण प्रदान करती है।

लाभ : महिलाओं को रोजगार सृजन के लिए ऋण उपलब्ध कराए जाते हैं, ताकि वे छोटे व्यवसाय स्थापित कर सकें और आत्मनिर्भर बन सकें।

बेहतर जीवन के लिए महिला सशक्तिकरण योजना (BJP) **:**

उद्देश्य : इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को उनके व्यक्तिगत और व्यावासिक जीवन में सुधार करने के लिए मार्गदर्शन और कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है।

लाभ : इसमें महिलाएँ विभिन्न कौशल क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्राप्त कर सकती हैं, जैसे कि सिलाई, ब्यूटीशियन, और किचन सर्विसेज, जिससे वे आत्मनिर्भर हो सकती हैं।

खुशहाल महिला योजना (Swasthya Seva) :

उद्देश्य : महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में स्वरोजगार के अवसर प्रदान करना और उन्हें स्वास्थ सेवाओं के लिए प्रशिक्षित करना।

लाभ : महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं जैसे दवाइयाँ, चिकित्सा सेवाएँ और स्वास्थ्य संबंधित उत्पादों के व्यवसाय को शुरू करने के लिए अवसर प्राप्त होते हैं।

महिला सशक्तिकरण के लाभ :

आर्थिक स्वतंत्रता :

इन योजनाओं के तहत महिलाओं को स्वरोजगार के अवसर मिलते हैं, जिससे वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो जाती हैं। यह उनके आत्मविश्वास को भी बढ़ाता है।

सामाजिक मान्यता :

जब महिलाएँ अपना व्यवसाय शुरू करती हैं, तो वे समाज में अपनी स्थिति को मजबूती से स्थापित करती हैं, जिससे समाज में उनका सम्मान बढ़ता है।

शिक्षा और कौशल का विकास :

सरकार द्वारा प्रदान की गई विभिन्न योजनाओं के माध्यम से महिलाएँ कौशल प्रशिक्षण प्राप्त करती हैं, जो उन्हें रोजगार या स्वरोजगार के अवसर प्रदान करती है।

स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता :

जब महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होती हैं, तो उन्हें अपने जीवन और परिवार के मामलों में स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता मिलती है।

चुनौतियाँ :

संसाधनों की कमी :

कई महिलाओं के पास वित्तीय संसाधन नहीं होते हैं, जिससे वे स्वरोजगार योजनाओं का पूरा लाभ नहीं उठा पातीं। सरकार द्वारा अधिक वित्तीय सहायता और आसान ऋण प्रदान किया जा सकता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएँ :

विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में महिलाएँ अपने परिवार की परंपराओं और सामाजिक संरचनाओं के कारण स्वरोजगार में शामिल नहीं हो पातीं। उन्हें सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

प्रशिक्षण और शिक्षा की कमी :

कुछ क्षेत्रों में महिला कौशल प्रशिक्षण की गुणवत्ता में कमी हो सकती है, और इन प्रशिक्षणों को समय पर पूरा करना भी चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

जन धन योजना (Pradhan Mantri Jan Dhan Y jana & PMJDY), 2014 :

जन धन योजना भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा 2014 में शुरू की गई एक प्रमुख वित्तीय समावेशन योजना है, जिसका उद्देश्य हर भारतीय नागरिक, खासकर महिलाओं को बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच प्रदान करना है। इस योजना के तहत गरीब और वंचित वर्ग को बिना किसी शुल्क के बैंकिंग सुविधाएं दी जाती हैं, जिससे उन्हें वित्तीय सेवाओं का लाभ मिल सके। इस योजना का एक बड़ा उद्देश्य महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण

को बढ़ावा देना और उन्हें वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर बनाना है।

ग्रंथ सूची :

1. ज्योति बहल : "ग्रामीण भारत में महिला उद्यमिता की स्थिति," एशियाई जर्नल ऑफ मल्टीडायमेंशनल रिसर्च वॉल्यूम 1 अंक 2, 2012, पृष्ठ 46
2. कल्पना एलीन : "महिला उद्यमीरू उद्यम की सफलता और विफलता की जांच करने के लिए एक रूपरेखा का निर्माण," फ्रंटियर्स ऑफ एंटरप्रेन्योरशिप रिसर्च, मैसाचुसेट्स, यूएसए, 2018, पृष्ठ 54–58
3. कपाड़िया, एस. और बरोदिया, एस : "महिला उद्यमीरू समस्याएँ और कठिनाइयाँ," महिला उद्यमिता पर राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्र – गृह विज्ञान विस्तार और संचार विकास, गृह विज्ञान संकाय, एम. एस. विश्वविद्यालय, वडोदरा द्वारा आयोजित प्रशिक्षण और पाठ्यक्रम विकास की आवश्यकता, 2014, पृष्ठ 10
4. क्लेन : काम पर लौटना : 'काम पर लौटना : महिलाओं के लिए चुनौतियां, काम की दुनिया,' इंडियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, वॉल्यूम नंबर 12, 2015, 136–148
5. कृष्णावेनी मोथा : 'भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला उद्यमिता,' लघु उद्यम विकास, प्रबंधन, विस्तार जर्नल, वॉल्यूम नंबर 31, नंबर 3, सितंबर, 2014, पृष्ठ 8–32
6. कुराटको, डी. एफ और हॉजेट्स, आर. एम : 'उद्यमिता : एक समकालीन दृष्टिकोण,' ड्राइडन प्रेस प्रकाशन, 2015, पृष्ठ 165–182
7. लाल, मधुरिमा और सहाय शिखा (2008)। पारिवारिक व्यवसाय में महिलाएँ। पहले एशियाई आमंत्रण सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया।
8. लुइटेल और समीरा : "सशक्तीकरण : नेपाल में मैथिलिक महिलाओं के लिए साक्षर होने का क्या मतलब है," (कनाडा) शोध प्रबंध सारांश, 2016, पृष्ठ 210–211। मैक डोनाल्ड, जे.एल : "महिला उद्यमियों के लक्षण और विशेषताएं : व्यवसाय प्रबंधन में सफलता की भविष्यवाणी करने के लिए मानदंड," शोध प्रबंध सारांश अंतर्राष्ट्रीय (भाग–ए), 46(8), 2169–ए, 2016 पृष्ठ 32। मनोरमा वैद : "महिला उद्यमी – एक महत्वपूर्ण मानव संसाधन," (नई दिल्ली : स्टर्लिंग), 2011, पृष्ठ 62–64। मसूद तारिक और अहमद, आई.एम. (2009)। भारत में महिलाओं की श्रम शक्ति भागीदारी में अंतर–राज्यीय भिन्नता का एक अर्थमितीय विश्लेषण। मट्टू, एरू "महिला उद्यमिता – विकास की कुंजी," शोध पत्र।
9. महिला उद्यमिता पर राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत – प्रशिक्षण की आवश्यकता और पाठ्यचर्या विकास, गृह विज्ञान विस्तार और संचार संकाय, एम.एस. विश्वविद्यालय, फरवरी 2014, पृष्ठ 256 द्वारा आयोजित।
10. मैकक्लेलैंड, ई. स्वेल, जे. बेल, जे. और इबोट्सन, पीरू "महिला उद्यमियों के मार्ग का अनुसरण : एक छह–देशीय जांच," अंतर्राष्ट्रीय जर्नल ऑफ उद्यमी व्यवहार और अनुसंधान, 2015, पृष्ठ 84–107
11. मेहता और कलारा, एस : "महिलाओं के स्वास्थ्य के संबंध में व्यवहार के प्रकार," भारतीय विज्ञान कांग्रेस, अहमदाबाद, 2015 में प्रस्तुत शोध पत्र, पृष्ठ 82
12. मुनिराजू, और जयाश्क्ला. (2014)। भारतीय कृषि क्षेत्र में ग्रामीण महिला उद्यमी, इंडियन स्ट्रीम्स रिसर्च

जर्नल, 4(6), 1–4.

13. नफजीगर, ई. डब्ल्यू : 'समाज और उद्यमी,' जर्नल ऑफ डेवलपमेंट प्लानिंग खंड 18 उद्यमिता और आर्थिक विकास पर विशेष अंक, 2018, पृष्ठ 127–152
14. नागेंद्र कुमार झा : 'महिला उद्यमिता का विकास – चुनौतियाँ और अवसर – बिहार का एक केस स्टडी,' प्रबंधन पर नौवां एआईएमएस अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन, 2012. पृष्ठ 90–96
15. नेगाश अल्माज (2016 दिसंबर)। महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण। नेल्सन : "जमैका में महिलाओं के लिए लघु व्यवसाय के अवसर," द इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एंटरप्रेन्योरशिप एंड स्मॉल बिजनेस (IJESB), 1(3/4), 2011, पृ. 230– 238. ISSN1476– 1298
16. गृह विज्ञान विस्तार और संचार विकास द्वारा आयोजित पाठ्यक्रम विकास, गृह विज्ञान संकाय, एम.एस. विश्वविद्यालय, वडोदरा, 2014, पृ. 211–222
17. फिलिप्स, एम., मूस, एम., और नीमन, जी. (2014). त्शवाने दक्षिण अफ्रीका में महिला व्यवसायों के विकास पर सरकारी सहायता पहलों का प्रभाव. मेडिटेरेनियन जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज, 5(15), 85
18. पोरस. पी और मुंशी : "दीवार से परे," प्रैक्सिस, बिजनेस लाइन – क्वार्टरली जर्नल ऑन मैनेजमेंट वॉल्यूम. 2 अंक 4 नवंबर 2009, पृ. 14–15
19. रहवालु, एम.वी : "पिछड़े क्षेत्रों में महिला उद्यमिता," लघु उद्यम विकास, प्रबंधन, विस्तार जर्नल, खंड 4 (2), 2012, 44–58
20. राजेंद्रन, एन : "महिला उद्यमियों की समस्याएं और संभावनाएं," लघु उद्यम विकास, प्रबंधन, विस्तार जर्नल, खंड 30(4), 2013, पृष्ठ 255
21. रानी, सी : "संभावित महिला उद्यमी – एक अध्ययन," लघु उद्यम विकास, प्रबंधन, विस्तार जर्नल, 13(3), 2016, पृष्ठ 13–32
22. राठौर और छाबड़ा राम : "महिला उद्यमिता की समस्या – प्रशिक्षण रणनीतियाँ," लघु उद्यम विकास, प्रबंधन, विस्तार जर्नल, खंड 18, संख्या 1, मार्च 2011, पृष्ठ 181–182
23. राठौर, सैनी और गज्जर : "आधुनिकीकरण अर्थव्यवस्था में उद्यमशीलता के अवसर," अभिषेक प्रकाशन, चंडीगढ़, 2012, पृ. 32
24. रूडकर, पी : "अमरावती मलिन बस्तियों के किशोरों में उद्यमशीलता कौशल का परिचय," वैश्वीकरण पर xxvi द्विवार्षिक सम्मेलन में प्रस्तुत शोध पत्र – परिवार और समुदाय का प्रभाव, होम साइंस एसोसिएशन ऑफ इंडिया द्वारा आयोजित, पुणे, 2015, पृ. 166–182

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037